ISSN 2321-4945

PEER REVIEWED

UGC CARE listed Research Journal

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 14 ● अंक : 12 ● मार्च : 2022

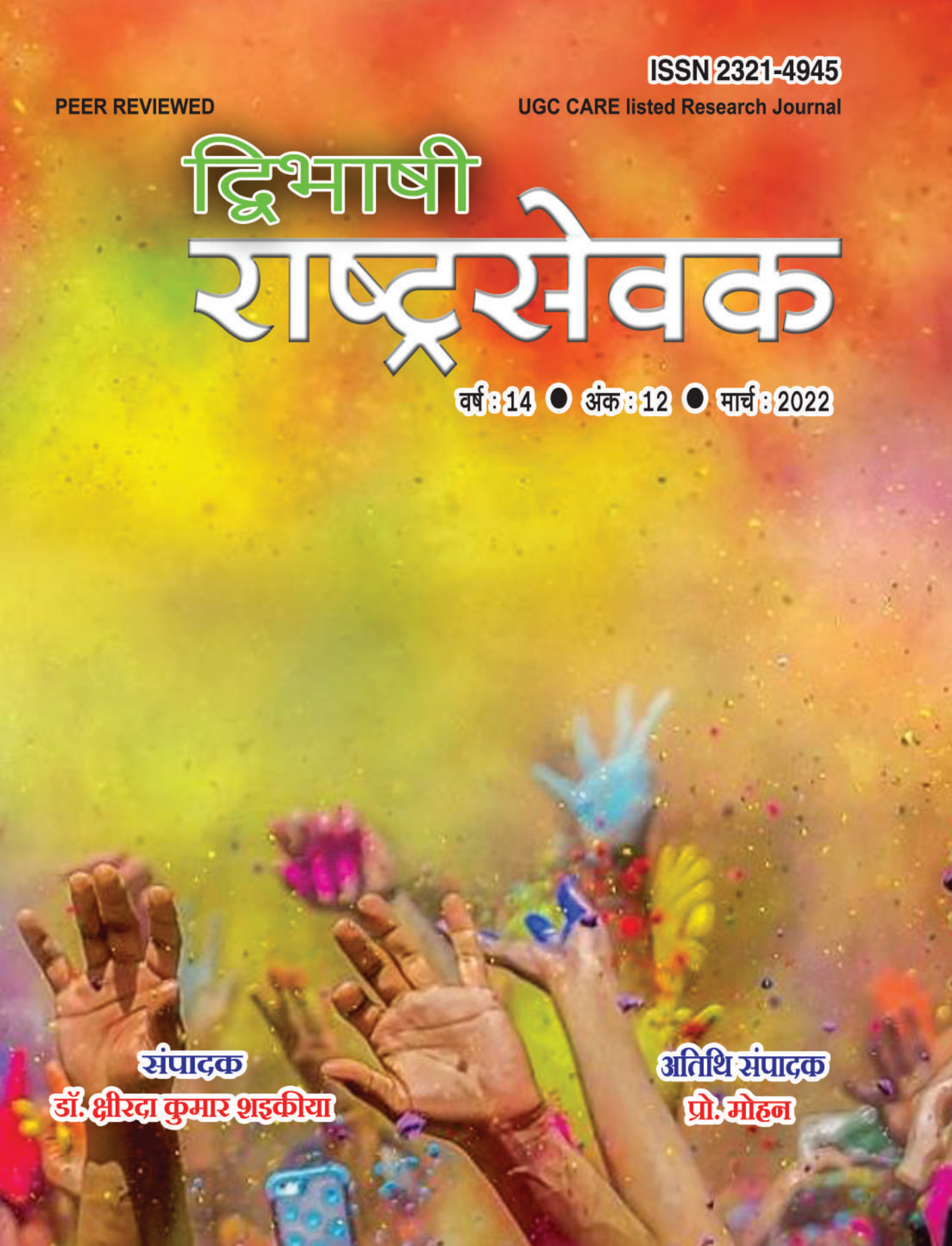

संपादक
डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया

अतिथि संपादक
प्रो. मोहन

एक हृदय हो भारत जननी

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुवाहाटी

[केंद्रीय हिंदी निदेशालय, भारत सरकार के आंशिक आर्थिक सहयोग से प्रकाशित]

सलाहकार

प्रो. आर.एस. सर्राजु
प्रो. दिलीप कुमार मेधि
डॉ. नारायण तालुकदार
डॉ. अच्युत शर्मा

संपादक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
(चलभाष : 9435340285)

अतिथि संपादक

प्रो. मोहन
(दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली)
(चलभाष : 9871115500)

कार्यकारी संपादक

रामनाथ प्रसाद
(चलभाष : 9101541395)

शब्द संयोजन व अलंकरण

रतिकांत कलिता

एक प्रति	: बीस रुपये
अर्द्धवार्षिक	: सौ रुपये
वार्षिक शुल्क	: दो सौ रुपये

प्रकाशक

डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया
मंत्री, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति
गुवाहाटी-781032

'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण लेखक के हैं। संपादक या प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

लेखादि भेजने का पता :

संपादक, द्विभाषी राष्ट्रसेवक
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति,
रूपनगर, गुवाहाटी-781032
E-mail: rastrasewak51@gmail.com

Postal Rgd. No. GH-127/2022-2024 **ISSN 2321-4945**
PEER REVIEWED UGC CARE listed Research Journal

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति द्वारा प्रकाशित
भाषा, साहित्य, कला व संस्कृति विषयक शोध-पत्रिका

द्विभाषी राष्ट्रसेवक

वर्ष : 14 **अंक : 12** **मार्च, 2022**

विषय-सूची

: हिंदी विभाग :

- संपादकीय — 2
- हृदयोपासना : औपनिषदिक चिंतन — ✍ डॉ. हेमलता जोशी — 3
- हिंदी पत्रों का इतिहास (प्रारंभ से 1898 ई. तक) — ✍ डॉ. आशा यादव — 13
- 'ब्रह्मपुत्र' आंचलिक उपन्यास के रूप में : एक अध्ययन — ✍ डॉ. सत्यजित कलिता — 25
- हिंदी के 'परती परिकथा' और असमीया के 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में चित्रित ग्राम्य जीवन का तुलनात्मक अनुशीलन — ✍ डॉ. दिनेश साहू — 30
- रामचरितमानस में चरित्र निर्मिति — ✍ डॉ. अमित कुमार शर्मा — 38
- समकालीन कवि भगवत रावत के काव्य-चरित्र — ✍ शंकर शर्मा — 42
- असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि — ✍ स्मिता रजक — 48
- किन्नर समुदाय एवं धार्मिक संघर्ष : एक विवेचनात्मक अध्ययन — ✍ प्रियंका कलिता — 52
- स्वशक्ति उद्घोष/फर्ज निभाना है बाकी (कविता) — ✍ अतुल/प्रमोद तिवाड़ी — 56
- संवदिया (कहानी) — ✍ फणीश्वरनाथ रेणु — 57

অসমীয়া বিভাগ

- কোচ ৰাজবংশী জনগোষ্ঠীৰ লোকদেৱতা 'মাশান ঠাকুৰ' - এক অধ্যয়ণ — ✍ গোবিন্দ বৈশ্য — ৬৩
- লিংগ অধ্যয়নৰ আলোকত মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' — ✍ বিকাশ দাস — ৭০
- নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন — ✍ হিৰণ্য কুমাৰ বৰা — ৭৫
- আজিৰ সময় (কবিতা) — ✍ দীপামণি মহন্ত — ৮২

लेखक/लेखिकाओं से अनुरोध : • 'द्विभाषी राष्ट्रसेवक' के लिए भेजे जाने वाले लेखादि साहित्य, कला, संस्कृति विषयक होने चाहिए। • भेजे गये लेखादि साफ अक्षरों में या टाइप कराकर ही भेजें। • अनूदित लेखों के लिए मूल लेख का उल्लेख करना अनिवार्य है। • सभी कानूनी विवादों का निपटारा गुवाहाटी न्यायालय के अधीनस्थ होगा।

संपादकीय

संस्कृति और संस्कारों की पहचान है - हिंदी

विश्व की प्राचीन और सरल भाषाओं की सूची में हिंदी को अग्रिम स्थान मिला है। हिंदी भारत की मूल है। यह भाषा हमारी संस्कृति और संस्कारों की पहचान है। हिंदी भाषा हमें अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मान और गौरव प्रदान करवाती है। एक शोध के अनुसार विश्व की सबसे ज्यादा बोली जाने वाली भाषा में हिंदी का स्थान दूसरा आता है।

हिंदी भाषा का जन्म लगभग एक हजार वर्ष पहले हुआ था। ऐसा माना जाता है कि हिंदी का जन्म देवभाषा संस्कृत की कोख से हुआ है। संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश, अवहट्ट–यह हिंदी भाषा का विकास क्रम है। हिंदी एक भावात्मक भाषा है, जो लोगों के दिल को आसानी से छू लेती है। हिंदी भाषा देश की एकता का सूत्र है।

पूरे विश्व में भारतीय संस्कृति का प्रचार करने का श्रेय एकमात्र हिंदी भाषा को जाता है। भाषा की जननी और साहित्य की गरिमा हिंदी भाषा जन–आंदोलनों की भी भाषा रही है। आज भारत में पश्चिमी संस्कृति को अपनाया जा रहा है, जिसके चलते अंग्रेजी भाषा का सभी क्षेत्रों में चलन बढ़ गया है। फिर भी दुनिया में हिंदी की बढ़ती लोकप्रियता को देखकर यह कहना गलत नहीं होगा कि हिंदी भविष्य की भाषा है। एक भारतीय होने के नाते यह हमारा कर्तव्य है कि हमें भी हिंदी के महत्व को बढ़ावा देना चाहिए।

हिंदी सिर्फ एक भाषा का काम ही नहीं करती है। यह सभी लोगों को एक–दूसरे को आपस में जोड़े रखने का काम भी करती है। हिंदी सिर्फ भारत में ही नहीं, बल्कि पूरे विश्व में बोली जाने वाली भाषा है। इसका अध्ययन विदेशों में भी होता है और विश्व के कोने–कोने से लोग भारत सिर्फ हिंदी सीखने के लिए आते हैं। ऐसा माना जाता है कि संस्कृत भाषा का सरलतम रूप हिंदी भाषा ही है। हिंदी भाषा में संस्कृत के काफी शब्दों का समावेश देखने को मिल जाएगा।

इस भाषा की आदि जननी संस्कृत है। संस्कृत पाली, प्राकृतिक भाषा से होती हुई और अपभ्रंश तक पहुंचती है। फिर अपभ्रंश से गुजरती हुई प्राचीन/प्रारंभिक हिंदी का रूप लेती है। सामान्यता हिंदी भाषा के इतिहास का आरंभ अपभ्रंश से माना जाता है। भारत एक ग्रामीण देश है और इसकी अधिकतर जनसंख्या ग्रामीण इलाकों से ताल्लुक रखती है। भारत में सभी अंग्रेजी नहीं जानते। इसलिए भारत में आपको किसी से भी बात करनी हो या फिर संवाद करना हो तो आपको पहले हिंदी का ज्ञान होना ही चाहिए। यह एक ऐसी भाषा है, जिसकी मदद से हम अपनी भावनाओं को बहुत ही सरल तरीके से व्यक्त कर सकते हैं।

इंटरनेट एक ऐसी जगह है, जहां पर हम हर जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पिछले कुछ वर्षों में भारत और विश्व में इंटरनेट जिस रफ्तार से विकसित हुआ है, वो सही में बहुत तारीफ के काबिल है। हिंदी भाषा भी अब इंटरनेट पर तेजी से अपना कब्जा जमा रही है। आज के समय में हिंदी भाषा हर समाचार पत्र से लेकर हिंदी ब्लॉग तक अपनी पहचान हासिल कर रही है। गूगल और विकिपीडिया जैसी बड़ी वेबसाइट हिंदी को हर व्यक्ति तक पहुँचाने में अपनी हर संभव कोशिश कर रही है। इन्होंने हिंदी भाषा के महत्व को समझते हुए इंटरनेट पर ट्रांसलेटर, सर्च, सॉफ्टवेयर आदि को विकसित किया, जिससे लोगों के लिए हिंदी को जानना और भी आसान हो गया है। ❑

हृदयोपासना : औपनिषदिक चिंतन

✍ डॉ. हेमलता जोशी

भारतीय परंपरा आस्थावादी परंपरा है। यह आस्था है आत्मा में, यह आस्था है परमात्मा में। यह आस्था नितांत वैयक्तिक है, भावात्मक है। पर इसकी परिणति सत्कर्मों के रूप में, आदर्शों एवं मूल्यों के रूप में, शुद्ध आचार एवं व्यवहार के रूप में प्रकट होती है। भारतीय परंपरा में भौतिक जीवन के साथ-साथ आध्यात्मिक जीवन को, इहलोक के कल्याण के साथ-साथ परलोक के कल्याण की बात भी की जाती है। आत्मा-परमात्मा को केंद्र में रखकर यह परंपरा प्राचीनकाल से ही जिज्ञासु रही है। इसी का परिणाम है कि इस क्षेत्र में अनेक खोजें, अनेक रहस्योद्घाटन अनवरत चलते रहे हैं। सत्य की इस खोज में शरीर को प्रयोगशाला बनाकर चित्त की एकाग्रता द्वारा ध्यान-योग रूपी अनेक साधनों का अभ्यास, उपयोग होता रहा है। यह साधना नितांत अनुभवात्मक है। इस साधना का शरीर-मन पर पड़ने वाले, आचार-व्यवहार पर पड़ने वाले प्रभावों को वैज्ञानिक दृष्टि से भी सार्थक सिद्ध किया जा चुका है। अत: ध्यान-योग साधना भौतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से अपना विशेष महत्व रखती है। यों तो शरीर साधना की प्रयोगशाला है। इस शरीर में अनेक चक्र हैं, मर्म स्थान हैं, बिंदु हैं, चैतन्य केंद्र हैं, ऊर्जा केंद्र हैं, जहाँ से विशेष शक्तियों का, रहस्यों का उद्घाटन होता है। इन्हीं में से एक है हृदय। हृदय का भौतिक शरीर में तो अस्तित्व है ही, पर आध्यात्मिक दृष्टि से भी बहुत महत्व है। इसे आध्यात्मिक हृदय भी कहा जाता है। उपनिषदों में इसे आत्मा का, परमात्मा का निवास ही नहीं, अपितु स्वयं ब्रह्म भी माना गया है। इस दृष्टि से इसका मूल्य और भी अधिक है। अत: अंगुष्ठ मात्र इस हृदय क्षेत्र की उपासना को, इस पर ध्यान को विशेष महत्व दिया गया है। इस हृदय स्थित आत्म तत्व का, परमात्मा का साक्षात्कार करने के बाद कुछ जानना शेष नहीं रह जाता है। साक्षात्कार करने वाला अमर हो जाता है।

प्रस्तुत लेख में हृदयोपासना के विविध साधनों के औपनिषदिक चिंतन को उभारने का प्रयास किया गया है, जो सुधी पाठकों के लिए उपयोगी हो सकेगा, ऐसा विश्वास है।

कुंजी शब्द : हृदय, ब्रह्म, हृदयोपासना, हृदय ग्रंथि, ऊँकार जप, ध्यान साधना, अमृतत्व।

यों तो पूरा शरीर चैतन्यमय है, पर हृदय को विशेष स्थान प्राप्त है, जो ध्यान-साधना के संदर्भ में अपना विशेष महत्व रखता है। भौतिक जगत में यह कोशिकाओं द्वारा निर्मित दो सौ से ढाई सौ ग्राम वजन का होता है, जो पूरे शरीर में रक्त प्रवाहित करता है। आध्यात्मिक दृष्टि से यह आत्मा का, परमात्मा या ब्रह्म का स्थान है। इसलिए यह और भी अधिक महत्व रखता है। इसे हृदय चक्र या अनाहत चक्र भी कहा जाता है। इसे भावना का केंद्र भी माना जाता है। शरीर में इसकी स्थिति भिन्न-भिन्न बताई गई है। कोई इसे छाती के मध्य में, कोई छाती के दाईं ओर तथा कोई छाती के बाईं ओर मानता

है। इससे यह ज्ञात होता है कि हृदय की स्थिति छाती के आसपास ही है। इसे जानने की अनेक विधियाँ-प्रविधियाँ हैं। यदि इनका अभ्यास किया जाए तो अनेक रहस्यों का उदघाटन किया जा सकता है, जिसका भौतिक और आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत महत्व है।

1.0 हृदय का स्वरूप :

हृदय को कई नामों से जाना जाता है जैसे हृदयम्, हृद्, हृत्, हृदय आदि। इस हृदय के अनेक अर्थ बताए हैं, पर सबका सार लगभग एक ही है। विभिन्न शब्दकोशों के अनुसार हृदयम् का अर्थ है-अनुराग, रहस्य विज्ञान[1], सारांश, तत्व, प्राणधार[2], मन, चित्त[3], अंत:करण[4] वक्ष के भीतर बाईं ओर स्थित माँस का रक्तकोश, आत्मा, भीतरी रहस्य[5], प्रेम और भावनाओं का केंद्र है।[6] बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा है कि जो हृदय है, यह ब्रह्म है, सर्व है। यह तीन अक्षर वाला है-ह्र जो ऐसा जानता है, उसके प्रति अन्य समर्पण करते हैं, द जो ऐसा जानता है, उसे स्वजन और अन्य जन देते हैं, यम् जो ऐसा जानता है, वह स्वर्गलोक को जानता है।[7] उपर्युक्त अर्थों के आधार पर यह सिद्ध होता है कि वास्तव में हृदय भावों का केंद्र ही नहीं अपितु आत्मा, चित्त, मन, अंत:करण, रहस्य विज्ञान, प्राणधारा, तत्व, सार आदि का प्रतीक है। इतना ही नहीं, यह स्वयं ब्रह्म है।

विभिन्न उपनिषदों में हृदय के स्वरूप को अनेक प्रकार से व्याख्यायित किया गया है। वृहदारण्यकोपनिषद् में कहा है कि यह हृदय है, यह प्रजापति है। यह ब्रह्म है, सर्व है।[8] हृदय आयतन है, हृदय स्थितता है। समस्त भूतों की प्रतिष्ठा है, इसी में समस्त भूत प्रतिष्ठित होते हैं। हृदय ही परम ब्रह्म है। जो इसकी ऐसे उपासना करता है, उसका हृदय त्याग नहीं करता। सब भूत उसे उपहार समर्पण करते हैं। वह देव होकर देवों को प्राप्ता करता है।[9] ऐतरेय उपनिषद् में कहा है कि जो यह हृदय है, वही मन है। सम्यक् ज्ञान शक्ति, आज्ञा देने की शक्ति, विभिन्न रूप से जानने की शक्ति, तत्काल जानने की शक्ति, धारण करने की शक्ति, देखने की शक्ति, धैर्य, बुद्धि, मनन शक्ति, संकल्प, मनोरथ, प्राण शक्ति आदि उस परमात्मा की सत्ता के नाम के बोधक लक्षण हैं।[10] प्राणाग्निहोत्रोपनिषद् में कहा है कि प्राणियों के हृदय में

सर्वत्र व्याप्त होकर स्थित रहते हुए निरंतर भ्रमण करने वाले तुम ही यज्ञ, ब्रह्मा, विष्णु, वषट्कार, आपः, ज्योति, रस, अमृत ब्रह्म, भूः, भुवः, स्वः स्वरूप हो। तुम्हें मेरा नमन है।[11] बृहदारण्यक उपनिषद् में हृदय को परमात्मा का लोक कहा है। हृदय में रूप प्रतिष्ठित है, हृदय में ही श्रद्धा प्रतिष्ठित है, हृदय में ही वीर्य स्थित है, हृदय में ही सत्य प्रतिष्ठित है। हृदय किसमें प्रतिष्ठित है-इस संदर्भ में बताया गया है कि हृदय प्राण में प्रतिष्ठित है, प्राण अपान में, अपान व्यान में, व्यान उदान में और उदान समान में।[12]

भौतिक दृष्टि से हृदय का अपना आकार-प्रकार है पर आध्यात्मिक दृष्टि से वह निराकार है, अनुभवात्मक है। उपनिषदों में उसे ब्रह्म का स्थान माना है। इतना ही नहीं, अपितु उसे ब्रह्म का प्रतीक भी माना है। उपनिषदों में ब्रह्म का स्थान सर्वोपरि है। उसी का अंश प्राणीमात्र है। इसीलिए उपनिषद् के ऋषि का कहना है कि अहम् ब्रह्मास्मि-मैं ही ब्रह्म हूँ। वही ऋषि जब सामान्य प्राणियों के मध्य होते हैं तो उनका कहना होता है तत्वमसि-तुम भी वही हो। इससे स्पष्ट होता है कि उस ब्रह्म का विस्तार यह जगत है। मानव देह में उसका स्थान हृदय को माना गया है। महोपनिषद् में कहा है कि हमारे हृदय में वह आत्मतत्व महेश्वर के रूप में विद्यमान है।[13] सुबालोपनिषद् में कहा है कि हृदय से जगत उत्पन्न हुआ है।[14] इससे भी यही सिद्ध होता है कि यह हृदय ही ब्रह्म है और जगत इसका विस्तार है। दूसरी ओर कहा है कि हृदय में ब्रह्म निवास करता है। इसी संदर्भ में अथर्वाशिरोपनिषद् में कहा है कि बाल के अग्र भाग तुल्य सूक्ष्म रूप से हृदय में निवास करने वाले विश्व रूप, देव रूप समस्त उत्पन्न हुए लोगों को जानने वाले श्रेष्ठ परमात्मा को जो ज्ञानीजन अपने भीतर देखते हैं, वे कांति प्राप्त करते हैं।[15] आत्मबोधोपनिषद् में कहा है कि जो हृदय रूपी कमल है, वही ब्रह्मपुर है। वही अकेला वह क्षेत्र है, जो विद्युत अथवा दीपक के समान प्रकाशमान है।[16] हृदय कमल अथवा हृदयाकाश के संदर्भ में कहा है कि सूक्ष्म हृदय कमल कुमुद के समान श्वेत है, जो अनेक प्रकार के विकास को प्राप्त होता है। हृदयाकाश परम कोश है, जिसमें दिव्य आत्मतत्व निवास करता हैं।[17] मुंडकोपनिषद में कहा है कि इस शरीर में आत्मा और परमात्मा दोनों का अस्तित्व है। एक इस शरीर में कर्मों का भोग करता है तो दूसरा द्रष्टाभाव देखता है। जीवात्मा मोह में रहता है। परमात्मा का बोध हो जाने पर वह मुक्त हो जाता है।[18] अतः स्पष्ट होता है कि इस शरीर में आत्मा और परमात्मा दोनों का ही अपना-अपना महत्व है। आध्यात्मिक दृष्टि से हृदय का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। यहीं से आध्यात्मिक विकास की यात्रा प्रारंभ होती है और यहीं पर परम साध्य की प्राप्ति होती है। अतः निष्कर्षतः सिद्ध होता है कि वास्तव में हृदय अनेक विशेषताओं का केंद्र है, जो अनेक रूपों में व्यक्त होता है, अनेक क्रियाएँ इसके द्वारा संपादित होती हैं और साधक को वास्तविकता से, सत्य से परिचित कराने में अहम भूमिका अदा करता है। इसीलिए उपनिषदों में इसकी उपासना को महत्वपूर्ण माना है।

2.0 हृदयोपासना :

हृदयोपासना से तात्पर्य है हृदय के पास रहना, उस पर ध्यान केंद्रित करना, उस पर एकाग्र होना, उसकी पूजा करना आदि अर्थात हृदय को केंद्र में रखकर साधना करना। यह हृदय जो परम तत्व का स्थान है, उसकी प्राप्ति का स्थान है, उसे ध्यान साधना द्वारा जाना जा सके, उसका साक्षात्कार किया जा सके-इसीलिए उपनिषदों में किसी-न-किसी रूप में हृदयोपासना का वर्णन मिलता है। बृहदारण्यक उपनिषद् में कहा है कि हृदय का शरीर ही हृदय है और आकाश उसकी प्रतिष्ठा अर्थात आश्रय स्थल है। ऐसा मानकर हृदय की उपासना करनी चाहिए।[19] छान्दोग्योपनिषद् में कहा है कि यह शरीर ब्रह्मपुर है। इसके भीतर एक कमल पुष्प के समान क्षेत्र है। उसके भीतर एक सूक्ष्माकाश है। इसके भीतर जो निगूढ़ रहस्य है, तत्व है, उसका अन्वेषण करना चाहिए।[20] आकाश ही हृदय है और उसी में रहस्य है। उस रहस्य को जानने की बात कही है। कैवल्योपनिषद में कहा है कि योगीजन अपने हृदय कमल में रजोगुण से रहित विशुद्ध आत्मतत्व का विशद चिंतन करें।[21] इसी प्रकार मैत्रेयण्युपनिषद् में कहा है कि हृदय कमल के मध्य शुद्धि के समस्त कर्मों के साक्षी रूप एवं परम अनुपम प्रेम के विषयभूत परमेश्वर

का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।[22] इतना ही नहीं, संन्यासी को मोक्ष प्राप्ति हेतु बाह्य पूजा का त्याग कर हृदय में ही पूजा करनी चाहिए।[23] महोपनिषद् कहता है कि हमारे हृदय में आत्मतत्व परमेश्वर के रूप में विद्यमान है। इसको त्याग कर जो अन्य वस्तु की प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील हैं, वे अपने हाथों से कौस्तुभ मणि को छोड़कर अन्य वस्तु की अभिलाषा में हैं।[24] इससे स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में ब्रह्म की प्राप्ति हेतु हृदयोपासना पर विशेष बल दिया गया है। इसके लिए अनेक साधनों का विवरण मिलता है।

3.0 हृदयोपासना के साधन :

किसी भी साध्य की प्राप्ति के लिए साधन का होना आवश्यक है। वे साधन सरल भी हो सकते हैं और जटिल भी। यह निर्भर करता है साध्य पर। साध्य ऊँचा हो तो साधन भी उसी के अनुरूप होते हैं। हृदयोपासना जैसा गूढ़ विषय भी सरलता से नहीं सुलझाया जा सकता है। अत: हृदयोपासना के लिए भी एक नहीं, अपितु अनेक साधन उपनिषदों में निर्दिष्ट हैं। चूँकि हृदय ब्रह्म का स्थान भी है और उसका प्रतीक भी है, अत: चाहे हृदय की उपासना करें या उस ब्रह्म की उपासना करें- दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। दोनों का परिणाम भी लगभग समान ही है। इस हेतु उपनिषदों में निर्दिष्ट प्रमुख साधन निम्न हैं-

3.1 यम-नियमों का पालन :

हृदय को जानना, परमात्मा को प्राप्त करना, उसका अनुभव करना, उसका साक्षात्कार करना सहज नहीं, अपितु कठिन है। लेकिन आचार-विचार शुद्ध हो, आदर्शों-मूल्यों की महत्ता हो, सात्विक जीवन शैली हो, दृढ़ निष्ठा हो, यम-नियमों का पालन हो तो साधक अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। यम-नियमों के संदर्भ में मंडलब्राह्मणोपनिषद् में विस्तार से वर्णन किया गया है। सर्दी-गर्मी, आहार एवं निद्रा पर विजय प्राप्त करना, सर्वदा शांत और निश्चल होकर इंद्रियों पर नियंत्रण रखना यम है। गुरुभक्ति, सत्यमार्ग से अनुरक्ति, यथा लाभ, संतोष, एकांत निवास, अनासक्ति, मनोनिवृत्ति, फल की इच्छा न करना और वैराग्य भाव ही नियम हैं।[25]

भारतीय परंपरा का अंतिम लक्ष्य ब्रह्म प्राप्ति, मोक्ष प्राप्ति है, साधक उस चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। उपनिषदों का सार यही है ब्रह्म साक्षात्कार, अमृतत्व की प्राप्ति। इसीलिए हृदय में चित्त की स्थिरता एवं स्थितता द्वारा पूर्णता प्राप्त करने वाले प्रणम्य होते हैं। निष्कर्षत: यह सिद्ध होता है कि हृदयोपासना अपने आप में बहुत ही महत्त्वपूर्ण है, जिसका परिणाम चरम एवं परम लक्ष्य की प्राप्ति है। यही जीवन की वास्तविक प्राप्ति है, वास्तविक पूर्णता है।

अत: इनका समुचित पालन करना हृदयोपासना में उपयोगी हो सकेगा। मुंडकोपनिषद् में कहा गया है कि सबके शरीर के भीतर हृदय में विराजमान सर्व दोषों से रहित परम विशुद्ध परमात्मा को प्रयत्नशील साधक ही जान सकते हैं। सदैव सत्य भाषण, तपश्चर्या, संयम, स्वार्थ त्याग तथा ब्रह्मचर्य के पालन से उत्पन्न यथार्थ ज्ञान द्वारा ही वे प्राप्त हो सकते हैं।[26] इसी प्रकार ब्रह्मोपनिषद् में कहा गया है कि जिस प्रकार तिल में तेल, दही में घृत, स्रोत के प्रवाह में जल और काष्ठ में अग्नि अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान रहती है, उसी प्रकार आत्मा हमारे अंत:करण में विद्यमान है। उसे सत्य और तप के द्वारा ही देखा जा सकता है।[27] इससे स्पष्ट होता है कि यम-नियम वास्तव में साधक को बाह्य एवं आंतरिक रूप से शुद्ध रखते हैं। यही शुद्धता उस परम सत्ता की प्राप्ति में सहायक होती है।

3.2 अभ्यास और वैराग्य :

किसी भी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अभ्यास और वैराग्य आवश्यक है। अभ्यास का अर्थ है– बार–बार क्रिया को दोहराना और वैराग्य का अर्थ है– राग रहित होना, अनासक्त होना। साधना के क्षेत्र में इनका विशेष महत्व है। अत: उपनिषदों में भी इन्हें परम तत्व की प्राप्ति में सहायक माना गया है। महोपनिषद् में कहा है कि पौरुष रूप अभ्यास और वैराग्य का आश्रय लेते हुए आकाश रूपी हृदय में चिंतन द्वारा बराबर चैतन्य तत्व में लगे हुए चित्त रूपी चक्र की धार से चित्त को अचिंत्यावस्था में ले जाकर मन का दमन करना चाहिए। इससे सभी बंधन कट जाएँगे।[28] मन के नियंत्रण के संबंध में बताया है कि मन को तब तक रोक कर रखना चाहिए जब तक कि वह हृदय में विलीन न हो जाए। मन का हृदय में विलीन हो जाना ही आत्मज्ञान और मोक्ष है।[29] इससे यही सिद्ध होता है कि बिना अभ्यास और वैराग्य के मानसिक नियंत्रण संभव नहीं है। महोपनिषद् में कहा है कि वैराग्य की भावना प्रबल होने पर हृदय की गाँठें खुल जाती हैं।[30] इंद्रियों पर विजय प्राप्ति के लिए अभ्यास और वैराग्य बहुत आवश्यक है। इंद्रियों पर नियंत्रण का परिणाम बताते हुए महोपनिषद् में कहा है कि हृदय में इंद्रियजन्य विषय हलचल नहीं करते हैं तो संसार रूपी समुद्र से तरा जा सकता है।[31] इसका तात्पर्य है कि हृदय में चित्त शांत अवस्था को प्राप्त होता है तो सभी बंधनों से मुक्त हुआ जा सकता है। इसी संदर्भ में यह भी कहा है कि मुक्त और शांत वही है, जो हृदय से सभी वासनाओं को छोड़ देता है। वही परमेश्वर है।[32] ब्रह्मबिन्दूपनिषद् में कहा है जब मन विषयासक्ति से रहित हो जाता है तथा वह हृदय में स्थिर होकर उन्मनी भाव को प्राप्त हो जाता है तब वह ब्रह्मपद को प्राप्त कर लेता है।[33] महोपनिषद् में कहा है कि जड़ता ही हृदय की पाषाणवत स्थिति है। उसका परित्याग करने पर जो अमन्यस्कता की अवस्था है, उसी में लीन रहो।[34] कहने का तात्पर्य है कि वासनाओं का छूटना, विषयासक्ति का छूटना, जड़ता का छूटना अभ्यास और वैराग्य का ही परिणाम है। अत: जब इनकी भावना दृढ़ हो जाती है तब परम सत्ता को प्राप्त किया जा सकता है।

3.3 भक्तिभाव :

भक्ति में भक्त का अपने इष्ट के प्रति समर्पण का भाव होता है। उस परम सत्ता को प्राप्त करने हेतु नवधा भक्ति का अपना विशेष स्थान है। उपनिषदों में भी भक्ति द्वारा उस परम सत्ता को प्राप्त करने की बात कही गई है। श्वेताश्वतर उपनिषद् में कहा गया है कि हृदय में स्थित अंतर्यामी परमेश्वर को भक्तिपूर्ण हृदय से निर्मल मन के द्वारा जान लेने पर अमर हो जाते हैं।[35] परमात्मा मनुष्यों के हृदय में सम्यक प्रकार से स्थित हैं। उनके गुण व प्रभाव को सुनकर द्रवित और विशुद्ध हुए निर्मल हृदय में, निश्चयपूर्वक बुद्धि और एकाग्र मन के द्वारा ध्यान करने पर वे परमात्मा प्रत्यक्ष होते हैं। जो साधक इस रहस्य को प्राप्त कर लेते हैं, वे उन्हें प्राप्त करके अमृततुल्य हो जाते हैं।[36] तेजोबिंदूपनिषद् में कहा है कि परमात्मा को इन आँखों से नहीं देखा जा सकता है। अत: जो साधक हृदय स्थित परमात्मा को भक्तिपूर्ण हृदय से गुण, प्रभाव का श्रवण करके भक्तिभाव से द्रवित हृदय में निर्मल मन के द्वारा जान लेते हैं, अमर हो जाते हैं।[37] इसी प्रकार कठोपनिषद् में भी कहा गया है कि इस परमेश्वर का दिव्य स्वरूप प्रत्यक्ष विषय के रूप में अपने सामने नहीं ठहरता। अर्थात कोई भी इन चर्म चक्षुओं से उसे नहीं देख पाता। जो निरंतर प्रेमपूर्वक उसका चिंतन हृदय में करता है, उसके हृदय में उस स्वरूप का प्रगाढ़ ध्यान होता है। उसका हृदय ध्यानजनित स्वरूप में निश्चल हो जाता है। ऐसे निश्चल विशुद्ध बुद्धि से वह हृदय में उस परमात्मा को जान लेता है। इसे जानने वाला अमृत हो जाता है, वह परमानंद स्वरूप हो जाता है।[38] इससे ज्ञात होता है कि भक्ति भावना के विभिन प्रकारों के द्वारा भी उस परम सत्ता को जाना जा सकता है।

3.4 प्राणायाम :

प्राण शक्ति को बढ़ाने का सशक्त उपाय है प्राणायाम। प्राणशक्ति जितनी प्रबल होती है, स्वास्थ्य पर उतना ही अधिक सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इतना ही नहीं, प्राण शक्ति की सुदृढ़ता, इसका जागरण साधना के क्षेत्र में भी विशेष महत्व रखता है। मुख्य प्राण का स्थान हृदय माना गया है। दूसरी ओर कहा गया है कि हृदय

प्राण में प्रतिष्ठित है, प्राण अपान में, अपान व्यान में, व्यान उदान में और उदान समान में।[39] बृहदारण्यकोपनिषद् में कहा है कि हृदय द्वार ही वायु का प्रवेश द्वार है। इसी हृदय से प्राण सुषुम्ना में प्रवेश करता है। सुषुम्ना ऊर्ध्व गमन का मार्ग है। इसके ऊपर मोक्ष का द्वार ब्रह्मरंध्र है। इसी को योगी सूर्य मंडल जानते हैं।[40] प्राण को हृदय पर धारण कर, उसका हृदय पर निरोध करना साधना की दृष्टि से उपयोगी बताया गया है। ब्रह्मविद्योपनिषद् में कहा है कि जिस प्रकार मथने वाले दंड से दुग्ध को मथा जाता है, उसी प्रकार चार कलाओं से युक्त हृदय में स्थित प्राण को शरीर में भ्रमण कराया जाता है।[41] ध्यानबिंदूपनिषद् में कहा है कि अनुलोम-विलोम प्राणायाम के अभ्यास से नाड़ियाँ वायु से पूर्ण हो जाती हैं। उन नाड़ियों में दसों प्राण धाराएँ सम्यक होने लगती हैं। तदंतर हृदय रूपी कमल विकसित होकर स्पष्ट हो जाता है तथा उस स्थान पर परमात्म स्वरूप निष्पाप वासुदेव के दर्शन होने लगते हैं।[42] ध्यानबिंदूपनिषद् कहता है कि पूरक में नाभि में विष्णु का ध्यान, कुंभक में हृदय में ब्रह्मा का ध्यान तथा रेचन में शिव का ध्यान करना चाहिए।[43]

खेचरी मुद्रा की सिद्धि हेतु योग कुंडलिनी उपनिषद् में कहा है कि प्राण को हृदय में निरोध कर नेत्रों से भौहों के मध्य देखते हुए उसकी शलाका से मंथन करें।[44] ध्यान के साथ प्राणायाम करने के संदर्भ में योग चूड़ामणि उपनिषद् में कहा गया है कि हृदयकमल में स्थित प्रज्ज्वलित ज्वाला सदृश सूर्य के ध्यान के साथ प्राणायाम करना योगी के लिए सुखदाई होता है।[45] नाद योग की सिद्धि में वायु का हृदय पर निरोध करना साधना की दृष्टि से उपयोगी बताया है। अत: योग चूड़ामणि उपनिषद् में कहा है कि ऊपर और नीचे दोनों ओर से गतिशील वायु जब आकाश मंडल हृदय में स्थिर होती है तब नादयोग की सिद्धि होती है।[46] कुंडिकोपनिषद् के अनुसार वायु के नाद का प्रकट होना ही हृदय का तप कहा जाता है। वह शरीर को भेदकर ऊर्ध्व की ओर गमन करता हुआ मूर्धा को प्राप्त कर लेता है। मूर्धा को प्राप्त कर लेना ही परम गति कहा गया है। इसे प्राप्त करने वाला ब्रह्मज्ञानी मुक्त हो जाता है।[47] ओम् के साथ भी प्राणायाम का निर्देश मिलता है। अमृतनाद उपनिषद् कहता है कि ओंकार का ध्यान करते हुए प्राणायाम करें। इस तरह प्रणव गर्भ प्राणायाम नाभि के ऊर्ध्व भाग अर्थात हृदय में ध्यान करते हुए स्थूलातिस्थूल मात्रा में संपन्न करें।[48] ध्यान बिंदूपनिषद् में निर्देश मिलता है कि इड़ा नाड़ी से वायु भरकर उदर में स्थापित करें। देह के मध्य भाग में ज्योर्तिमय ओम् का ध्यान करें। पूरक, रेचक, कुंभक को क्रमश: ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र कहा गया है। ये प्राणायाम के देवता हैं।[49] इससे सिद्ध होता है कि प्राणायाम के द्वारा भी हृदयोपासना संभव है।

3.5 ओंकार जप :

भारतीय परंपरा में ओंकार का विशेष स्थान है। इसे ब्रह्म का प्रतीक माना गया है जो सर्वज्ञ है, सर्वशक्तिमान है, सर्वव्यापक है। यह अतुलनीय है। इसे प्रणव नाम से भी जाना जाता है। अत: साधना में इस ओंकार के जप का विशेष महत्व है। उपनिषदों में ओंकार का विशद वर्णन मिलता है। हृदय पर ध्यान करने में इस ओंकार के जप को साधन के रूप में लिया गया है। मुंडकोपनिषद् में कहा है कि रथचक्र की नाभि में जैसे अरे लगे होते हैं उसी प्रकार शरीर की संपूर्ण नाड़ियाँ हृदय मध्य स्थित होती हैं। उस पर परमेश्वर का ओम् के उच्चारण द्वारा ध्यान करना चाहिए। अज्ञान दूर करने के लिए यह आवश्यक है।[50] इसी प्रकार मैत्रेयण्युयोपनिषद् में कहा गया है कि यह आकाश ही कमल है। इसमें निवास करने वाला समस्त प्रकार की जानकारी रखता है। वह इन चारों दिशाओं, उपदिशाओं में प्रतिष्ठित है। वह श्रेष्ठ है। इस प्राण और आदित्य की ओंकार से युक्त एवं व्याहृतियाँ सहित गायत्री, सावित्री महामंत्र से उपासना करनी चाहिए।[51] ध्यान बिंदूपनिषद् में कहा गया है कि अंत:करण को नीचे अरणि तथा प्रणवाक्षर को ऊपर की अरणि बनाकर यथारूप ध्यान के अभ्यास से अग्नि की भांति व्याप्त गूढ़ तत्व का साक्षात्कार करें।[52] निरंतर हृदय में ध्यान करके पुरुषोत्तम का ओम् नाम के उच्चारण से परमात्मा को प्राप्त करने में समर्थ हो जाते हैं, जो अज्ञानरूप अंधकार से सर्वथा अतीत और संसार समुद्र के परे हैं।[53] बुद्धिमान मनुष्य ध्यान की अवस्था में समस्त इंद्रियों को मन के द्वारा निरुद्ध करके हृदय में ओंकार रूप नौका द्वारा संपूर्ण भयंकर प्रवाहों को पार कर जाए।[54] इससे स्पष्ट

होता है कि ओंकार का उच्चारण, उसका जप करना भी हृदयोपासना के लिए उपयोगी है।

3.6 ध्यान :

किसी भी आलंबन पर चित्त की सघन एकाग्रता को ध्यान कहा जाता है। ध्यान को योग का हृदय माना गया है। हृदयोपासना में भी ध्यान का अपना विशेष महत्व है। ध्यानबिंदूपनिषद् में कहा गया है कि हृदयकमल की कर्णिका के मध्य स्थित ज्योतिशिखा के समान अंगुष्ठमात्र आकार के नित्य ओंकार रूप परमात्मा का ध्यान करें।[55] इसी प्रकार योगकुंडल्योपनिषद् के अनुसार अंगुष्ठमात्र, धूमरहित, ज्योतिस्वरूप, प्रकाशमान, कूटस्थ (शाश्वत) अव्यय, आत्मतत्व का अंत:करण में ध्यान करते रहना चाहिए।[56] शांडिल्योपनिषद् में कहा है कि पांच इंद्रियों के प्रवाह वाला हृदय रूप रिक्त आकाश को प्रादुर्भूत करने वाला है तथा वहीं खेचरी मुद्रा स्थित रहती है। अत: उसी का सेवन करें।[57] मैत्रेयण्युपनिषद् में कहा है कि हृदयकमल में बुद्धि के समस्त कर्मों के साक्षी रूप एवं परम अनुपम प्रेम के विषयभूत परमेश्वर का ध्यान करना चाहिए।[58] हंसोपनिषद् के अनुसार मंत्र के साथ अंगन्यास तथा करन्यास के पश्चात हृदय स्थित अष्टदल कमल में हंस का ध्यान करना चाहिए।[59] ध्यान बिंदूपनिषद् के अनुसार सौ अरे वाले, सौ पत्ते वाले, विकसित पंखुड़ियों वाले हृदय पद्म में सूर्य, चंद्र और अग्नि का क्रमश: एक के बाद दूसरे का ध्यान करना चाहिए। सूर्य, चंद्रमा और अग्नि के बोध हेतु सर्वप्रथम हृदयकमल में विकसित होने का ध्यान करना चाहिए। तत्पश्चात हृदयकमल में स्थित बीजाक्षरों को ग्रहण करके ही अचल चेतनावस्था प्राप्त होती है।[60] ब्रह्मविद्योपनिषद् के अनुसार हृदय में ज्ञानमुद्रा के स्वरूप वाले हंस का ध्यान करना चाहिए।[61] इसी प्रकार त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद् में कहा है कि हृदय रूपी कमल में आसीन कोटि-कोटि सूर्य सदृश प्रकाशयुक्त नित्य विश्वरूप विष्णु का ध्यान करना चाहिए।[62] तेजोबिन्दु उपनिषद् में प्रणव रूप ध्यान को महत्व देते हुए कहा है कि हृदयाकाश में अवस्थित प्रणव स्वरूप तेजोमय बिंदु का ध्यान ही परम ध्यान है।[63] योगराजोपनिषद् में कहा गया है कि चतुर्थ चक्र अर्थात हृदय चक्र नीचे की ओर मुँह किए हृदय में स्थित है। उसके मध्य में प्रकाश के रूप में हंस का ध्यान प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। इससे संसार वशीभूत हो जाता है। इसमें संशय नहीं है।[64] अत: साधक उपरोक्त बताए हुए उपायों को व्यवहारगत कर, उनका अभ्यास कर हृदय में उस परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है।

4.0 हृदयोपासना का परिणाम :

किसी भी साध्य की प्राप्ति में एक नहीं, अपितु अनेक परिणाम प्राप्त होते हैं। इसी प्रकार हृदयोपासना का भी चरम लक्ष्य ब्रह्मत्व की प्राप्ति है, लेकिन इस मार्ग में प्रस्थान करने वाले को भी कई परिणाम प्राप्त होते हैं। ये छोटे-छोटे परिणाम ही बड़े परिणाम की ओर ले जाते हैं। हृदयोपासना में भी यही चरितार्थ होता है। शांडिल्योपनिषद् में कहा है कि हृदय में चित्त का संयम करने पर स्व: लोक का ज्ञान होता है। हृदय के ऊर्ध्व भाग में चित्त का संयम करने से मह:लोक का ज्ञान होता है।[65] महोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म का साक्षात्कार होते ही हृदय ग्रंथि खुल जाती है। सभी संशय समाप्त हो जाते हैं। समस्त कर्म क्षीण हो जाते हैं।[66] पैंगलोपनिषद् के अनुसार मैं शुद्ध मानस हूं-ऐसे ज्ञान के अनुभव से और श्रेय परमात्मा के हृदय में प्रतिष्ठित हो जाने पर देह को शांतिपद की प्राप्ति हो जाए तब साधक चैतन्यरूप हो जाता है।[67] मुंडकोपनिषद् के अनुसार उस ब्रह्म को जान लेने पर साधक ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। उसके कुल में कोई ज्ञान रहित नहीं होता। सभी ब्रह्म को जानने वाले होते हैं। वह शोक से पार पा जाता है, पाप समुदाय से तर जाता है। उसकी हृदय की गाँठ खुल जाती है। वह अमर हो जाता है।[68]

सुबालोपनिषद् में कहा है कि हृदय के मध्य भाग में माँस का लाल पिंड है। उसमें चंद्रमा के द्वारा विकसित होने वाले कमलिनी पुष्प की भांति शुभ्र श्वेत एक सूक्ष्मातिसूक्ष्म कमल है। उसका विकास विभिन्न तरह से हुआ है। इसके मध्य समुद्र, उसके मध्य कोश है। उसमें चार नाड़ियाँ रमा, अरमा, इच्छा और अपुनर्भवा है। रमा मुख्य लोक को जाती है। अरमा पापलोक को ले जाती है। इच्छा द्वारा जिसे प्राप्त करना हो, उसे प्राप्त किया जा

सकता है। अपुनर्भवा द्वारा हृदय कोश को खोला जाता है। कोश से मस्तक को, मस्तक से पृथ्वी को, पृथ्वी के भेदन से जल को, जल के भेदन से तेज को, तेज के भेदन से वायु को, वायु से आकाश को, आकाश से मन, अहंकार, महत्व को, मन अहंकार, महत्व से प्रकृति को, प्रकृति से अक्षर को, अक्षर से मृत्यु अर्थात परमात्मा में लीन होता है। इसके बाद सद्-असद्, सदासद् कुछ शेष नहीं रहता है।[69] हृदय रूपी गुहा में निवास करने वाला वह आत्मा अमृत और दैदीप्यमान है। विद्वान उसे आनंद रूप से देखते हैं और उसमें विलय हो जाने पर उससे भिन्न कुछ नहीं है।[70] शांडिल्योपनिषद् में कहा गया है कि चिरकाल तक हृदय प्रदेश में आकाश की ही अनुभूति होने से वासनाविहीन मन ध्यान मग्न होने लगता है। इससे प्राण का स्पंदन अवरुद्ध हो जाता है।[71] जो साधक हृदयकमल में ध्यान करता है, वह ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। सारी सिद्धियाँ अणिमा, लघिमा आदि उसे प्राप्त होती हैं।[72] यह तभी संभव है, जब साधक इन विधियों का श्रद्धा से पालन करता है।

5.0 निष्कर्ष :

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि उपनिषदों में आत्मा के उत्तरोत्तर विकास हेतु, कर्म बंधनों से मुक्ति हेतु, हृदय ग्रंथि को खोलने हेतु, ब्रह्म प्राप्ति हेतु अनेक विधियों-प्रविधियों को निर्दिष्ट किया है। साथ ही हृदय जो भावों का, प्रेम का केंद्र है, आत्म साक्षात्कार तथा ब्रह्म प्राप्ति का स्थान है अथवा स्वयं आत्मा तथा परमात्मा है, ऐसे केंद्र पर, ऐसे स्थान की उपासना करना, उस पर ध्यानयोग की साधना करना अपने आप में महत्वपूर्ण है। इसे यम-नियमों के पालन द्वारा, भक्तिभाव द्वारा, अभ्यास-वैराग्य के द्वारा, प्राणायाम के द्वारा, ओंकार जप और ध्यानयोगादि के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। इससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि अपने भीतर अनंत संभावनाएँ निहित हैं। यदि इनको उभारने का, रहस्योद्घाटन का प्रयास किया जाए, इस मार्ग पर दृढ़ता से आगे बढ़ा जाए और अपने लक्ष्य के प्रति एकाग्र होकर पुरुषार्थ किया जाए तो साधक को जीवन में अनेक उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। इनका उपयोग भौतिक तथा आध्यात्मिक दोनों ही क्षेत्रों में किया जा सकता है। जैसे कि भारतीय परंपरा का अंतिम लक्ष्य ब्रह्म प्राप्ति, मोक्ष प्राप्ति है, साधक उस चरम लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। उपनिषदों का सार यही है ब्रह्म साक्षात्कार, अमृतत्व की प्राप्ति। इसीलिए हृदय में चित्त की स्थिरता एवं स्थितता द्वारा पूर्णता प्राप्त करने वाले प्रणम्य होते हैं। निष्कर्षत: यह सिद्ध होता है कि हृदयोपासना अपने आप में बहुत ही महत्वपूर्ण है, जिसका परिणाम चरम एवं परम लक्ष्य की प्राप्ति है। यही जीवन की वास्तविक प्राप्ति है, वास्तविक पूर्णता है। ❑

संदर्भ सूची :

1. संस्कृत हिंदी कोश, वामन शिवराज आप्टे, पृ. 1362
2. हिंदी संस्कृत कोश, पृ. 657
3. वृहत् हिंदी पर्यायवाची शब्दकोश, पृ. 322
4. हिंदी पर्यायवाची कोश, पृ. 708
5. शिक्षार्थी हिंदी शब्दकोश, पृ. 884
6. अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश, पृ. 383
7. तृतीय ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 517
8. पंचम अध्याय तृतीय ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 517
9. चतुर्थ अध्याय, प्रथम ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 507

10. तृतीय अध्याय मंत्र-2, ऐतरेय उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 316
11. 1/8, प्राणाग्निहोत्रोपनिषद्, पृ. 140
12. अमृतनादोपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 699
13. 6/20, पृ. महोपनिषद्, पृ. 188
14. 1/6, सुबालोपनिषद्, पृ. 322
15. मंत्र 5, अथर्वाशिरोपनिषद्, पृ. 41
16. मंत्र 2, आत्मबोधोपनिषद्, पृ. 33
17. 11/4, सुबालोपनिषद्, पृ. 395
18. 3/1/1, मुंडकोपनिषद्, पृ. 371
19. 4/4/7, बृहदारण्यकोपनिषद्, पृ. 307
20. 8/1/1, छांदोग्योपनिषद्, पृ. 183
21. मंत्र 5, कैवल्योपनिषद, पृ.58
22. 1/12, मैत्रैयण्युपनिषद्, पृ. 247
23. 2/26 मैत्रैयण्युपनिषद्, पृ. 250
24. मंत्र, 20, महोपनिषद्, पृ. 188,
25. मंत्र 3-4, मंडलब्राह्मणोपनिषद्, पृ. 221,
26. तृतीय खंड, छांदोग्योपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 470
27. मंत्र 19 ब्रह्मोपनिषद्, पृ. 226-27
28. 1/93, महोपनिषद्, पृ. 169-70
29. तृतीय वल्ली, श्लोक-17, कठोपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 239
30. 5/65, महोपनिषद्, पृ. 177
31. 5/174, महोपनिषद्, पृ. 186
32. 6/8, महोपनिषद्, पृ. 188
33. मंत्र 4, ब्रह्मबिंदूपनिषद्, पृ. 201
34. 5/51, महोपनिषद्, पृ. 176
35. द्वितीय मुंडक, द्वितीय खंड, श्लोक-6, मुंडकोपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 283-284
36 मंत्र-8, श्वेताश्वतर उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 379
37. तेजोबिन्दु उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 692
38. ब्रह्मबिन्दूपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 688
39. अष्टम अध्याय, षष्ठ खंड, छांदोग्योपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 471
40. द्वितीय ब्राह्मण, बृहदकारण्य उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 507
41. मंत्र 2, ब्रह्मविद्योपनिषद्, पृ. 214
42. मंत्र 97-100, त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्, पृ. 77
43. मंत्र 30-32, ध्यानबिंदूपनिषद्, पृ. 94
44. 2/45, योगकुंडल्युपनिषद्, पृ. 205-6
45. मंत्र 77, योगचूड़ामण्युनिषद्, पृ. 220
46. मंत्र 155, योगचूड़ामण्युनिषद्, पृ. 229
47. मंत्र 21-22, कुंडिकोपनिषद्, पृ. 55-56
48. मंत्र 22, अमृतनादोपनिषद्, पृ. 31

49. मंत्र 20, ध्यानबिंदूपनिषद्, पृ. 93
50 2/2/8, मुंडकोपनिषद्, पृ. 370
51. 5/2 मैत्रेयण्युपनिषद् पृ. 394
52. मंत्र 22, ध्यानबिंदूपनिषद्, पृ. 94
53. 2/2/6, मुंडकोपनिषद् (उपनिषद्-अंक) पृ. 283-284
54. मंत्र 8 श्वेताश्वतर उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 379
55. मंत्र 19, ध्यानबिंदूपनिषद्, पृ. 93
56. 3/26, योगकुंडल्योपनिषद् पृ. 208
57. 1/39 शांडिल्योपनिषद्, पृ. 293
58. 1/12, मैत्रेयण्युपनिषद्, पृ. 247
59. मंत्र 11-12, हंसोपनिषद्, पृ. 243
60. मंत्र 34-35, ध्यानबिंदूपनिषद्, पृ. 94
61. मंत्र 68, ब्रह्मविद्योपनिषद्, पृ. 218
62. मंत्र 153, त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्, पृ. 81
63. 39, तेजोबिन्दु उपनिषद्, (उपनिषद्-अंक) पृ. 692
64. मंत्र 11-12, योगराजोपनिषद्, पृ. 223-24
65. 1/7/52, शांडिल्योपनिषद्, पृ. 296
66. 4/82, महोपनिषद्, पृ. 168
67. 4/12, पैंगलोपनिषद्, पृ. 207
68. 3/2/8, मुंडकोपनिषद्, पृ. 374
69. 11/1, सुबालोपनिषद्, पृ. 336
70. 8/1, सुबालोपनिषद्, पृ. 229
71. 1/7/35, शांडिल्योपनिषद्, पृ. 292
72. मंत्र 159-60, त्रिशिखब्राह्मणोपनिषद्, पृ. 82

संदर्भ ग्रंथ :

1. संस्कृत हिंदी कोश, वामन शिवराज आप्टे, मोतीलाल बनारसीदास पब्लिशर्स, प्रा. लिमिटेड, दिल्ली।
2. हिंदी संस्कृत कोश, चौखंबा विद्याभवन वाराणसी, 2004।
3. वृहत् हिंदी पर्यायवाची शब्दकोश, गोबिंद चातक, सुजाता बिष्ट, तक्षशिला प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली, 1985।
4. हिंदी पर्यायवाची कोश, डॉ. भोलेनाथ तिवारी, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 1993।
5. शिक्षार्थी हिंदी शब्दकोश, डॉ. हरदेव बाहरी, राजपाल एंड संस, कश्मीरी गेट, दिल्ली, 2005
6. अंग्रेजी हिंदी शब्दकोश, फादर कामिल बुल्के, कैथोलिक प्रेस, रांची, 2009।
7. कल्याण उपनिषद्-अंक, तेईसवें वर्ष का विशेषांक, गीता प्रेस, गोरखपुर, सं. 2072।
8. 108 उपनिषद् (ब्रह्मविद्याखंड) भाग 1,2,3, पं. श्रीरामशर्मा आचार्य, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, (उ.प्र.) 2005।
9. 108 उपनिषद् (ज्ञानखंड) पं. श्रीरामशर्मा आचार्य, युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा, (उ.प्र.) 2005।

सहायक आचार्य
योग एवं जीवन विज्ञान विभाग
जैन विश्वभारती संस्थान, लाडनूं (राज.)

आलेख

हिंदी पत्रों का इतिहास (प्रारंभ से 1898 ई. तक)

✍ डॉ. आशा यादव

आधुनिक विश्व में समाचार पत्रों का महत्व और उपयोगिता सर्वविदित है। वे अभिव्यक्ति का एक ऐसा संशक्त माध्यम हैं, जो समाज की प्रत्येक गतिविधि को गहराई से प्रभावित करते हैं। स्वतंत्रता से पूर्व पत्रकारिता राष्ट्रीय आंदोलन का अंग था। देश के प्रबुद्ध वर्ग को राष्ट्रीय आंदोलन की ओर मोड़ने में इस देश के पत्रों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। भारतीय राष्ट्रीयता के विकास और उसको संचालित करने का श्रेय भी भारतीय पत्रकारिता को है, क्योंकि स्वतंत्रता आंदोलन के प्रारंभ होने से पूर्व ही उनका ध्यान राजनीतिक समस्याओं की ओर था। जब से भारतीय संपादकों ने देश की स्वतंत्रता के लिए अपनी लेखनी का प्रयोग करना प्रारंभ किया, उसके पहले से ही समाचार पत्रों ने राजनीतिक विषयों में गहरी दिलचस्पी लेना प्रारंभ कर दिया था। भारतीय स्वतंत्रता एवं सुधार के क्षेत्र में तपस्वी पत्रकारों द्वारा किए गए कार्य को विस्मृत करना असंभव है। यह भी संयोग की ही बात है कि लोकमान्य तिलक, महात्मा गाँधी, एनी बेसेंट, मदन मोहन मालवीय आदि पत्रकार रहे हैं।[1]

ब्रिटेन के साथ संबंधों से हानि-लाभ के लेखे-जोखे में यदि यह कहा जाए कि भारत में पत्रकारिता का प्रारंभ ही था, जिसका देश में राष्ट्रीयता के निर्माण और विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा तो अतिशयोक्ति न होगी। उसने बिखरे समूहों को एकता के सूत्र में पिरो दिया। भारत जब दासता में था तो प्रेस का लक्ष्य राष्ट्रीयता की कहानी सुनाना था और ऐसा करने में उसे उन संकटों का सामना करना पड़ा, जोकि अग्रदूतों को कसौटी होते हैं और जिनके कारण क्रांतिकारियों मूल्यों का सृजन होता है।[2]

आधुनिक पत्रकारिता का जन्म यद्यपि मुद्रण प्रणाली के भारत में प्रारंभ होने के बाद अठाहवीं शताब्दी के अंतिम चरण में हुआ था, परंतु इसके पूर्व भी भारत में पत्रकारिता के अस्तित्व का प्रमाण मिलता है। अठाहरवीं शताब्दी के पूर्व मुगल शासनकाल में भी समाचार पत्रों का प्रचलन था, परंतु इसका स्वरूप राजकीय था। मुगल शासनकाल में अखवारनवीस, वाकियानवीस, वाकियानिगार, हरकारा आदि व्यक्ति ऐसे पत्रों से संबंधित थे।[3] ये अधिकारी वेतनभोगी होते थे और उन्हें राज्य की ओर से निश्चित वेतन प्राप्त होता था। इनके द्वारा रचित पत्र शासन के लिए होते थे। सामान्य जनता तक इनकी पहुँच नहीं थी।[4]

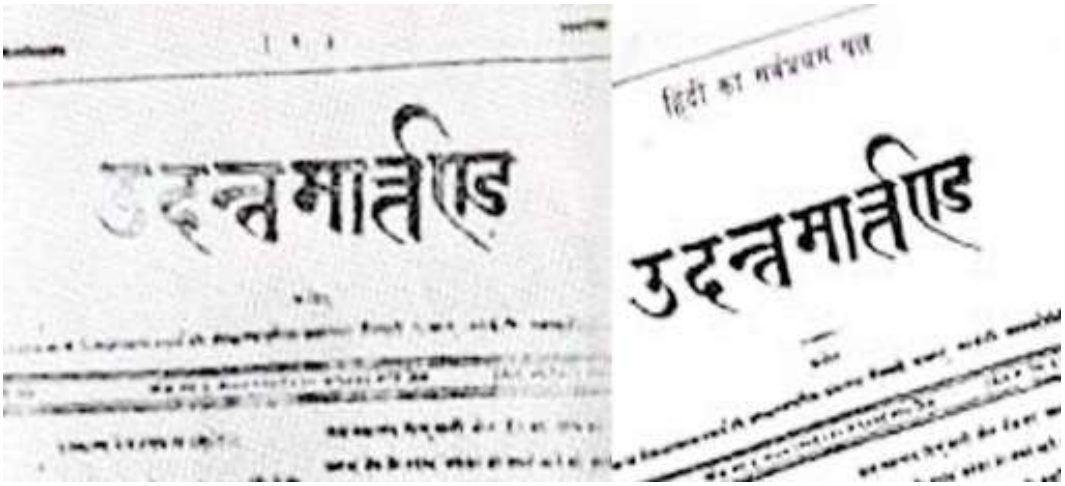

अत: भारत में समाचार पत्रों का प्रारंभ अँग्रेजों के शासनकाल से ही प्रारंभ हुआ। यद्यपि भारतीय प्रकाशन की आवश्यकता अनुभव करते थे, किंतु उनके पास साधनों का सर्वथा अभाव था और अँग्रेज अपने हाथों यह अधिकार परतंत्र भारत के नागरिकों को सौंपने को तैयार न थे। अँग्रेजों को भी समाचारों की आवश्यकता थी। अपनी भूख मिटाने के लिए उन्होंने डिनर-पार्टियों, नृत्य-संगीत के कार्यक्रम पिकनिक, शिकार आदि का आयोजन प्रारंभ किया । फिर भी अँग्रेज ऐसे साधन की आवश्यकता अनुभव करते थे, जिससे वे आपस में व्यक्तिगत एवं व्यापारिक सूचनाओं के आदान-प्रदान द्वारा संपर्क तथा प्रशासन की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त कर सकें। मौखिक समाचारों के आदान-प्रदान से उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति अत्यंत कठिन प्रतीत होने लगी। इस प्रकार उपरोक्त परिस्थितियाँ ही भारत में समाचारो पत्रों की स्थापना का आधार बनी। अत: 18वीं शताब्दी के पहले चरण में ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी इन संवाद लेखकों की सेवाएं प्राप्त कीं।[5] सन् 1780 में ''कलकत्ता जनरल एडवरटाइजर'', जो ''हिकीगजेट'' के नाम से भी जाना जाता है (क्योंकि इसे मिस्टर जेम्स अगस्ट हिकी ने प्रकाशित किया था) का पहला अंक शनिवार 29, जनवरी 1780 को निकला।[6] इस पर यह घोषणा प्रकाशित हुई थी कि यह राजनैतिक और व्यापारिक साप्ताहिक खुला तो सब पार्टियों के लिए है, परंतु प्रभावित किसी से नहीं है।[7] हिकी महोदय ने अपने पत्र में कंपनी के कर्मचारियों तथा गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स की नीतियों की आलोचना करनी प्रारंभ कर दी। श्रीमति हेस्टिंग्स, कर्नल थॉमस, डीप पियर्स और स्वदेशी मिशनरी जॉन जाटारिया केरनेडर आदि इसकी आलोचना के लक्ष्य बन गए। फलत: हिकी परेशानी में फँस गया। 14 नवंबर, 1780 में गवर्नर जनरल ने इस पत्र की डाक सुविधा बंद कर दी। पत्र प्रकाशन के सभी अधिकार छीन लिए गए। जून 1781 में उसे एक वर्ष का कारावास एवं 2000 रुपए की जुर्माने की सजा हुई।[8] परंतु ये सब निर्भीक पत्रकार के आक्रमणों को रोक न सकें। हिकी ने अपने विचारों में कोई परिवर्तन नहीं किया और वह अपने पत्र का संपादन जेल से ही करता रहा। कुछ समय पश्चात उसने बंगाल छोड़ दिया।[8]

''इंडिया गजेट'' नामक दूसरा पत्र सन् 1780 में ही कलकत्ता से निकला। इसमें ईस्ट इंडिया कंपनी की व्यापारिक गतिविधि संबंधी सूचनाएँ छपा करती थीं। तीसरा पत्र ''कैलकटा गजेट'', फरवरी 1784 में प्रकाशित हुआ। चौथा पत्र ''बंगाल जर्नल'' था, जो फरवरी 1785 में प्रकाशित हुआ। इस प्रकार छह वर्षों के अंदर कलकत्ता से ही पाँच, एक मासिक और चार साप्ताहिक प्रकाशित हुए।[9] कलकत्ता में पत्रों की भरमार ने मद्रास वालों को भी पत्र प्रकाशन की ओर आकर्षित किया। फलस्वरूप मद्रास से सन् 1785 में ''मैड्रास कुरियर'' का प्रकाशन हुआ और बंबई से पहला पत्र सन् 1789 में ''बोम्बे हेराल्ड'' निकला। सन् 1719 में ''बॉम्बे

कूरियर'' और ''बाम्बे गजेट'' आदि पत्रों का प्रकाशन हुआ। भारतीय पत्रकारिता के आरंभिक दस वर्षों में इन तीनों प्रेसिडेंसियों से प्राय: पंद्रह पत्र प्रकाशित हुए और सब अँग्रेजी में निकले, क्योंकि इनके संपादक और प्रकाशक अँग्रेज ही थे।[10]

हिकी के बाद सरकारी कोप दृष्टि का दूसरा शिकार एक आयरिश अमेरिकन विलियम दुआनी था। ''बंगाल-जर्नल'' में सरकार की कठोर आलोचना प्रकाशित करने के कारण उसे पत्र के संपादक पद से हाथ धोना पड़ा।[11] अत: भारतीय पत्रकारिता की स्वाधीनता पर प्रारंभ से ही ब्रिटिश सरकार का आक्रमणात्मक रवैया रहा[12] क्योंकि भारत में मुद्रण कला के विकास को ब्रिटिश सरकार एक प्रतिकूल शक्ति का अशुभ जनक समझती थी। भारतीय पत्रकारिता के जनक यूरोपीय पत्रकार ही थे, फिर भी ब्रिटिश सरकार इन सजातीय पत्रकारों के प्रति नितांत असहिष्णु थी। तत्कालीन समाचार पत्रों के प्रति शंकालु थी और हमेशा मामूली कारणों से उन पर सांघातिक चोट करने के लिए उद्यत रहती थी। दूसरी ओर प्रेस के संचालक हमेशा ही ऐसे आक्रमणों से बचने के लिए सावधान रहते थे।[13]

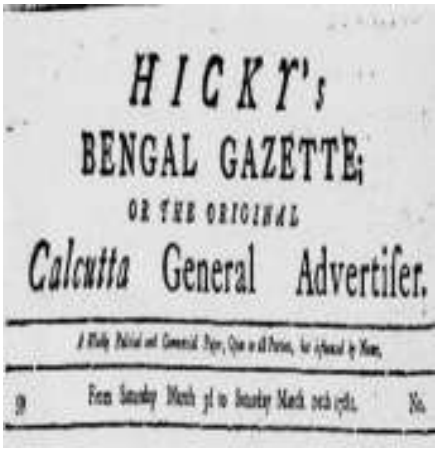
HICKY's
BENGAL GAZETTE;
OR THE ORIGINAL
Calcutta General Advertiser.

अत: भारतीय पत्रकारिता की स्वाधीनता पर प्रारंभ से ही ब्रिटिश सरकार का आक्रमणात्मक रवैया रहा। वेलेजली, जो प्रारंभ से ही पत्रों की स्वतंत्रता का विरोधी था,[14] के समय (1799) में प्रथम प्रेस अधिनियम बनाया गया।[15] यूरोपीय राजनीति में इंग्लैंड-फ्रांस युद्ध ने उसे स्वातंत्र्य दमन हेतु उपयुक्त अवसर प्रदान किया।[16] 13 मई, 1799 को बने अधिनियम के अंतर्गत पत्र के मुद्रक के लिए पत्र के अंत में अपना नाम प्रकाशित करना, पत्र के संपादक एवं संचालक को अपने नाम और निवास स्थान का पता सरकार के सेक्रेटरी को भेजना, सरकारी निरीक्षण के पूर्व पत्र प्रकाशित न करना तथा रविवार को पत्र प्रकाशित करना अनिवार्य कर दिया।[17] इस कानून के पीछे सरकार का एक ही मंतव्य था कि भारत के लोगों को जहाँ तक हो सके बर्बरता और अंधकार में रखा जाए और देशी जनता में ज्ञान फैलाने के किसी भी प्रयत्न का कड़ाई से विरोध किया जाए।[18]

हेस्टिंग्स (1813-1823) ने 19, अगस्त 1818 को सेंसर प्रथा को समाप्त कर दिया तथा साधारण नियम बनाए, जिनमें पत्रों में उन विषयों की चर्चा वर्जित थी, जिनसे सरकार की सत्ता पर प्रभाव पड़ता हो अथवा जिनसे सार्वजनिक हितों की हानि होती हो।[19]

सन् 1818, में एक मासिक पत्र ''दिग्दर्शन'' सौरामपुर (श्रीरामपुर) के बैपटिस्ट मिशनरियों ने निकाला। इसके संपादक जान क्लार्क मार्शल थे। यह शिक्षाप्रद मासिक था तथा भारतीय छात्रों एवं नवशिक्षकों के लिए ज्ञान-विज्ञान, शिक्षा एवं मनोरंजन की सामग्री प्रस्तुत करना इसका उद्देश्य था। अत: वैज्ञानिक परिभाषा के अनुसार इस पत्र को हिंदी का प्रथम समाचार पत्र नहीं कहा जा सकता।[20] दो साप्ताहिक पत्र बंगाल की क्रांतिकारी भूमि से निकले- ''बंगाली-गजट'' और ''समाचार दर्पन''।[21]

इन पत्रों का मुख्य उद्देश्य ईसाई धर्म का प्रचार करना था। मेले जैसे सार्वजनिक स्थानों पर इनका नि:शुल्क वितरण किया जाता था।[22] इसी समय कलकत्ता से पूर्णत: भारतीयों द्वारा संपादित एवं प्रकाशित प्रथम पत्र ''बंगाल गजेट'' का प्रकाशन हुआ, जिसके संपादक श्री गंगाधर भट्टाचार्य एवं प्रकाशक हरचन्द्रराय थे। ये दोनों ही राजा राम मोहन राय के विचारों से प्रभावित थे।[23]

सन् 1818 में जेम्स बंकिघम ने ''कलकत्ता जर्नल'' प्रकाशित किया।[24] उस युग में ''कलकत्ता जर्नल'' ने अपने निष्पक्ष, निर्भीक, स्पष्ट एवं मानवता सम्मत विचारों एवं टिप्पणियों से भारतीय पत्राकारिता को नई दिशा प्रदान की।[25]

4 दिसंबर, 1821 को राजा राममोहन राय ने बंगला

में ''संवाद-कौमुदी'' का प्रकाशन किया। उनका मुख्य उद्देश्य था हिंदू समाज में व्याप्त कुरीतियों, भ्रष्टाचार एवं सती प्रथा जैसी रूढ़ियों का खंडन करना।[26]

ईसाई मिशनरियों के प्रचार के उत्तर में उन्होंने सन् 1821 में ही ''ब्रहमैनिकल मैगजीन'' का प्रकाशन किया। 1822 में उन्होंने ''मीरात-उल-अखबार'' का प्रकाशन किया, जिसे अपनी उग्रता के कारण ब्रिटिश सरकार की दमन नीति का शिकार होना पड़ा।[27] उनका मुख्य उद्देश्य था जनता को उन उपायों से परिचित करना, जिनके द्वारा शासकों से सुरक्षा पाई जा सके और उचित माँगें पूरी कराई जा सकें।[28]

सन् 1822 में ही राजा राममोहन राय ने सुधारवादी आंदोलन का विरोध करने वाले पुराणपंथियों एवं कट्टरपंथी बंगालियों के बंगला साप्ताहिक ''समाचार चंद्रिका'' का प्रकाश किया।[29]

भारतीय पत्रकारिता के दौर में 19वीं शताब्दी का महत्वपूर्ण स्थान है, क्योंकि इसी काल में विविध भाषाओं में समाचार पत्रों का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। हिंदी समाज को आधुनिकता से जोड़ने की महत्वाकांक्षा के फलस्वरूप ''उदन्तमार्तण्ड'' नामक हिंदी के प्रथम पत्र का प्रकाशन 30 मई, 1926 को कलकत्ता से हुआ। इसका प्रकाशन पं. युगलकिशोर शुक्ल ने किया, जो आर्थिक कठिनाइयों एवं सरकारी डाक व्यय की सुविधा प्रदान न होने के कारण डेढ़ वर्ष पश्चात बन्द हो गया था।[30]

अँग्रेजी पत्रकारिता जहाँ कंपनी के असंतुष्ट कर्मचारियों या अँग्रेजों की पारस्परिक प्रतिस्पर्धा के कारण प्रतिशोधात्मक कदम था, वहीं, हिंदी पत्रकारिता नवजागरण का प्रमाण थी।[31]

अन्य भाषा की तरह हिंदी भाषा में भी सत्य समाचार पढ़ व समझ सकें, इस उद्देश्य से ''उदन्तमार्तण्ड'' में सरकारी अफसरों की नियुक्ति, सार्वजनिक विज्ञापन, जहाजों के आने का समय, कलकत्ते के बाजार भाव एवं देश-विदेश के समाचार भी प्रकाशित किए जाते थे। ज्योतिष की चर्चा भी इसमें रहती थी।[32] इस प्रकार ''उदन्तमार्तण्ड'' का प्रकाशन हिंदुस्तानियों के हित हेतु अर्थात् उन्हें परावलंबन से मुक्ति दिलाकर स्वतंत्र दृष्टि प्रदान करने के निमित्त हुआ था।[33] हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास की रचना इसी मूल प्रतिज्ञा ''हिंदुस्तानियों का हित साधन'' की आधारशिला से संबद्ध होकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के महायज्ञ की पुण्याहुति सिद्ध होती है।[34] इस प्रकार भारतीय समाचार पत्रों का इतिहास उनकी स्वतंत्रता के अनवरत संघर्ष का इतिहास है। अत: जिस अनुपात में भारतीय राष्ट्रवाद का विकास हुआ, उसी अनुपात में भारतीय समाचार पत्रों की स्वतंत्रता पर आघात हुआ।[35] सन् 1822 ई. में सरकार द्वारा सर थॉमस मुनरों ने अपने ''डेंजर ऑफ ऐ फ्री प्रेस इन इंडिया'' शीर्षक टिप्पणी में समाचार पत्रों की स्वतंत्रता को भारत में ब्रिटिश शासन के लिए अत्यंत हानिकारक बताया। उसके अनुसार एक स्वतंत्र प्रेस और विदेशियों का राज्य परस्पर विरोधी हैं तथा वे अधिक समय तक एक साथ नहीं चल सकते हैं।[36]

सन् 1823 में लार्ड हेस्टिंग्स का कार्यकाल समाप्त होने पर जान ऐडम कार्यवाहक गवर्नर जनरल नियुक्त हुआ। उसने 14 मार्च, 1823 को मुनरों के विचारों को कार्यरूप में परिणित करते हुए वेलेजली से भी अधिक कठोर नियम लागू किए।[37] इनके अनुसार सरकार से लाइसेंस या अनुमति लिए बिना पुस्तकों एवं पत्रों को प्रकाशित करना तथा प्रेस का प्रयोग करना निषिद्ध कर दिया गया। प्रकाशन संबंधी सरकारी लाइसेंस के लिए प्रार्थना-पत्र देते समय शपथ-पत्र देना भी आवश्यक कर दिया गया जिसमें पत्रिका, समाचार पत्र या पुस्तक के प्रकाशक का नाम तथा पूरा पता उल्लिखित हो।[38] ये कानून 5 अप्रैल, 1823 से बंगाल में प्रभावित हुए।[39] जनवरी 1827 में इसी तरह के रेग्युलेशन बंबई की सरकार द्वारा भी पारित किए गए।[40]

लार्ड एमहर्स्ट के शासनकाल (1823-1828) में प्रेस संबंधी नया कानून बना, जिसके अनुसार किसी पत्र से किसी सरकारी कर्मचारी का किसी प्रकार का संबंध निषिद्ध कर दिया गया।[41] सन् 1828 में भारत के गवर्नर जनरल का कार्यभार लार्ड विलियम बैंटिक ने संभाला। उसके शासनकाल में (1828-1835) में किसी समाचार पत्र के विरूद्ध कार्यवाही नहीं की गई।[42] बैंटिक के बाद भारत के कार्यकारी गवर्नर जनरल चार्ल्स मेटकाफ के शासनकाल (1835-1836) में समाचार पत्रों की स्वतंत्रता को समर्थन प्राप्त हुआ, जिससे भारतीय प्रेस को प्रोत्साहन मिला।[43] हिंदी का दूसरा पत्र ''बंगदूत'' था, जोकि अँग्रेजी ''बंगाल हेराल्ड'' का हिंदी संस्करण था। इसके संपादक नीलरत्न हालदार थे। यह पत्र फारसी एवं बंगला में भी निकलता था। इस पर फारसी एवं बंगला का ही अधिक प्रभाव था।[44] हिंदी का तीसरा पत्र सम्भवत: ''प्रजामित्र'' था, जो जून 1834 में कलकत्ता से निकला, किंतु इसका प्रकाशन संदिग्ध है।[45]

''बनारस अखबार'' उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होने वाला नागरी लिपि और भाषा शैली में उर्दू से प्रभावित हिंदी का पहला पत्र था। इस साप्ताहिक पत्र के संपादक पं. गोविंद रघुनाथ चट्टे थे। इसके संचालक शिव प्रसाद सितारे हिंद थे। यह पत्र सन् 1845 में बनारस से निकलता था।[46] सन् 1846 में कलकत्ता से ''इंडियन सन'' पत्र निकाला जो हिंदी, फारसी, अँग्रेजी, बंगला और उर्दू में निकलता था। इसके हिंदी संस्करण का नाम ''मार्तण्ड'' था।[47] सन् 1848 में ''मालवा अखबार'' हिंदी और उर्दू में निकला।[48] यह मध्य भारत का प्रथम पत्र था।[49] सन् 1849 में कलकत्ता से बंगला-हिंदी में एक पत्र ''जगदीपक भास्कर'' नाम से प्रकाशित हुआ था।[50] सन् 1850 में बनारस से ही तारामोहन मिश्र ने ''सुधाकर'' पत्र निकाला।[51] यह बंगला एवं हिंदी में निकला।[52] इसकी भाषा बनारस अखबार से कहीं अधिक अच्छी थी।[53] भाषा की दृष्टि से ''सुधाकर'' को ही हिंदी प्रदेश का प्रथम पत्र कहना चाहिए।[54] सन् 1850 में ही संपादक पं. युगलकिशोर शुक्ल ने ''साम्यदंड मार्तण्ड'' पत्र निकाला।[55]

सन् 1852 ई. में आगरा से प्रकाशित ''बुद्धि प्रकाश'' भाषा एवं शैली के विचार से महत्वपूर्ण था। इस पत्र में विविध विषयों यथा इतिहास, भूगोल, शिक्षा, स्त्री संबंधी समाचार आदि विषयों पर सामग्री प्रकाशित होती थी। इसके संपादक मुंशीसदासुख लाल थे।[56] इसकी भाषा को आचार्यों ने सराहा।[57] सन् 1854 में हिंदी एवं बंगला में द्विभाषी ''सुधावर्षण'' का प्रकाशन हुआ जिसके संपादक श्री श्यामसुन्दर सेन थे। इसके आरंभिक दो पृष्ठ हिंदी के एवं शेष दो बंगला के होते थे। यह सन् 1868 तक निकलता रहा।[58] ''सर्वहितकारक'' नामक साप्ताहिक सन् 1855 में आगरा से श्री शिवनारायण ने प्रारंभ किया। इसमें हिंदी व उर्दू दोनों भाषाएं रहती थीं।[59]

सन् 1857 की क्रांति के समय कुछ पत्र निकले, जो प्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता के समर्थक थे।[60] ''दूरबीन'', ''समाचार सुधावर्षण'', मुम्बई समाचार'' जामे जमशेद, दादा भाई नौरोजी का रास्त-गफतार'' और अजीमुल्ला खाँ का ''पयामें आजादी'' आदि इसी कोटि के पत्र थे, जिन्हें ब्रिटिश दमन नीति का शिकार होना पड़ा।[61]

इस प्रकार प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम अर्थात् सन् 1857 के पूर्व कलकत्ता से हिंदी के अनेक पत्र प्रकाशित हुए।[62] सन् 1857 के पूर्व अन्य प्रांतों से भी अनेक पत्रों का प्रकाशन हुआ -जैसे सन् 1839 में प्रथम दैनिक ''नवजीवन'' और सन् 1844 में ग्वालियर शासन द्वारा ''ग्वालियर'' अखबार।[63] सन् 1853 में ''ग्वालियर गजट'' और ''जयाजी प्रताप'' का प्रकाशन भी हुआ।[64]

हिंदी पत्रकारिता का विकास प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम (1857) तक यद्यपि उतनी तेजी से नहीं हुआ, जितनी अपेक्षा थी, फिर भी भारतीय पत्रकारिता की कहानी राष्ट्रीय विकास की कहानी का रूप ले चुकी थी। यद्यपि प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की असफलता से राष्ट्रीय जीवन में एक प्रकार की शिथिलता-सी आ गई थी और भारतीय जनमानस एक अनुत्साही उदासी एवं अवसाद की स्थिति में था। किन्तु 19वीं शती के सांस्कृतिक आंदोलन भारतीय जनमानस को उद्वेलित करने में सहायक सिद्ध हुए। अत: 1857 ई. की क्रांति ने जहाँ भारतीयों को आत्म निरीक्षण के लिए अवसर प्रदान किया, वहीं अब भारत का शासन ताज के अधीन आ गया, किंतु

अँग्रेजों की नीति में (लूट-खसोट एवं दमन की नीति) व्यावहारिक रूप से कोई परिवर्तन नहीं हुआ। क्रांति की विफलता के बाद तो सरकार ने और तीव्रता से दमन चक्र चलाना प्रारंभ कर दिया। इसी समय 13 जून, 1857 को समाचार पत्रों की स्वतंत्रता पर पुन: कुठाराघात हुआ और लार्ड केनिंग द्वारा प्रतिपादित प्रेस संबंधी कानून ''गैंगिग-ऐक्ट'' (गला घोंटू कानून) द्वारा समाचार पत्रों की स्वतंत्रता पर प्रहार किया गया।[65] यद्यपि इस कानून की अवधि मात्र एक वर्ष के लिए थी, फिर भी अनेक भारतीय पत्र इससे प्रभावित हुए।[66]

1857 के संग्राम से पहले के सभी पत्रों का स्वर, चाहे वे अँग्रेजी में प्रकाशित हुए या हिंदी या बंगला में, कंपनी शासन की कमियों पर प्रकाश डालना था, किंतु इस संग्राम ने यह स्थिति बदल दी। 1857 की क्रांति के समय भारतीय पत्रकारिता में दो विचारधाराएं चल रहा थीं। एक तो स्वतंत्रता के समर्थक तथा दूसरे अँग्रेजी साम्राज्य के समर्थक। पहली श्रेणी के पत्र भारतीय भाषाओं में होते थे और सरकार के विरूद्ध बोलते थे, जबकि दूसरी श्रेणी के पत्र अँग्रेजी में थे और सरकारी दमन नीतियों का समर्थन करते थे। सच्चाई तो यह है कि इस समय के भारतीय भाषाई समाचार पत्रों के माध्यम से ही उस भावभूमि का निर्माण हुआ, जिसने प्रथम स्वत्रंतता संग्राम को जन्म दिया।[67]

क्रांति की विफलता ने भारतीय मन: स्थिति को अवसादपूर्ण कर दिया था। इसका प्रभाव हिंदी भाषी पत्रों पर भी पड़ा। दमन, आतंक व अत्याचार के राजनीतिक भूकंप ने हिंदी पत्रकारिता के विकास को कुछ समय के लिए अवरूद्ध कर दिया[68] किंतु दमनकारी प्रेस संबंधी कानून की अवधि समाप्त होने (13जून, 1858) एवं राजनीतिक भूकंप के शांत होने पर पत्राकारिता पुन: मुखरित हुई।[69]

''धर्मप्रकाश'' अहमदाबाद से सन् 1858 में, ''सूरज प्रकाश'' एवं ''ज्ञान प्रकाश'' आगरा से सन् 1861 में और ''प्रजाहित'' इटावा से सन् 1861 में प्रकाशित हुए।[70] सन् 1864 में आगरा से ही ''भारतखंडामृत'' निकला।[71] इस प्रकार स्पष्ट है कि उदयकाल में हिंदी पत्रकारिता का जो अरूणोदय ''उदन्तमार्तण्ड'' के रूप में हुआ[72] उसकी किरणें धीर-धीरे सम्पूर्ण उत्तर एवं पश्चिमी भारत तक पहुँची। युग की माँग के अनुसार अधिकांश पत्र, या तो बंगला-हिंदी के अथवा उर्दू-हिंदी द्विभाषी थे। इस समय के संपादकों का यही मुख्य लक्ष्य था कि पाठकवर्ग की मानसिक स्थिति एवं भाषा को ध्यान में रखकर ही समाचार पत्रों की भाषा बनाई जाए।[73] परिणामस्वरूप जनता की भाषा में अपनी बात कहने के कारण ''भाषायी प्रेस'' ने राष्ट्रीय चेतना के प्रचार में अभूतपूर्व वृद्धि की। वे जन-जन की आस्था और

आकांक्षाओं के प्रतीक बन गए।[74]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र युग :

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र सन् 1867 तक हिंदी पत्रकारिता के विकास की गति धीमी पढ़ी रही।[75] सन् 1857 के प्रथम स्वतंत्रता संग्राम की पराजय से जो अवसाद की स्थिति बन गई थी, इसे तोड़ने में सांस्कृतिक आंदोलन ने मदद की थी। केशव चन्द्र सेन, परमहंस दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद जैसे आध्यात्मिक पुरुषों ने विविध अंधविश्वासों को समाप्त किया, जिसके कारण हिंदी पत्रकारिता को भी नई गतिशीलता प्राप्त हुई। हिंदी भाषी क्षेत्रों में नवजागरण के अग्रदूत भारतेन्दु हरिश्चन्द्र थे।[76] हिंदी पत्रकारिता का भारतेन्दु युग उस दरबारी और रीतिकालीन साहित्य पर एक प्रश्नचिन्ह[77] था, जो एक छोटी-सी सीमा में बंध कर रूग्ण हो गया था। भारतेन्दु युग की पत्रकारिता ने इस सीमा को तोड़ कर राष्ट्रीय विचारों से ओत-प्रोत वास्तविक जनसाहित्य की सृष्टि की।[78]

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने काशी से 1867 में ''कविवचन सुधा'' का आरंभ करके हिंदी पत्रकारिता के नए युग का शुभारंभ किया।[79] स्वाधीनता, स्वदेशी एवं मातृभूमि की सेवा आदि इन्हीं विचारों एवं भावनाओं से अभिभूत इस युग में देश के अनेक क्षेत्रों से हिंदी में कई विचारशील पत्र प्रकाशित हुए। यद्यपि भारतेन्दु युग के आरंभ के साथ ही समाचार पत्रों की स्वाधीनता पर पुन: सरकारी प्रहार हुआ।[80] किंतु भारतीय पत्रकारों ने संक्रांति की इस चुनौती को भी स्वीकार कर पत्रकारिता के विकास के साथ ही भारतीय मानस मनीषा में जागृति उत्पन्न की। ''अल्मोड़ा अखबार'' अल्मोड़ा से, ''प्रयागदूत'' प्रयाग से, ''हिन्दु प्रकाश'' कानपुर से, ''मौर्यगजट'' मेरठ से, ''आर्यदर्पण'' शाहजहाँपुर से, ''प्रेमपत्र'' आगरा से 1872 में, 'हिन्दी दीप्ति प्रकाश'', ''बिहार बन्धु'', कलकत्ता से 1872 में, ''जबलपुर समाचार'' पत्र जबलपुर से 1873 में, ''मर्यादा परिपाटी समाचार'' आगरा से और ''नागरी प्रकाश'' मेरठ से, ''नाटक प्रकाश'' इलाहाबाद से, ''मंगल समाचार'' अलीगढ़ से, 1875 में , ''प्रयाग धर्म प्रकाश'' इलाहाबाद से, और ''आर्यभूषण'' शाहजहाँपुर से 1976 में प्रकाशित हुए।[81]

यद्यपि इन पत्रों का उद्देश्य तात्कालिक सामाजिक एवं धार्मिक व्यवस्था में व्याप्त कुरीतियों, अंधविश्वासों एवं भ्रष्टाचार को प्रकाश में लाकर जातीय सुधार करना था तथापि इनमें राजनीतिक चेतना का भी समावेश रहता था।[82] इसी कारण सरकारी दमन नीति भी साथ-साथ चलती रही। अपने राजनीतिक चरित्र के कारण हिंदी भाषी प्रांतों की देशी पत्रकारिता और सरकार के बीच टकराव का प्रथम संकेत 1873 में प्रकट हुआ। उत्तर प्रदेश के काशी से प्रकाशित ''बनारस अखबार'' और भारतेन्दु के पत्र पर सरकारी प्रहार हुआ।[83] हिंदी पत्रकारिता के दूसरे दौर में पंडित बालकृष्णभट्ट द्वारा सितंबर 1877 में प्रयाग से ''हिन्दी प्रदीप'' मासिक पत्र का प्रकाशन हुआ, जोकि पत्रकारिता की दृष्टि से हिंदी साहित्य के इतिहास में क्रांतिकारी घटना है।[84] बंगाल विभाजन के बाद यह अधिक उग्र हो गया और इसके प्रकाशन के लिए मुद्रणालय की कठिनाइयाँ उत्पन्न हो गईं।[85] अप्रैल 1908 में पं. माधव शुक्ल की 'बम क्या है' शीर्षक कविता के कारण सरकार ने इस पर रोक लगा दी। भट्ट जी ने फरवरी 1910 में इसे पुन: निकाला, परंतु सरकारी कोपदृष्टि के कारण लगभग तैंतीस वर्ष की लंबी यात्रा के बाद, यह बंद हो गया।[86] यह प्रथम राजनीतिक पत्र था, जो अपनी तीव्रतापूर्ण गतिविधियों में अति प्रभावशाली सिद्ध हुआ।[87]

एक ओर जहाँ सरकारी दमन नीति का चक्र पूरे वेग से चल रहा था, वहीं भारत में सूखा, अकाल और द्वितीय अफगान युद्ध के कारण काफी अशांति फैल रही थी। दलित और पराजित भारत में स्वतंत्रता की आकांक्षा पुन: हिलोरें ले रही थी। भारतीय भाषा के समाचार पत्र इसमें प्रमुख अस्त्र के रूप में काम कर रहे थे। उनकी वृद्धि और लोकप्रियता को देखते हुए लॉर्ड लिटन के शासनकाल में भारतीय भाषा के लिए 14 मार्च, 1878 को ''वर्नाक्यूलर प्रेस ऐक्ट'' की घोषणा की गई। यह मद्रास के अतिरिक्त सभी प्रांतों में प्रभावी हुआ।[88] विभिन्न स्थानों में सभाएँ आयोजित कर इस कानून के प्रति क्षोभ प्रकट किया गया।[89]

इस कानून से सर्वप्रथम प्रभावित बंगला भाषा का पत्र ''अमृत बाजार पत्रिका'' था।[90] इस कानून की अवधि

लगभग तीन वर्ष रही। लॉर्ड रिपन के उदारवादी शासनकाल में 1881 में इसे रद्द कर दिया गया। लॉर्ड रिपन ने साधारण कानूनों द्वारा समाचार पत्रों पर नियंत्रण लगाया।[91] यद्यपि प्रेस ऐक्ट के फलस्वरूप भारतीय पत्रकारिता के विकास में अवरोध उत्पन्न हुआ तथापि इन तीन वर्षों में अनेक प्रमुख पत्रों का जन्म भी हुआ जैसे –''भारतमित्र'' 1878 में, ''सार सुधा निधि'' 1879 में, ''उचित वक्ता'' 1880 में और ''हिंदी बंगवासी'' 1890 में।[92] इनके अतिरिक्त इस युग में कुछ जातीय पत्रों का भी प्रकाशन हुआ। ये थे–लाहौर से ''हिन्दु प्रकाश'' 1873 में, ''सत्यामृत'' 1875 में, ''हिन्दुबन्धु'' 1875 में, ''कायस्थ समाचार'' प्रयाग से 1878 में, ''ज्ञानचन्द'' एवं ''आर्यमित्र'' काशी से 1878 में, ''शुभचिन्तक'' 1878 में कानपुर से, ''ज्ञान चन्द्रोदय'' इलाहाबाद से 1879 में, काशी से ''काशीपंच'' 1879 में, ''मोतीचूर'' पटना से 1880 में प्रकाशित हुए। 1881 में ''भारती विलास'' आगरा से तथा 1882 में ''प्रथम समाचार'' इलाहाबाद से, ''देवनागरी प्रचारक'' 1882 में एवं ''बनारस गजट'' काशी से निकले, जोकि राजनीतिक दृष्टि से अत्यंत जागरूक पत्र थे।[93]

हिंदी पत्रकारिता के क्षेत्र में ''ब्राह्मण'' पत्र का विशिष्ट स्थान है। इसे 1883 में पं. प्रताप नारायण मिश्र ने कानपुर से प्रकाशित किया, जिसमें साहित्य एवं राजनीतिक विषयों पर लेख होते थे।[94] 1883 में ही ''भारतेन्दु'' काशी से, ''हिन्दुस्तानी हिन्दु'' उर्दू में लखनऊ से एवं ''साहित्य सुधानिधि'' काशी से प्रकाशित हुए। 1884 में भी दो प्रसिद्ध पत्रों का प्रकाशन हुआ, ये थे– ''भारत–जीवन'' एवं दूसरा ''काशी समाचार''।[95] 1884 में विभिन्न अंचलों से ''कायस्थ व्यवहार'', ''कुलश्रेष्ठ समाचार'', ''गौड़ कायस्थ'' आदि पत्र प्रकाशित हुए।[96] इसी समय ''काशी समाचार'' एवं ''मथुरा समाचार'' नामक पत्रों का भी प्रकाशन हुआ।[97]

अत: स्पष्ट है कि 1885 में कांग्रेस के जन्म से एक वर्ष पूर्व देश में जिस नवीन राजनीतिक चेतना का विकास हो रहा था, फलस्वरूप हिंदी पत्रों के प्रकाशन में भी नए युग का सूत्रपात हो रहा था। लॉर्ड लिटन जैसे प्रतिक्रियावादी शासकों के शासनकाल में दिल्ली दरबार, अफगान युद्ध, वर्नाक्यूलर प्रेस एवं ''आर्म्स ऐक्ट'' जैसे कुकृत्यों के कारण भारतीय जनता का असंतोष उग्र रूप धारण कर चुका था।[98] अँग्रेज शासकों के शोषण–दमन,

भारतीयों के प्रति अपमानजनक व्यवहार एवं रंगभेद की नीति के फलस्वरूप पूरे देश में असन्तोष का वातावरण था जिसके फलस्वरूप अनेक सामाजिक-राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण हुआ।[99]

इल्वर्ट बिल (1883) की प्रतिक्रिया के रूप में अँग्रेजों की स्वार्थप्रियता ने भारतीयों को और अधिक सजग बना दिया और उनमें इस भावना का संचार किया कि राजनीतिक संसार में सफलता के लिए संगठित प्रति क्रियाशीलता आवश्यक है।[100] एलन आक्टोवियन ह्यूम द्वारा 1885 में अखिल भारतीय कांग्रेस की स्थापना हुई।[101] कांग्रेस की स्थापना के मूल में भारतीय पत्रकारिता का विशिष्ट स्थान है। कांग्रेस के प्रथम अधिवेशन का पत्रकारिता से निकटवर्ती संबंध था, क्योंकि राष्ट्रीय संगठन की स्थापना में भारतीय समाचार पत्रों के प्रमुख संपादकों ने भाग लिया।[102] कांग्रेस की स्थापना के फलस्वरूप देश के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक इतिहास में एक नए युग का शुभारंभ हुआ। कांग्रेस की स्थापना के बाद भारतीय पत्रकारिता विशेषत: हिंदी पत्रकारिता में विशेष उत्साह दिखाई पड़ा।

फलस्वरूप हिंदी भाषी क्षेत्रों में हिंदी पत्रकारिता के विकास को नई गति प्राप्त हुई। इस समय के प्रमुख प्रकाशन थे- ''हिन्दी प्रदीप'' प्रयाग से, ''हिन्दोस्तान'' कालांकाकर से एवं ''ब्राह्मण'' कानपुर से। ये पत्र कांग्रेस की नीतियों के समर्थक एवं पक्ष प्रचारक थे।[103] कालांकाकर से राजा रामपाल सिंह का ''हिन्दोस्थान'' उत्तर प्रदेश से प्रकाशित होने वाला हिंदी का प्रथम राजनीतिक पत्र था, जो कांग्रेस की स्थापना के वर्ष प्रकाशित हुआ। इसके प्रधान सम्पादक स्वतंत्रता संग्राम के महान सेनानी पं. मदनमोहन मालवीय थे।[104] इसके संपादकीय नवरत्न थे- श्री अमृत लाल चक्रवर्ती, शशिभूषण चटर्जी, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुंद गुप्त, गोपालराम गहमरी, लाल बहादुर, गुलाबचन्द चौबे, शीतलाप्रसाद उपाध्याय, रामप्रसाद सिंह और शिवनारायण सिंह, जो तत्कालीन मूर्धन्य विद्वानों में से थे।[105]

1885 से 1895 के बीच राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पत्रों का प्रकाशन हुआ यथा- ''भारत प्रकाश'' (मुरादाबाद), ''भारतोदय'', (कानपुर), ''रसिक पंच'', ''प्रयागमित्र'' (इलाहाबाद), ''विचारपत्र'' (इटावा), ''भारत भानु'' एवं ''मित्र'' (बनारस), ''बुद्धि प्रकाश'' (लखनऊ), ''हिन्दीपंच'' (अलीगढ़), ''देवनागरी गजट'' (मेरठ), ''खिचड़ी समाचार'' (मिर्जापुर), ''भारत हितैषी'' (फर्रूखाबाद), ''ब्रजवासी'' (मथुरा), ''भारत प्रताप'' (कानपुर), ''भारतभूषण'' (बनारस) एवं ''स्वतंत्र'' (बनारस) आदि।[106] ''सोमप्रकाश'', ''सुलभ समाचार'', ''आर्यदर्शन'', ''साधना'', ''बंगाली'', ''प्रवासी'' आदि पत्रों का प्रकाशन भी हुआ।[107]

आर्य समाज एवं अन्य धार्मिक आंदोलनों से प्रभावित पत्र ''धर्म प्रचारक पत्र'', ''सत्यार्थ प्रकाश'', ''आर्य समाचार'', ''सत्यधर्म पत्र'', ''सुदर्शन चक्र'', ''राम-पताका'', ''गो-धर्म प्रकाश'', ''गौ-सेवक'', ''ब्राह्मण सामचार'' आदि भी प्रकाशित हुए।[108] 1889 में अजमेर से ''राजस्थान समाचार'' का प्रकाशन हुआ।[109] पं. अमृतलाल चक्रवर्ती के संपादन में ''हिन्दी बंगवासी'' का 1890 में प्रकाशन हुआ।[110] इसी दौरान दैनिक पत्रों का प्रकाशन भी आरंभ हुआ। 1890 में बिहार का प्रथम हिंदी दैनिक ''सर्वहितैषी'' निकला, जो अल्पजीवी ही रहा। उधर बंबई से 1892 में मासिक ''भारतभूषण'', और 1894 में ''प्रभाकर'', ''मुम्बई वैभव'' और ''गुराखी'' नामक दैनिक निकले। 1896 में बंबई से प्रकाशित ''श्री व्यंकटेश्वर समाचार'' अपने समय का उल्लेखनीय पत्र था।[111]

जहाँ एक ओर भारतीय पत्रों पर सरकारी प्रहार दिन पर दिन बढ़ता जा रहा था, वहीं दूसरी ओर राष्ट्रीय पत्रकारिता जनहित एवं मातृसेवा के पुनीत पथ पर दृढ़ संकल्प तथा अदम्य उत्साह के साथ उत्तरोत्तर गातिमान होती जा रही थी। भारतीय पत्रकारिता के विकास की दृष्टि से उन्नीसवीं शताब्दी तेजस्वी पत्रकारिता का युग था। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राजनीतिक चेतना को मुख्यत: हिंदी भाषी क्षेत्रों में विकसित करने में हिंदी पत्रों का महत्वपूर्ण योगदान है। विभिन्न प्रांतों में मुद्रणालय स्थापित हुए। प्रारंभ में आगरा, इलाहाबाद, और वाराणसी पत्रों के प्रकाशन के प्रमुख केंद्र थे। बरेली, नैनीताल, मेरठ, लखनऊ, कानपुर, अलीगढ़, झाँसी, अल्मोड़ा और

मथुरा से भी हिंदी पत्रों का प्रकाशन अत्यंत तीव्र गति से हुआ।[112] हिंदी पत्रकारिता के राष्ट्रीय चरित्र का प्रभाव उर्दू व अन्य भारतीय भाषाओं के पत्रों पर भी पड़ा। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में उर्दू के अनेक पत्र निकले, जो हिंदी में भी प्रकाशित हुए। अवध-अखबार, ''हिन्दोस्तानी'' और पंच (कालांतर में ''अवधपंच'') उर्दू-हिंदी में निकलने वाले पत्र थे। ''अवध अखबार'' व ''हिन्दोस्तानी'' दोनों पत्र कांग्रेस के कट्टर समर्थक थे। ''अवध पंच'' अपने व्यंग्य चित्रों के लिए प्रसिद्ध था।[113]

भारतेन्दु युग में ऐसे अनेक महान पत्रकार भी हुए, जिनका साहित्य उच्च कोटि का था। देशोन्नति के निमित्त सामान्य भाषा के विकास हेतु श्रीकेशवचन्द्र सेन, स्वामीदयानन्द सरीखे अहिन्दी भाषी विद्वानों का भी समर्थन प्राप्त हुआ।[114] ❑

संदर्भ सूची :

1. ● भानावत, संजीव, ''प्रेस कानून और पत्रकारिता, पृष्ठ-111
   ● बूल्जले, रोलैंड ई, भारतीय पत्रकार कला, पृष्ठ-8
   ● ब्रह्मानंद- भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और उत्तर प्रदेश की हिन्दी पत्रकारिता-पृष्ठ-18
2. भानावत, संजीव, पृष्ठ-111
3. ओ मेली, एल. एस. एस.- मार्डन इंडिया एंड दि वेस्ट लंदन, पृष्ठ-188
4. सेन, एस. पी., दि इंडियन प्रेस, पृष्ठ-115-50
5. जोशी, बी. बी. ''हिन्दी पत्रिकाओं में राष्ट्रीय काव्यचेतना'', पृष्ठ-73
6. ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-19
   ● भानावत-संजीव, पृष्ठ-1
7. नटराजन, एस, हिस्ट्री ऑफ इंडियन जर्नलिज्म, पृष्ठ-14
8. जोशी, बी. बी, पृष्ठ-74
9. नटराजन, एस, पृष्ठ-19
10 वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद, समाचार पत्रों का इतिहास, पृष्ठ-32
11. ● नटराजन, एस. पृष्ठ 20
   ● घोष, हेमेन्द्र प्रसाद, दि न्यूज पेपर इन इंडिया, पृष्ठ-39
12. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-20
13. घोष- हेमेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ-39
14. ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-21
   ● भानावत, संजीव-21
15. ● बार्न्स, एम,द इण्डियन प्रेस, पृष्ठ-74
   ● राबटर्स, जी. ई.वेलेजली के अधीन भारत, पृष्ठ-163,164
   ● भानावत, संजीव, पृष्ठ-4
16. नारायण, प्रेम,प्रेस एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया, पृष्ठ-3
17. ● बार्न्स, एम. पृष्ठ. 74-75
   ● भानावत, पृष्ठ-3
18. घोष, हेमेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ-20
19. बार्न्स, एम., पृष्ठ-76
20. ● जोशी, बी. बी., पृष्ठ-76
   ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-22
21. भटनागर, रामरतन, दि राइज एंड ग्रोथ ऑफ हिन्दी जर्नलिज्म, पृष्ठ-21
22. ● जोशी, बी.बी., पृष्ठ-77
   ● भानावत, संजीव, पृष्ठ-7
23. जोशी, बी. बी., पृष्ठ- 76
24. ● त्रिपाठी, कमलापति, पत्र और पत्रकार, पृष्ठ-87
   ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-22
25. पूर्वोक्त-23
26. ● भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-23
   ● कोटनाला, एम.सी. राजा राम मोहन राय एंड इण्डियन अवेकनिंग, पृष्ठ- 103, 104
27. ● ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-23
   ● जोशी, बी. बी., पृष्ठ-77
28. घोष, हेमेन्द्र प्रसाद, पृष्ठ 25, 26
29. ● वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद पृष्ठ-37
   ● ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-26
   ● भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-67
30. ● वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद पृष्ठ-67
   ● ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-26
31. जोशी, बी. बी. पृष्ठ-78
32. तिवारी, रामचन्द्र, पत्रकारिता के विविध रूप पृष्ठ-14, 15
33. जोशी, बी. बी. पृष्ठ-78
34. ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-27
35. ● भानावत, संजीव , पृष्ठ-1
   ● देसाई. ए. आर. पृष्ठ-212
   ● ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-24
36. दि माडर्न रिव्यू, अगस्त 1913, खंड-14, पृष्ठ-133
   देसाई, ए. आर. पृष्ठ-212
37. भानावत, संजीव , पृष्ठ-8
38. बार्न्स, एम. पृष्ठ-115-19

39. नये प्रेस सम्बन्धी कानूनों का शिकार राजाराममोहन राय का फारसी पत्र मीरातउल अखबार हुआ। ब्रह्मानन्द, पृष्ठ-25
40. ● दि माडर्न रिव्यू, खंड-14, अगस्त 1913, पृष्ठ-136
    ● ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-25
41. नटराजन, एस. पृष्ठ-47
42. ब्रह्मानन्द- पृष्ठ-25
43. ● पाणिग्रही, डी. एन., चार्ल्स मेटकॉफइन इंडिया, पृष्ठ-213, 214
    ● भानावत, संजीव, पृष्ठ-13
44. ● यह 10 मई 1829 को प्रकाशित हुआ इसकी भाषा थी - 'भारतखण्ड की ठकुराई और राजनीतिक और 'बनुज' वैपार और विद्याभ्यास के प्रकार और सब देश के समाचार और देशांतरीण विद्या और सुघड़ता के प्रसंगनी के शास्त्रार्थ युक्त यह पत्र बंगला और काम पड़े तो फरसी और हिंदी भाषा के प्रति सतवारे छपेगा जिसके बहुत भाँति के प्रयोजन के मूल सजीव होने की सम्भावना है।''
    ● व्यास, लक्ष्मीशंकर, हिन्दी पत्रकारिता के युग निर्माता, पृष्ठ-9
    ● जोशी, बी.बी., पृष्ठ-79
    ● ब्रहमानन्द- पृष्ठ-27
45. किस तिथि व किसके सम्पादकत्व में यह पत्र प्रकाशित हुआ, ज्ञात नहीं है। - भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-70
46. ● दास, राधा कृष्ण हिन्दी भाषा के सामयिक पत्रों का इतिहास, पृष्ठ-9
    ● मिश्र, कृष्ण बिहारी मिश्र के अनुसार 'बनारस अखबार' सन् 1845 में नहीं अपितु सन् 1844 ई. के जून मास में निकला था और उसके सम्पादक एक बंगाली सज्जन तारामाहन मिश्र थे। - मिश्र, कृष्ण बिहारी, हिन्दी पत्रकारिता : जातीय चेतना एवं खड़ी बोली साहित्य की निर्माण भूमि, पृष्ठ-31
47. ● अम्बिका प्रसाद वाजपेयी ने 'मार्तण्ड' नामक पत्र का उल्लेख किया है। 1 जून 1846 को कलकत्ते से 'इंडियन-सन' प्रेस से 'मार्तण्ड' नामक साप्ताहिक पत्र पाँच भाषाओं में प्रकाशित हुआ। - मिश्र, कृष्ण बिहारी, पृष्ठ-34
    ● जोशी, बी. बी. पृष्ठ-78
48. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-10
49. जोशी, बी. बी. पृष्ठ-93
50. पूर्वोक्त, पृष्ठ-79
51. ● व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-23
    ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-29
52. जोशी, बी. बी. पृष्ठ-79
53. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-27
54. वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद पृष्ठ-110
55. ● जोशी, बी. बी. पृष्ठ-79
    ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-27
56. ● व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-24
    ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-28
    ● 1853 के अंक की भाषा अत्यन्त परिपक्व थी, ''प्रगट हो कि अब इस देश में एक लोहे की सड़क बन गई है जिस पर विगत 4 तारीख से पंथियों का आवागमन आरम्भ हो गया है और जो यह लोहे की सड़क खुली है, तो बम्बई से थाने तक बनी है।
    ● नागर, अमृतलाल, ''पुरानी कलम की धार'', उत्तर प्रदेश ''मासिक पत्रिका' (पत्रिकारिता, अंक मार्च-अप्रैल, 1976, पृष्ठ-15)
57. जोशी, बी. बी. पृष्ठ-79 (आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एवं सम्पादकाचार्य अम्बिका प्रसाद वाजपेयी)
58. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ - 10
59. वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद पृष्ठ-118
60. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-29
61. ● बार्न्स, एम. पृष्ठ -252-258
    ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-30
62. बार्न्स, एम., पृष्ठ -256-58
63. जोशी, बी. बी., पृष्ठ-92
64. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ- 10
65. ● बार्न्स, एम. पृष्ठ -252-55
    इस गलाघोटू कानून द्वारा सरकार मुद्रणालयों की स्थापना पर नियंत्रण,, वितरण पर प्रतिबंध लगाना एवं लाइसेंस अनिवार्य कर दिया गया था।
    ● भानावत, संजीव, पृष्ठ-16
66. बार्न्स, एम. पृष्ठ -256
67. ● भटनागर, रामरतन,पृष्ठ-76
    ● ब्रह्मानन्द, पृष्ठ-29 - 'उस समय के अधिकतर पत्र प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता के समर्थक थे।'
68. ब्रह्मानन्द, पृष्ठ-30
69. भानावत, संजीव, पृष्ठ-17
70. ब्रह्मानन्द, पृष्ठ-30
71. पूर्वोक्त, पृष्ठ-30,31
72. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ- 20
73. जोशी, बी. बी., पृष्ठ-79
74. भानावत, संजीव, पृष्ठ-18
75. नटराजन, एस. पृष्ठ-104
76. जोशी, बी. बी., पृष्ठ-138

77. मिश्रा, कृष्ण बिहारी ,पृष्ठ-92
78. शुक्ल, रामचन्द्र, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ-308 'भारतेन्दुयुगीन लेखकों की यह विशिष्टता थी कि 'प्राचीन और नवीन के संधि स्थल पर खड़े होकर वे दोनों का जोड़ इस प्रकार मिलान चाहते थे कि नवीन प्राचीन का प्रवर्धित रूप प्रतीत हो, न कि ऊपर से लपेटी वस्तु।''
79. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-31
80. 1867 के प्रेस एण्ड रजिस्ट्रेशन ऑफ बुक्स ऐक्ट' के द्वारा पत्रों एवं पुस्तकों के मुद्रण एवं प्रकाशन पर पुन: नियंत्रण लगाया गया।
81. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-102, 103
82. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-33
83. ''बनारस अखबार' को पुलिस के संबंध में गलत टिप्पणी प्रकाशित करने के कारण एक हजार रूपये जुर्माना और 1874 में भारतेन्दु के पत्र की सहायता बंद करने के साथ ही उनको (हरिश्चन्द्र चन्द्रिका 1874) प्रदत्त आनरेरी मैजिस्ट्रेट के अधिकारों से वंचित किया गया।
84. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-478
85. पूर्वोक्त, पृष्ठ-478, 479
86. वैदिक, वेदप्रताप, हिन्दी पत्रकारिता : विविध आयाम,
87. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-102
88. ● The vernacular press Act 1870 No. IX of 1878 An Act for the better control of publications in oriental languages. बार्न्स, एम. , पृष्ठ-280
    ● इस कानून के द्वारा जिला मेजिस्ट्रेटों या पुलिस कमिश्नरों को ऐसी शक्ति प्राप्त हो गई कि वे किसी भी समाचार पत्र से जमानत ले सकते थे या किसी भी प्रकाशित सामग्री को जब्त कर सकते थे।
    ● नटराजन, एस. पृष्ठ- 341-47
    ● भानावत, संजीव, पृष्ठ-20 , 21
89. बनर्जी, सुरेन्द्रनाथ, ए नेशन इन मेकिंग, पृष्ठ-58
90. यह पत्र था ''अमृत बाजार पत्रिका'' जो बंगाल के जैसोर जिले से निकलता था। 14 मार्च को उक्त कानून घोषित किया गया, उसके एक सप्ताह बाद 21 मार्च 1878 को पत्रिका का जो अंक प्रकाशित हुआ, वह विशुद्ध अंग्रेजी था। रातोरात यह अंग्रेजी भाषा का साप्ताहिक हो गया।
    ● त्रिपाठी , कमलापति, पृष्ठ-102
91. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-35
92. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-32 , 36
93. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-485
94. जोशी, बी. बी., पृष्ठ-139
    भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-485
95. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-36
96. वाजपेयी, अम्बिका प्रसाद पृष्ठ-190
97. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-36
98. सिंह, अयोध्या, भारत का मुक्ति संग्राम पृष्ठ-56-60
99. ● ब्रिटिश इंडियन एसोसिएशन (1851-52), बाम्बे एसोसिएशन (1852), मद्रास नेटिव एसोसिएशन (1852), इंडियन लीग (1875) इंडियन एसोसिएशन (1876), बाम्बे प्रेसीडेन्सी एसोसिएशन (1885)
    ● बृह्मानन्द, पृष्ठ-37
100. ● मजूमदार , ए0 सी. , इंडियन नेशनल इवाल्यूशन,
    ● ब्रह्मानंद, पृष्ठ-37
101. मेहरोत्रा, एस. आर, दि इमरजैंसी ऑफ द इंडियन नेशनल कांग्रेस, अध्याय - 4, पृष्ठ - 146-229
102. ● नटराजन, जे. पृष्ठ-98
    ● पट्टाभि, सीता रमैया, कांग्रेस का इतिहास, पृष्ठ-15
    ● बेसेंट, एनी., हाउ इंडिया फाइट फ्रॉर फ्रीडम, पृष्ठ-5,6
103. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-485
104. वैदिक, वेद प्रताप, पृष्ठ-123
105. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-50
106. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-143-44, 742-51
107. बार्न्स, एम. पृष्ठ-276
108. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-39
109. व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-60
110. पूर्वोक्त , पृष्ठ-61
111. ● तिवारी, -रामचन्द्र, पृष्ठ-34
    ● व्यास, लक्ष्मीशंकर, पृष्ठ-62
112. ब्रह्मानंद, पृष्ठ-39
113. भटनागर, रामरतन, पृष्ठ-678
114. ● तिवारी,-रामचन्द्र, पृष्ठ-34
    ● शर्मा, श्रीपाल, हिन्दी पत्रकारिता-राष्ट्रीय नवउद्बोधन पृष्ठ-1

एसो. प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
एम.एम. (पी.जी.) कॉलेज मोदीनगर
गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश)

आलेख

'ब्रह्मपुत्र' आंचलिक उपन्यास के रूप में : एक अध्ययन

✍ डॉ. सत्यजित कलिता

भूमिका :

देवेंद्र सत्यार्थी हिंदी, उर्दू और पंजाबी भाषाओं के प्रख्यात विद्वान तथा साहित्यकार हैं। उन्होंने देश के कोने-कोने की यात्रा कर वहाँ के लोक-जीवन, गीतों और परंपराओं को आत्मसात किया और उन्हें पुस्तकों और वार्ताओं में संग्रहीत कर दिया। इसी यात्रा की एक उपज है 'ब्रह्मपुत्र'।

आंचलिक उपन्यास क्या है? आंचलिक शब्द 'अंचल' से बना है, जिसका अर्थ होता है- कोई स्थान विशेष, अर्थात भौगोलिक सीमाओं द्वारा घिरा हुआ किसी जनपद का क्षेत्र। अंचल एक गाँव, शहर, मोहल्ला अथवा किसी वन की उपत्तिका कुछ भी हो सकता है। और आंचलिक उपन्यास उन्हें कहा जाता है, जिसमें किसी स्थान-विशेष का संपूर्ण जन-जीवन अपनी संपूर्ण विशेषताओं के साथ प्रतिबिबिंत हो उठता है।

शिव कुमार मिश्र के अनुसार, ''आंचलिक उपन्यास में देश के किसी भू-भाग के किसी विशेष अंचल के लोगों को स्थान मिला, उनके संघर्षों, उनके दैनंदिन जीवन, उनकी आशा-निराशाओं, विजयों-पराजयों के चित्र प्रस्तुत किए, जो उन उपन्यासकारों की स्वस्थ जीवन दृष्टि के कारण इतके अनूठे व भव्य प्रतीत हुए कि उनके एक विशेष भू-भाग से संबंधित होने पर भी संकीर्णता न आने पाई, कुछ विशेष प्रकार के लोगों की जीवन कथा होने पर भी जो सर्वग्राह्य बने रहे और हमारे प्रबुद्ध पाठक वर्ग ने उन्हें सहर्ष अपनाया।''[1]

आंचलिक उपन्यासकार राजेन्द्र अवस्थी के अनुसार, ''हमारे देश के विभिन्न अंचल ही हमारी संस्कृति के प्रतीक हैं। शहरों ने हमारी संस्कृति को कभी प्रभावित नहीं किया और न ही उनके बलबूते एक विराट सांस्कृतिक धारा बन पाई। आंचलिक कथा साहित्य हमारा सांस्कृतिक उपादान है और यदि विभिन्न अंचलों पर किसी प्रकार का सामूहिक प्रयास किया जाए तो उससे हमारी बिखरी संस्कृति का एकीकरण हो सकता है।''[2]

किसी अंचल अथवा प्रदेश विशेष का अपने उपन्यासों की कथाभूमि बनाकर वहाँ के रीति-रिवाज, पर्व-त्योहार, आचार-विचार को प्राय: वहीं की बोली में लिपिबद्ध करना आंचलिक उपन्यासों की प्रमुख विशेषता है।

आंचलिक उपन्यास के प्रमुख तत्व :

आंचलिक उपन्यास में निम्नलिखित तत्वों का निर्वाह होना चाहिए :-

1. किसी अंचल (क्षेत्र) विशेष की भौगोलिक (प्राकृतिक) स्थिति एवं सुषमा का बिंबात्मक वर्णन।

2. अंचल-विशेष पर आधारित कथानक अथवा कथानक का आधार अंचल विशेष।

3. स्थानीय लोक-संस्कृति का समग्र चित्रण, जिसमें स्थानीय माटी की महक हो।

4. सामाजिक, राजनीतिक, आधि वैदिक चेतना आदि विभिन्न स्थितियों का पुर्ण चित्रण।

5. जन चेतना का सशक्त अंकन।

6. स्थानीय भाषा का संतुलित एवं स्वाभाविक प्रयोग।

7. स्थानीय वातावरण का वर्णन- इसके अंतर्गत विशेष रूप से स्थानीय लोक गीतों की मादक अनुगँज का चित्रण।[3]

आंचलिक उपन्यास के रूप में ब्रह्मपुत्र :

'ब्रह्मपुत्र' उपन्यास को आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी जाए या नहीं, यह विवाद का विषय है। परंतु इस आंचलिक उपन्यास के तत्वों और विशेषताओं को ध्यान में रखकर यदि देखा जाय तो 'ब्रह्मपुत्र' को आंचलिक उपन्यास की संज्ञा दी जा सकती है, क्योंकि इसमें भी लेखक ने देश के एक विशेष भू-भाग के कुछ विशेष लोगों की कथा कही है। उसकी दृष्टि हिंदी-भाषी प्रदेश को पार करके एक अहिंदी भाषी प्रांत के ऐसे लोगों के जीवन की ओर गई है, जिसका उस प्रांत में भी अपना एक विशिष्ट स्थान है और वह है- ब्रह्मपुत्र के किनारे बसने वाले असम के जन-साधारण का जीवन, उन नदी-पुत्रों का जीवन जो सदा ब्रह्मपुत्र के उल्लास और कोप का लक्ष्य बनते हुए भी उसके सम्मुख नतमस्तक रहे हैं; जिनके हृदय में उस ब्रह्मपुत्र के लिए प्रगाढ़ श्रद्धा है, जो उनका जीवन, उनकी जीविका, उनकी मृत्यु, उनका काल सब कुछ है, ब्रह्मपुत्र का जिनके जीवन के साथ उतना ही घनिष्ठ संबंध है, जितना धरती के साथ किसान का, पुत्र के साथ उसके माता-पिता का होता है और उसके संबंध में उनकी विविध हर्ष, शोक, भय, श्रद्धा, ममता आदि

"हम तो मछुए हैं। हमारा काम यही है- जाल फेंकें मछलियाँ पकड़ें, आप खायें दूसरों को खिलायें। धन्य है ब्रह्मपुत्र! धन्य है ब्रह्मपुत्र की मछलियाँ! देश गुलाम था, तो भी मछलियाँ जाल में फँसती रहीं। अब देश आजाद है तो भी बराबर जाल में फँस रही हैं मछलियाँ।"[6] इससे स्थानीय वातावरण खूब उभरा है। कथा अथवा भाषा अवश्य दिसांगमुख की है पर उसे दिसांगमुख की नहीं ब्रह्मपुत्र के किनारे बसनेवाले समस्त नदी पुत्रों की है।

की भावनाएँ उनके गीतों में उतराई पड़ती हैं-

ब्रह्मपुत्र कासते, बरहमथुरी जुपी,
आमि खरी लोवा ठाइ;
उटूवाई निनिवा, ब्रह्मपुत्र देवता,
तामोल दी मानोता नाइ।[4]

(असमीया बिहूगीत जो उपन्यास में व्यवहृत है।)

(ब्रह्मपुत्र के किनारे बरहमथुरी गाछ है, जहाँ हम ईंधन (लकड़ी) लाने जाते हैं। इसे लील (बहा) मत लेना, ब्रह्मपुत्र देवता! हममें इतनी भी क्षमता नहीं है कि हरि सुपारी (तांबुल-पान) से तुम्हारी अर्चना करें।)

देवेन्द्र सत्यार्थी जी ने एक अहिंदी भाषी प्रांत के जनसाधारण के एक विशेष वर्ग के जीवन का जो चित्र उपन्यास में प्रस्तुत किया है, वह उनकी विशाल दृष्टि का परिचायक तो है ही, साथ ही उन नदी पुत्रों के जीवन के गहन अध्ययन और सूक्ष्म पर्यवेक्षण का भी प्रमाण है, जिसे उन्होंने महीनों असम में घूम-फिरकर किया है। उपर्युक्त कारणों से ही हम 'ब्रह्मपुत्र' उपन्साय को आंचलिक उपन्यास की श्रेणी में रख सकते हैं।

कथावस्तु :

ब्रह्मपुत्र उपन्यास की कथावस्तु में उतना आकर्षण नहीं है, जितना उसमें चित्रित नदी पुत्रों के जीवन के विविध उतार-चढ़ाव से पूर्ण प्रसंगों में, उनके राजनीतिक संघर्षों में, उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक चित्रों में और वही सब मिलाकर उपन्यास की कथावस्तु की सारी शिथिलता को ढक लेते हैं। क्रिया तो साधारण ही है, उस कथा के सब पात्रों के जीवन के जो चित्र लिपटे हुए हैं वही पाठकों को आनंदित किए रहते हैं। नदी-पुत्रों के जीवन की एक-एक रेखा को लेखक ने एक कथा के माध्यम से उजागर किया है। यह असमीया नदी-पुत्रों के जीवन की महान गाथा है। स्वतंत्रता के पूर्व से लेकर भारत की स्वाधीनता के पश्चात तक कथा का विस्तार है, जिसमें अनेक छोटी-बड़ी घटनाओं ने मिलकर इस भू-भाग के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के उत्थान-पतनों को उजागर किया है। हिंसा-अहिंसा से लेकर भारत के राष्ट्रीय नवनिर्माण तक के न जाने कितने प्रश्नों पर लेखक ने पात्रों के माध्यम से प्रकाश डाला है। लेखक की दृष्टि असम के लोक जीवन के उद्घाटन की ओर रही है।

पात्र-योजना :

उपन्यास की कथावस्तु का विकास उसमें समाहित पात्रों के माध्यम से किया जाता है। ब्रह्मपुत्र में कल्याण, भगत, नीलमणि, राखाल काका, अब्दुल कादिर, धर्मानन्दी जैसे बूढ़े पात्र भी हैं और देवकांत, अतुल, नीरद, मुकन, प्रभात, जादू जैसे युवक भी। विभिन्न अवस्थाओं के और भी न जाने कितने पात्र हैं, जो सब मिलकर असमीया लोक जीवन के चित्रण का माध्यम बनते हैं। इन पात्रों की अपनी-अपनी प्रतृत्तियाँ और विचार हैं- कुछ को अपने स्वयं के झंझटों और कार्यों से फुरसत नहीं, कुछ अधिक जाग्रत हैं और देश की विविध समस्याओं से लेकर अपने गाँव के छोटे-बड़े प्रश्नों पर यदा-कदा अपने विचार

प्रकट करते हैं। संस्कृति तथा सामूहिक मनोवृत्ति के चित्रण में रत रहने के कारण आंचलिक उपन्यास पात्र-रूप में कुछ व्यक्तियों को उभार कर उनके चरित्र निरूपण को अपना उद्देश्य नहीं बना लेता, वरन वहाँ अंचल को व्यक्त करने वाली गतिशील पात्र-चित्रमाला का आयोजन करता है।

युवक वर्ग सभी क्रियाशील है। बूढ़ों के समुदाय में राखाल काका की दृष्टि कुछ अधिक व्यापक है, शेष सभी पात्र अपने ही जीवन में केंद्रित रहने वाले हैं। बूढ़ा धर्मानन्दी भी निशिष्ट व्यक्तित्व के हैं। कल्याण, भगत वैष्णवों के प्रातिनिधि हैं और नीलमणि पुत्र अतुल को गाँवबुढ़ा बनाकर बाप-दादों की परंपरा को कायम रखना चाहता है। घन सिंह और रतन नापित की दुकान-गाँव का समाचार केंद्र हैं। देवकांत क्रांतिकारी है। उसकी कथा की वस्तुत: उपन्यास की कथा को भी गति देती है, उसका प्रभाव ही दिसांगमुख व उसके आसपास फिरंगी सरकार के लिए सिर दर्द बनने वाले कतिपय कार्यों को जन्म देता है, जिसके विविध परिणाम होते हैं। वही कथा को 'क्लाइमेक्स' तक पहुँचाता है, जब उसकी गिरफ्तारी को लेकर दिसांगमुख वालों और फिरंगी सरकार की मिलिट्री के बीच जमकर गोलियाँ चलती हैं। दिसांगमुख थाने का दारोगा गोपीनाथ अपने कतिपय सिपाहियों सहित इस संघर्ष में देवकांत की ओर से जूझकर, अपनी बलि देकर अपने पिछले कृत्यों की कालिमा को धो जाता है और अत्याचारी नारायण दारोगा से सर्वथा विपरीत उदाहरण प्रस्तुत करता है। वस्तुत: देवकांत की कथा ही फैलकर अधिकांश पात्रों को अपनी लपेट में लेती हुई, कथानक की अनेक घटनाओं को जन्म देकर, उनमें शनै: शनै: तीव्रता उत्पन्न करके एक विषादमय अंत को जन्म देती है। पर यह अंत सदा विषादमय ही नहीं रहता, जीवन फिर अपनी राह पर चल पड़ता है। विभिन्न पात्रों के माध्यम से दिसांगमुख के जन-जीवन अनेकानेक दुर्बलताएँ और विशेषताएँ उभरती हैं। आजादी और भूकंप भी चित्रित किया गया है। वहाँ के लोगों की पारस्परिक फूट, असमीया, मीरी व नेपालियों का संघर्ष, सब कुछ साफ-साफ चित्रित किया गया है। नीरद लेखक है, जो ब्रह्मपुत्र पर कोई पुस्तक लिख रहा है, अतुल अहिंसावादी है। पत्नी जुनतारा का मोह ही कदाचित इसे अहिंसावादी बना देता है; कारण देवकांत का साथ देने के अर्थ था जुनतारा का बिछोह और जो उसे स्वीकार न था। नीरद भी अहिंसात्मक सत्याग्रह में भाग लेता है। उसकी ब्रह्मपुत्र पर लिखी जाने वाली पुस्तक भी अंत तक प्रकाशित नहीं हो पाती, जिसके बारे में उसे आशा थी कि शायद उस पर उसे नोबेल पुरस्कार भी मिल जाए। माजुली का सारा नवयुवक वर्ग संघर्षशील है; जादू, मुकन, प्रभात सभी क्रियाशील पात्र हैं। अंधा सूरदास माजुली के पात्रों में सबसे अधिक आकर्षक है। शेष पात्र सामान्य कोटि के हैं, जो असमीया लोक जीवन के रिक्त स्थानों की पूर्ति करते हैं।

नारी-पात्रों में प्रमुख जुनतारा, आरती व हाउसन साहब की पुत्री लिली हैं। प्रारंभ में अनंत यौवना जुनतारा सबके आकर्षण का केंद्र बिंदु रही। विवाह के पश्चात ही उसका जीवन पति व परिवार तक ही सीमित हो जाता है और वह अपनी एक, दो, तीन, चार, संतानों का पालन-पोषण करती हुई एक सामान्य नारी की भाँति जीवन यापन करती है। दूसरी ओर धर्मानन्दी की पुत्री आरती अंत तक संघर्षशील रहती है। लिली का चरित्र सामान्य है। नीरद की पत्नी बनकर वह अपने असम प्रेम को चरितार्थ कर देती है। नारी पात्रों में आरती प्रभावशाली रही। असम के जन-जीवन की गायिका के रूप में चित्रित यह चरित्र 'ब्रह्मपुत्र' का एक कुशल और आकर्षक चरित्र है।

भाषा-शैली :

राजेन्द्र अवस्थी के अनुसार आंचलिक उपन्यास की कथा सूत्र की सरसता को रोकने वाला हर तत्व बाधक है- यह चाहे भाषा से संबंध रखता हो अथवा बोली से। उसमें स्थानीय शब्दों का प्रयोग उस सीमा तक होना चाहिए जहाँ तक के भाषा में अनगढ़पन और अनपच उत्पन्न न करे।[5] इस दृष्टि से ब्रह्मपुत्र उपन्यास एक सफल उपन्यास है। भाषा साफ और प्रवाहमयी है। बीच-बीच में असम के लोक-जीवन को उभारने

वाले न जाने कितने स्थानीय शब्दों का व्यवहार किया गया है, जो कर्णप्रिय तो हैं ही वातावरण की यथार्थता को बल भी प्रदान करते हैं। शब्द ही नहीं, कहीं-कहीं तो असमीया लोक-भाषा के वाक्य के वाक्य उठाकर रख दिए गए हैं। अधिकाशत: ये कहावतें और मुहावरे ऐसे ही हैं, जिनमें प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से 'ब्रह्मपुत्र' समाया हुआ है। भाषा की ये विशेषताएँ अन्य स्थानीय वातावरण से मिलकर असम का एक से एक सजीव व यथार्थ चित्र प्रस्तुत करती हैं।

बूढ़ा धर्मानन्दी के शब्दों में-

''हम तो मछुए हैं। हमारा काम यही है- जाल फेंकें मछलियाँ पकड़ें, आप खायें दूसरों को खिलायें। धन्य है ब्रह्मपुत्र! धन्य है ब्रह्मपुत्र की मछलियाँ! देश गुलाम था, तो भी मछलियाँ जाल में फँसती रहीं। अब देश आजाद है तो भी बराबर जाल में फँस रही हैं मछलियाँ।''[6] इससे स्थानीय वातावरण खूब उभरा है। कथा अथवा भाषा अवश्य दिसांगमुख की है, पर उसे दिसांगमुख की नहीं, ब्रह्मपुत्र के किनारे बसने वाले समस्त नदी पुत्रों की है।

निष्कर्ष :

प्रस्तुत उपन्यास 'ब्रह्मपुत्र' में आंचलिक उपन्यास के सभी गुण विद्यमान हैं। असमीया लोक जीवन का सजीव चित्र है। कथानक, चरित्र चित्रण, देशकाल और वातावरण योजना, भाषा शैली, संवाद योजना आदि सभी दृष्टियों से आंचलिक उपन्यास के सभी गुण इसमें समाहित हैं।

उपन्यास का प्रत्येक पृष्ठ स्थानीय रंगत से ओत-प्रोत है। प्रस्तुत उपन्यास सत्यार्थी जी की हिंदी कथा-साहित्य को एक महत्वपूर्ण देन है। आज हमें ऐसे ही और उपन्यासों की आवश्यकता है, जो हमारे देश के विभिन्न अंचलों के लोक-जीवन के चित्र हों, जिनको पढ़कर हम भारत के विशाल भू-भाग में बसने वाले भिन्न-भिन्न निवासियों के जीवन से परिचित हो सकें। ब्रह्मपुत्र उपन्यास द्वारा सत्यार्थी जी ने असम के नदी-पुत्रों के लोक जीवन को एक कथा के रूप में चित्रित कर सजीवता प्रदान की है। उसके लिए एक असमीया होने के नाते हम उन्हें कृतज्ञता ज्ञापित करते हैं। ❑

संदर्भ :

1. मिश्र शिवकुमार - आलोचना - पृ. 119
2. अवस्थी राजेन्द्र - मैला आँचल समीक्षा - पृ. 1
3. चतुर्वेदी डॉ. राजेश्वर प्रसाद - साहित्यिक निबंध - पृ. 279
4. सत्यार्थी देवेन्द्र - ब्रह्मपुत्र - पृ. 307
5. अवस्थी राजेन्द्र - मैला आँचल समीक्षा - पृ. 1
6. सत्यार्थी देवेन्द्र - ब्रह्मपुत्र - पृ. 287

विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग
गुवाहाटी महाविद्यालय
बामुनीमैदान, गुवाहाटी (असम)
फोन : 9864030513
drsatyajitkalita@gmail.com

आलेख

हिंदी के 'परती परिकथा' और असमीया के 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में चित्रित ग्राम्य जीवन का तुलनात्मक अनुशीलन

✍ डॉ. दिनेश साहू

सार-संक्षेप :

भारत एक विशाल आबादी वाला देश है, जिसका एक बड़ा हिस्सा अभी भी गाँवों में रहता है। ग्रामीण जीवन के प्रति साहित्य का नजरिया बस आंचलिकता भर का नहीं है। भारतीय समाज और संस्कृति के साथ भी ग्रामीण चेतना का संबंध अन्योन्याश्रित है। अधिकतर भारतीय रचनाकारों ने अपनी-अपनी रचनाओं में इस ग्राम्य जीवन से संबंधित विविध रीति-रिवाज, आचार-विचार, खान-पान, जीवन शैली, आस्था-विश्वास, तीज-त्योहार, जाति-प्रथा, भौगोलिक परिवेश, रूढ़ि-परंपरा आदि की विशेषताओं को दर्शाया है। इसी तरह हिंदी में फणीश्वरनाथ रेणु ने 'परती परिकथा' और असमीया में नवकांत बरुवा ने 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में ग्रामीण जीवन से जुड़े सभी पहलुओं को जीवंत रूप में दिखाने का प्रयास किया है। दोनों उपन्यासकारों ने ग्रामीण जीवन के समस्त दिशाओं को उपन्यास में उकेरकर प्रस्तुत किया है। ग्रामीण जीवन के यथार्थ का दोनों उपन्यासकारों ने जिस बारीकी से चित्रण किया है, मानो उसमें ग्रामीण आत्मीयता का गंध और सजीव होकर मुखरित हुआ है। 'परती परीकथा' में दर्शाए गए ग्रामीण परिवेश ने परानपुर गाँव की सुंदरता को और जीवंत कर दिया है। रेणु ने ग्रामीण समाज को हिंदी साहित्य के मुख्य स्वर के रूप में पहचान दिलाने में मुख्य भूमिका निभाई है। 'कपिली परिया साधु' में वर्णित कपिली न केवल एक नदी है, बल्कि वहाँ के ग्रामीणों के लिए माँ के समान है। इनके सुख-दुख का संबंध कपिली नदी से जुड़ा हुआ है। दोनों रचनाकार शिक्षा के महत्व से वाकिफ हैं, इसीलिए वे ग्रामीण जीवन में व्याप्त कुसंस्कार-अंधविश्वास, गरीबी, जादू-टोना, जात-पात में भेदभाव आदि का खात्मा शिक्षा से ही करना चाहते हैं। रेणु गाँवों को राजनीतिक चेतना से संपन्न बनाने के पक्षधर थे और उन्होंने अपने साहित्य में इसका चित्रण भी किया है। दोनों उपन्यासों के भौगोलिक परिवेश और समाज-संस्कृति में सामान्य अंतर के बावजूद विविध क्षेत्र में एकरूपता के दर्शन होते हैं।

बीज शब्द :

ग्राम्यांचल, यथार्थपरक, भौगोलिक परिवेश, संकीर्णता, निदर्शन, परानपुर, कपिली, संस्कृति, तांत्रिक, अंधविश्वास, तुलनात्मक, समानता-असमानता ।

1. प्रस्तावना :

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। आरंभिक अवस्था में मानव प्राकृतिक संकटों से बचने के लिए सामाजिक जीवन की उपयोगिता और आवश्यकता को समझकर

परिवार बनाकर रहने लगा। धीरे-धीरे परिवार बढ़ता गया और समाज का निर्माण हुआ। मनुष्य हो या पशु- हर किसी का अपना समाज होता है। जब से मनुष्य अपना घुमक्कड़ जीवन त्याग करके परिवार के साथ रहने लगा तभी से ग्राम अस्तित्व में आए हैं। धीरे-धीरे आदिम मानव को कृषि की जानकारी प्राप्त हुई तथा एक साथ रहने के कारण उन्हें बहुत समस्याओं का समाधान मिलने लगा। तब से वे एकजुट होकर घर बनाकर स्थायी रूप से एक जगह रहने लगे, जिससे स्थायी जीवन की नींव पड़ी और ग्राम्य जीवन का आरंभ हुआ। संसार की अधिकांश जनसंख्या आरंभ से लेकर अभी तक गाँवों में ही बसी है। गाँव स्थायी जीवन का परिचायक है। दूसरी और स्थायी गाँव की उत्पति के साथ कृषि का भी प्रत्यक्ष संपर्क है। (मुखर्जी 2015:542) अत: स्थायी जीवन से ही गाँव का निर्माण हुआ है। जब मनुष्य ने कृषि करना प्रारंभ किया तथा एक स्थान पर स्थायी रूप में रहने लगा तब ग्राम का विकास हुआ। ग्राम का इतिहास बहुत प्राचीन है। किसी भी समाज को जानना है तो उस समाज के गाँव का अध्ययन अनिवार्य है। गाँव मानव के सामूहिक जीवन का प्रथम स्तर है। मनुष्य सबसे पहले सामूहिक रूप से गाँव में ही रहना प्रारंभ किया था। बृहत हिंदीकोश में 'ग्राम' के पर्यायवाची शब्दों के रूप में बस्ती, गाँव, जाति-समूह (श्रीवास्तव 2016:404) और हिंदी शब्दसागर में छोटी बस्ती, मनुष्यों के रहने का स्थान, आबादी, जनपद, ढेर (दास 1920:137) दिया गया है।

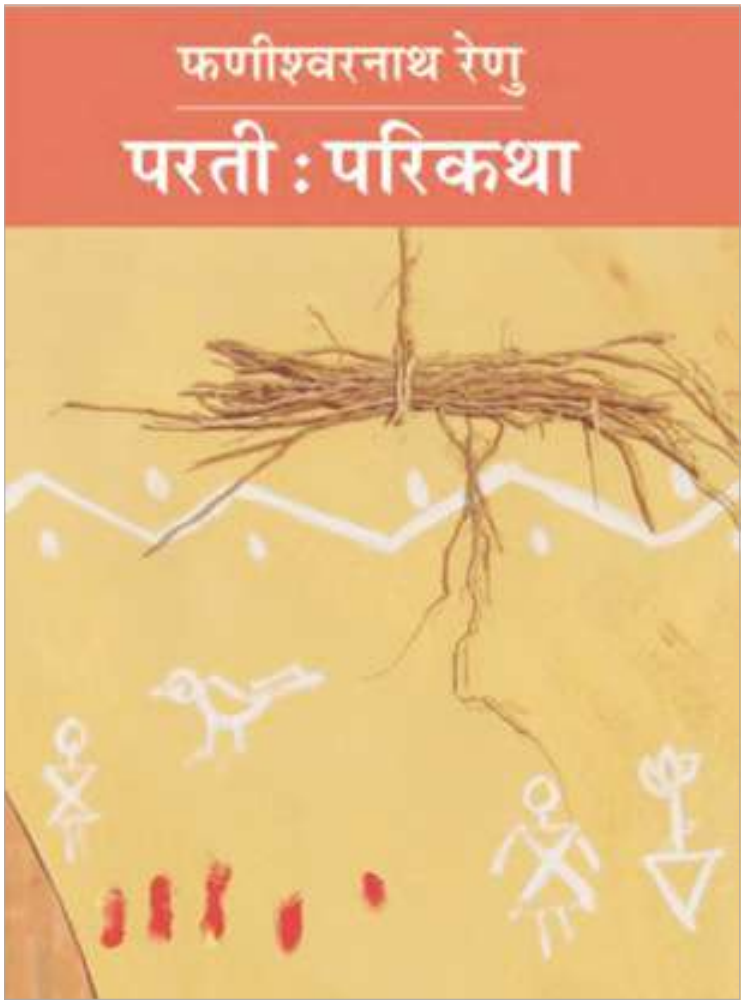

रवीन्द्रनाथ मुखर्जी कहते हैं कि गाँव एक ऐसासमुदाय भी है, जहाँ के प्राथमिक या घनिष्ठ समूह एक-दूसरे से आतंरिक रूप से अंत:क्रिया करते रहते हैं और अपने सदस्यों के व्यवहार को नियंत्रित तथा निर्देशित करते रहते हैं। इसी कारण गाँव के सांस्कृतिक और सामाजिक जीवन में विभिन्नता के स्थान पर बहुत कुछ समानता देखने को मिलती है। (मुखर्जी 2015:10) ग्राम की जो प्रारंभिक स्थिति है, वह मूलत: आदि मानव के स्थायित्व होना ही गाँव की उदय की प्रक्रिया को उद्घाटित करता है। आदि काल से ही गाँव भारतीय समाज जीवन का आधारभूत एवं महत्वपूर्ण अंग रहा है। कंदमूल, फल, जंगली जानवर के मांस को आहार के रूप में ग्रहण कर जीवन-यापन कर रहे आदि मानव धीरे-धीरे कृषि की ओर आकृष्ट हुए। उन्हें एक स्थान पर रहने की

आवश्यकता महसूस हुई। मनुष्य की प्रवृत्ति समूह में रहने की बन गई तथा वे एक सामाजिक हिस्सेदार बनते गए। धीरे-धीरे वह सभ्य, सुसंस्कृति एवं आदर्श आचरण करने वाले बन गए। कई परिवार मिलकर गाँव, एक समाज तथा बाद में जाकर राज्य और राष्ट्र का निर्माण हुआ। गाँव भारतवर्ष की संरचना का प्रधान अंग है। भारत की तीन-चौथाई आबादी गाँवों में निवास करती है। ग्रामीण जन की अपनी संस्कृति, परंपरा, आर्थिक जीवन, रहन-सहन, खान-पान, आस्था-विश्वास, राजनैतिक जीवन, सामाजिक ढाँचा रहता है। विश्व के हर प्रांत में गाँव किसी-न-किसी रूप में मौजूद है, परंतु हर प्रांत के गाँव अपनी अलग-अलग विशेषताएँ लिए हुए हैं। भारत में गाँव का स्वरूप अत्यंत व्यापक है। कहा जाए तो भारतवर्ष गाँवों का देश है। न जाने कितने गाँव एक-दूसरे से कोसों मील दूर बसे हैं। प्रत्येक गाँव, क्षेत्र, प्रांत के लोगों की जीवन शैली और रहन-सहन के ढंग अलग-अलग हैं तथा हर गाँव की कोई-न-कोई अलग विशेषता होती है। भारतीय ग्रामीण समाज में मानवीयता, आत्मीयता, सहानुभूति की संवेदना विराजमान है। रंग-रूप, वेश-भूषा, परंपरा के कारण विश्वभर में भारतीय गाँवों ने अपनी एक अलग पहचान बनाई है। भारतीय साहित्य के विविध कालों में ग्रामीण जीवन की अभिव्यक्ति मिलती है। वैदिक काल के ग्रंथों में, रामायण काल, महाभारत काल, मौर्य कालीन एवं बौद्ध कालीन साहित्य में ग्रामीण जीवन की अभिव्यक्ति हुई है। इस समय के साहित्य की प्रत्येक विधा में ग्राम्य समाज की उपस्थिति का आभास मिलता है।

भारतीय साहित्यकारों ने ग्रामीण जीवन के सच्चे स्वरूप को अपने साहित्य के माध्यम से उकेरा है। ग्राम के विकसित सभ्यता के आस-पास साहित्य की रचना हुई है। ग्रामीण जीवन से जुड़े हर पहलु को साहित्यकारों ने बड़े ही ईमानदारी के साथ चित्रित किया है। ग्रामीण समाज के सादगी भरे जीवन को जिस तरह साहित्यकारों ने मनोरम ढंग से व्यक्त किया है, उसी प्रकार ग्रामीण समाज में व्याप्त कुरूपता तथा कुसंस्कारों को भी यथार्थ रूप से चित्रण करने का प्रयास भी किया है। हिंदी साहित्य में आरंभिक उपन्यास मूलत: जासूसी, ऐयारी, तिलस्मी प्रधान थे। आरंभिक समय में उपन्यास साहित्य मनोरंजन के लिए लिखा गया था। प्रेमचंद के आगमन ने हिंदी साहित्य तथा उपन्यास को यथार्थ के धरातल पर लाकर खड़ा कर दिया। साहित्यकार अपने लेखन में उस सच्चे स्वरूप को चित्रित करने लगे, जिसका संबंध उनकी जन्मभूमि, उनके गाँव-प्रांत से है। गाँव को उन्होंने जिस रूप में देखा था, वही जीवंत रूप आज किस प्रकार परिवर्तित हो रहा है, ग्रामीण जनों की जीवन शैली, आस्था-विश्वास, जाति व्यवस्था, परिवार, भौगोलिक परिवेश, धर्म, अंधविश्वास आदि को लेखन के माध्यम से पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

2. अध्ययन का उद्देश्य :

'परती परिकथा' और 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में चित्रित ग्राम्य जीवन का तुलनात्मक अनुशीलन करने से दोनों अंचल में रहने वाले ग्रामीण लोगों की सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक विशिष्टताओं का जीवंत चित्र प्रस्तुत किया जा सकता है। इससे पाठक वर्ग दो भिन्न भाषी ग्रामीण समाज के परिवेश को समझ सकेगा, साथ ही राष्ट्रीय चेतना एवं सांस्कृतिक एकीकरण को बढ़ावा देना ही शोध पत्र का उद्देश्य है।

3. अध्ययन में व्यवहृत पद्धति :

अध्ययन की पद्धति विश्लेषणात्मक एवं तुलनात्मक है। उद्धरण एवं संदर्भ ग्रंथ सूची में एमएलए शैली का प्रयोग किया गया है। अध्ययन के लिए आधार ग्रंथ के रूप में 'परती परीकथा' और 'कपिली परिया साधु' उपन्यास को लिया गया है एवं इसके साथ अन्य पुस्तकों की सहायता ली गई है।

4. अध्ययन का महत्व :

इस शोधालेख के माध्यम से उभय भाषा के उपन्यासों में अभिव्यक्त ग्रामीण जीवन के तत्कालीन यथार्थ से हम परिचित हो पाएँगे। साथ ही इस अध्ययन से दोनों प्रदेशों के ग्राम्य जीवन की विशेषताओं को जाना जा सकता है। ग्राम्य जीवन तथा भौगोलिक परिवेश में कहाँ अलगाव तथा साम्यता है, उसे जानने

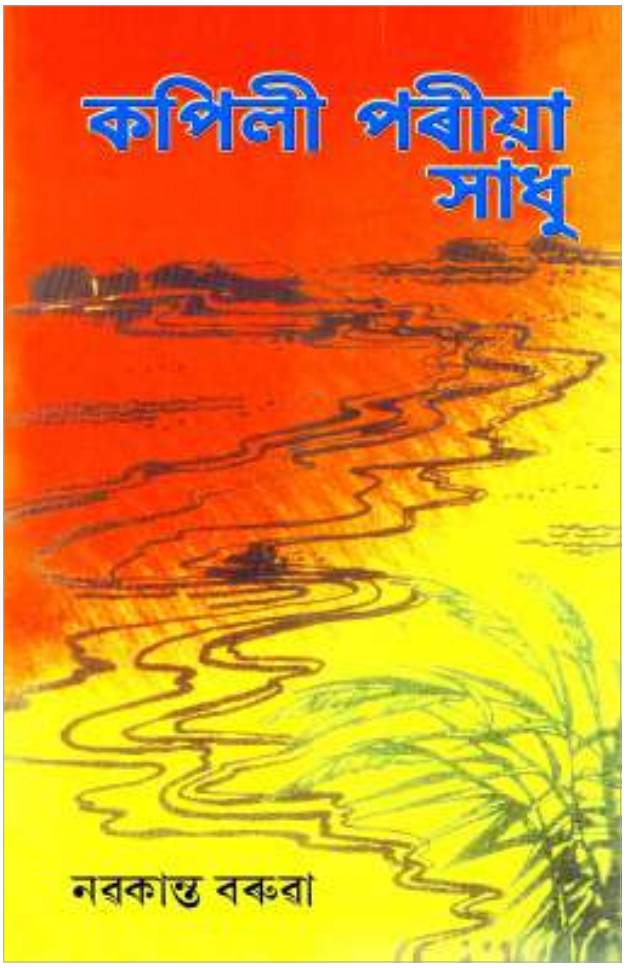

में यह शोध पत्र सहायक होगा।

5. विश्लेषण एवं निर्वचन :

हिंदी साहित्य में ग्राम जीवन पर लिखने वाले साहित्यकारों में प्रेमचंद के बाद फणीश्वरनाथ रेणु का नाम समर्थ रचनाकार के रूप में लिया जाता है। रेणु ने ग्रामीण जीवन को एक विशेष प्रकार की अभिव्यक्ति दी है। रेणु ने ग्रामीण जीवन के हर पक्ष को बड़ी ईमानदारी के साथ अपने लेखन में उकेरा है। ग्रामीण जीवन के यथार्थ का उन्होंने जिस बारीकी से चित्रण किया है, मानो उसमें ग्रामीण आत्मीयता का गंध और सजीव होकर मुखरित हुआ है। उनकी यही विशेषता उन्हें अन्य ग्रामीण कथाकारों से अलग करती है। उनके कथा साहित्य में भारतवर्ष के विभिन्न गाँवों की झलक जीवंत रूप में चित्रित है। उन्होंने ग्रामीण जीवन के विविध पहलू जैसे- ग्रामीण जन की जीवन शैली, आचार-विचार, खान-पान, रीति-रिवाज, आस्था-विश्वास, धर्म, जमींदारी प्रथा, परिवार, ग्रामीण भौगोलिक परिवेश, पर्व-त्योहार, गीत-संगीत, सुख-दु:ख आदि को विश्वसनीय बनाकर पाठक के सामने प्रस्तुत किया है। भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, इस बात को अपने मन-मष्तिस्क में रख रेणु उस आत्मा को पहचान कर लेखन के माध्यम से पाठक वर्ग तक ले गए ताकि पाठक भी अपने देश की आत्मा को पहचान सके। साथ ही लेखक ने गाँव के अच्छे और बुरे दोनों रूपों से परिचय कराने की चेष्टा की है। रेणु द्वारा रचित 'परती परिकथा' ग्रामीण जीवन की अभिव्यक्ति का उत्कृष्ट उदहारण है।

हिंदी की तरह ही असमीया साहित्य में गाँवों का वर्णन आरंभिक काल से ही मिलता है। असमीया गद्य साहित्य में जोनाकी युग से पहले वस्तु धर्मी, नीतिवाद, धर्मीय आदर्श की अभिव्यक्ति हुई थी। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद असमीया उपन्यास की विकास यात्रा ने गतिशील रूप धारण किया। साहित्य में जहाँ रोमांटिक विषय-वस्तु की प्रधानता थी, वह धीरे-धीरे समाज के यथार्थ की ओर अग्रसर होना आरंभ हुआ। कथा साहित्य के विषयों में विविधता आने लगी, जैसे- ऐतिहासिक, सामाजिक, राजनैतिक, मनोविश्लेषणवादी, यथार्थपरक आदि विषयों की प्रधानता साहित्य में बढ़ने लगी। स्वतंत्रता के बाद असमीया ग्राम्य जीवन को साहित्य में यथार्थ रूप में उकेरने का काम प्रसिद्ध लेखक नवकांत बरुवा ने किया है। नवकांत बरुवा असमिया साहित्य के अग्रिम साहित्यकारों में से एक हैं। गाँव के हवा-पानी तथा मिट्टी की सुगंध में पले-बढ़े नवकांत बरुवा ने ग्रामीण जीवन को बहुत करीब से देखा-जाना है। उन्होंने अपने उपन्यासों में ग्रामीण जीवन के सूक्ष्म से सूक्ष्म पहलुओं को यथार्थ रूप में अंकन किया है। असमीया ग्रामीण जीवन विविधता से भरा हुआ है। असमीया समाज की रीति-नीति, जीवन

दर्शन, भौगोलिक वातावरण, प्रेम-प्रणय, विश्वास-अंधविश्वास, खान-पान, सुख-दु:ख को बड़ी ही ईमानदारी के साथ लेखक ने चित्रण किया है। असम में गाँव सामाजिक जीवन का मूल केंद्र हैं। इसी केंद्र के अनेक रूपों को नवकांत बरुवा ने अपने उपन्यास 'कपिली परीया साधु' में चित्रित किया है। इस उपन्यास में नगाँव जिले में अवस्थित कपिली नदी के आस-पास बसने वाले ग्रामीण जन-जीवन की विविध पहलुओं को उजागर किया गया है।

फणीश्वरनाथ रेणु ने भी अपने कथा साहित्य में अपने प्रदेश केग्राम्यांचल के वास्तविक रूप का वर्णन किया है। उनका रचित 'परती परिकथा' ग्राम्य जीवन का जीवंत दस्तावेज है। उन्होंने ग्रामीण जीवन की समस्त दिशाओं को उपन्यास में उकेरकर प्रस्तुत किया है। उपन्यास के माध्यम से उन्होंने ऐसे पात्रों की रचना की है, जो एक ओर ग्राम्य जीवन की सीमाओं और संकीर्णताओं से ग्रस्त हैं, तो दूसरी ओर जो इन विडंबनाओं तथा समस्याओं के खिलाफ आवाज उठाने के साथ संघर्षरत हैं। उन्होंने न केवल ग्राम्य अंचल, बल्कि उसमें आए परिवर्तन की ओर भी पाठक का ध्यान आकर्षित करने की चेष्टा की है। भारतीय समाज में फैली हुई जात-पात की कठोर व्यवस्था का चित्रण रेणु ने 'परती परिकथा' उपन्यास में इस प्रकार किया है, ''एक समय था ब्राह्मण और बबुआन टोले के बाबुओं का सात खून माफ था लेकिन आज स्थिति बिगड़ रही है। आजकल जमाना उलट गया है, तो क्या? एक जमाने की बात नहीं, हाल-साल की बात है, परानपुर की बबुआन टोली के बाबू लोग सलाम कराने पर आँख की पलकों को जरा-सा झुकाते भी नहीं थे, बात करना तो दूर की बात। अब तो सोलकन्ह लोग भी बाबू की दावी करने लगे हैं। धन की ऊँचाई जाति के बुर्ज से भी ऊँची होती है। पैसा होते ही लोग बाबू कहलाने लगते हैं। बुनियादी बबुआन टोली को अब कौन पूछता हैं?''(रेणु 1995:99)

ग्राम्य जीवन में जातिगत व्यवस्था की स्थिति अत्यंत दयनीय है। यह धीरे-धीरे समाज व्यवस्था को खोखला करता जा रहा है। जाति को लेकर ग्रामीण समाज में राजनीति की जाती है। इसका निदर्शन उपन्यास में मिलता है। ''नहीं चाहिए लुत्तो को ऐसी जमीन, जिससे जाति की इज्जत माटी में मिल जाये और छोटी जाति केलोग तो अपनी जगह पर ठीक हैं। आजकल हरिजन भी कहलाने लगे। लेकिन खवास? न जलो, न थलो। बामनों की चालाकी खूब समझता है लुत्तो। समझकर मन ही मन कुढ़ता है। सियार पंडित डोम, चमार, काछी-हाड़ी को तो गाँव से बाहर बसाया। शूद्रों में कुछ साफ-सुथरे घराने का पानी चला दिया, नहीं तो पानी खुद भरकर पीना होगा। दही-चूड़ा का भार कौन ले जाता ढोकर बीस कोस, पच्चीस कोस बंहगी में टांगकर ढुलकी लगाते।'' (रेणु 1995:32)

असमीया उपन्यास 'कपिली परीया साधु' में असम में प्रचलित जाति व्यवस्था के कठोर रूप को चित्रित किया गया है। कोई भी प्रांत हो या क्षेत्र, उसमें अपनी ही जातिगत व्यवस्था का रूप रहता है, जिसके द्वारा ग्रामीण जीवन संचालित होता है। ग्रामीण जन जाति को छोड़कर जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते। असमीया ग्रामीण समाज में जाति का महत्व अत्यधिक है। 'कपिली परीया साधु' में जातिगत प्रथा और उसके कुप्रभावों का वर्णन किया गया है। उपन्यास का पात्र रूपाय आजीवन धीरसिंह को अपना पिता मानता है। धीरसिंह भले ही उसके सगे पिता नहीं हैं, परंतु उन दोनों में पिता-पुत्र का संबंध सगे से भी ज्यादा है। परंतु धीरसिंह की मृत्यु के बाद रूपाय को पिंडदान करने से वंचित रखा गया। कारण यह है कि इन दोनों में खून का संबंध नहीं है। असमीया ग्रामीण समाज में मान्यता है कि जिस व्यक्ति के जात-कुल के बारे में कोई नहीं जनता, वह पिंडदान नहीं कर सकता है। ''पिताजी का पिंडदान मैं क्यों नहीं कर सकता? मैं दीक्षित नहीं हूँ तो क्या मैं अपने पिता का पिंडदान करने के योग्य नहीं हूँ ?'' (बरुवा 2014:52)

यहाँ पर यह सिद्ध होता है कि इनके भी ग्रामीण समाज में भेदभाव की भावनाएँ विद्यमान हैं। इनकी यही भावना ग्राम्य जीवन को दीमक की तरह खोखला करती जा रही है। विवाह संबंध में तो यह और भयंकर रूप धारण करता है। रूपाय की माँ उसे विवाह करने के संबंध में बात करती है तो उसके दिमाग में केवल यह प्रश्न बार-बार अशांति दे रहा था कि उसे धीरसिंह ने

पाल-पोसकर बड़ा किया है। भले ही वह धीरसिंह को अपना पिता मानता हो, पर गांव वाले उसे धीरसिंह के गोत्र का नहीं समझते। रूपाय यही सोचता था कि जाति-कुल जाने बगैर कोई मुझसे विवाह करेगा। माँ को यही उत्तर देता है कि जिसका जात-कुल का ही ठिकाना नहीं है, उसको कौन लड़की देगा माँ? (बरुवा 2014:61)

परिवार भारतीय ग्रामीण जीवन का नींव है। ग्राम्य समाज में पूरा गाँव एक परिवार की तरह रहता है। सुख-दु:ख में वे एक-दूसरे को सहारा देते हैं तथा सहभागी भी होते हैं। फणीश्वरनाथ रेणु ने ग्राम्य समाज के संयुक्त परिवार को देखा-परखा तथा उसे टूटते हुए भी देखा है। उन्होंने 'परती परिकथा' उपन्यास में परिवार किस प्रकार विघटन की ओर जा रहा है, उसे चित्रित करने का प्रयास किया है। उपन्यास के अनेक हिस्सों में संयुक्त परिवार तथा ग्राम्य समाज में बिखराव देखने को मिलता है। उपन्यास का एक पात्र जितेन्द्र ने गाँव में वर्तमान पारिवारिक संबध किस प्रकार बदल रहे हैं, उसका चित्रण इस प्रकार किया है, ''परानपुर ही नहीं, सभी गाँव टूट रहे हैं। गाँव के परिवार टूट रहे हैं, क्यूँकि टूट रहा है- रोज-रोज, काँच के बर्तनों की तरह।'' (रेणु 1995:351) दूसरी ओर 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में नवकांत बरुवा ने ग्रामीण समाज के लोगों के प्रेमपूर्ण मनोभाव को दर्शाया है। ग्रामीण जन एक दूसरे के सुख-दुख में सहभागी होते हैं, वे आस-पड़ोस की समस्या या विपत्ति को अपना मानकर उसे हल करने में एक-दूसरे का साथ देते हैं। गाँव के हर बच्चे को अपना समझकर उसे आगे ले जाने में सहायता तथा उपदेश देते हैं। उपन्यास में जब रूपाय कुछ क्षण के लिए खो जाता है तो पूरे गाँव के लोग उसे खोजने में लग जाते हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि रूपाय केवल धीरसिंह का बेटा नहीं, बल्कि पूरे गाँव का बेटा हो। इससे ग्रामीण जनों के बीच आपसी प्रेम तथा भाईचारे के भाव का प्रदर्शन होता है। आखिर में गाँव के ग्रामप्रधान द्वारा रूपाय कपिली नदी के किनारे बैठा हुआ मिल जाता है। वे रूपाय को अपने घर पर पहुँचा आते हैं। ग्रामप्रधान रूपाय को नदी के किनारे से लाकर कहते हैं, ''कपिली नदी के किनारे भूत पकड़ा हुआ आदमी की तरह वह बैठा हुआ था। जब रूपाय को देखा तो मैं इसे अपने साथ ले आया।''(बरुवा 2014:16)

ग्रामीण समाज में भौगोलिक परिवेश की एक अलग विशेषता रहती है। नदी, झरना, तालाब, पर्वत-पहाड़, खेत, मैदान, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी ग्राम्य जीवन का अभिन्न अंग हैं। विभिन्न अंचलों की भौगोलिक विविधता ही हमारी संस्कृति की पहचान है। रेणु ने 'परती परिकथा' उपन्यास में भौगोलिक परिवेश का चित्रण बहुत ही सुंदर ढंग से किया है। उपन्यास में परानपुर गाँव के भौगोलिक परिवेश का वर्णन इस प्रकार किया है, ''गाँव के पश्चिम में बहती दुलारीदाय की घाटी, तीन ओर विशाल प्रान्त, वृक्ष-तरु शून्य लाखों एकड़ बादामी रंग की धरती दुलारीदाय इसकी पश्चिमी रेखा है.....जहाँ से हरियाली शुरू होकर पश्चिम की ओर गहरी होती गई है ...गाँव के दक्खिन हजारों सेमल के पेड़ का बाग हैं...।'' (रेणु 1995:17)

इसी प्रकार 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में नगाँव जिले में बहने वाली कपिली नदी के आस-पास के ग्राम्य प्रांत के भौगोलिक वातावरण को नवकांत बरुवा ने बड़े ही मनोरम ढंग से चित्रित किया है। उपन्यास में नदी को एक जीवंत चरित्र के रूप में लेखक ने पाठक के सामने उभारा है। बाढ़ के समय कपिली भयंकर रूप धारण कर लेती है। इस नदी के आस-पास रहने वाले जन समुदाय यह जानते हैं कपिली दुख और सुख दोनों का कारण है। बाढ़ के वक्त कपिली नदी उन्हें पीड़ा देती है, परंतु यह कपिली ही उनके खेतों की जमीन को उर्वर भी बनाती है। कपिली का निर्मल जल उनके प्यास को तृप्त करता है। कपिली से उनका व्यवसाय चलता है। कपिली का इतिहास आज का नहीं, बहुत प्राचीन राजाओं के दिनों से है। आहोम-जयंतिया विवाद से संबंधित कई युद्ध स्थल कपिली की भूमि रहे हैं। (बरुवा 2014:06)

मानव जीवन के विकास में शिक्षा की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण है। शिक्षा मनुष्य के जीवन की विविध पहलुओं को समझने में सहायक बनाती है। मनुष्य के भीतर उचित-अनुचित का ज्ञान शिक्षा ही प्रदान करती

है। शिक्षा हर व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। शिक्षा के बिना मनुष्य का जीवन अंधकारमय है। हिंदी के साहित्यकार फणीश्वरनाथ रेणु और असमीया के साहित्यकार नवकांत बरुवा ने शिक्षा के महत्व को अपने-अपने उपन्यासों में चित्रित किया है। वे जानते हैं कि ग्रामीण जीवन में व्याप्त कुसंस्कार-अंधविश्वास, गरीबी, जादू-टोना, जात-पात में भेदभाव आदि का खात्मा शिक्षा से ही हो सकता है। रेणु ने इस उपन्यास में परानपुर गाँव में शिक्षा की स्थिति का निदर्शन इस प्रकार किया है, ''गाँव की आबादी करीब सात-आठ हजार हैं। पहले पढ़े-लिखे लोगों की बात लीजिए! आठ ग्रेजुएट, दो एम.ए, एक शास्त्री, पचास मैट्रिक्युलेट, एक सौ मिडिल पास। डेढ़ दर्जन कवि, दो साहित्यलंकार और एक नाटककार। लड़कियाँ भी पढ़ी-लिखी हैं। जिले की एकमात्र साहित्यिक पत्रिका में एक कुमारी कवयित्री की रचनाएँ हमेशा सचित्र छपती हैं।... और रग्घू रामायनी को क्या कहियेगा? एक अक्षर का भी जिसे बोध नहीं, किंतु बालकांड से उत्तरकांड तक क्षेपक सहित जिसके कंठ में है।'' (रेणु 1995:19-20) दूसरी ओर ग्रामीण जन के मन में शिक्षा के प्रति कोई आदर भाव नहीं है। वे शिक्षित व्यक्ति को भी कोई महत्व नहीं देते। इस बात का चित्रण रेणु ने उपन्यास में किया है, ''लुत्तो बी.ए, एम.ए वालों को गाय-बैल समझता है-गोशाल का।'' (रेणु 1995:26)

इसी प्रकार नवकांत बरुवा का 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में शिक्षा को समाज में चेतना तथा विकास का माध्यम के रूप में दिखाया गया है। शिक्षा के प्रति ग्रामीण जन सजग हैं। वे अथाह कष्ट उठाकर भी अपने बच्चों को शिक्षा देना चाहते हैं। विद्यालय से आकर अगर घर में कुछ काम न हो तो रूपाय गणित के प्रश्नों को समाधान करने में लग जाता था। भांगुरी भकत जब पुस्तकों का पाठ करते हैं तो वहाँ रूपाय जाकर सुना करता है। भांगुरी भकत ने उसे बंगला का 'एकलव्य की गुरु दक्षिणा' पुस्तक को भी पढ़ कर सुनाया है। (बरुवा 2014:17) रूपाय पढ़ाई के प्रति आग्रही था। केवल रूपाय ही नहीं, गाँव के लोग भी शिक्षा के प्रति जागरू क थे। भांगुरी भकत धीरसिंह को रूपाय को शिक्षा देने के संबंध में कहते हैं, ''लोग बच्चों को पढ़ाने के लिए कंगन-झुमके तक बेच देते हैं। भगवान की कृपा से तुम्हारे पास सुपारी और नींबू बेच कर कुछ पैसे आ जाते हैं। तुम इससे अपने बेटे को पढ़ा सकते हो।'' (बरुवा 2014:22)

ग्रामीण समाज के अधिकतर लोगों में अंधविश्वास जैसी मान्यताएँ व्याप्त हैं। अंधविश्वास को ग्राम्य समाज एक आस्था के रूप में मानता है। अज्ञानता ही इसका मूल कारण है। विज्ञान और तकनीक के इस युग में बहुत से ग्रामीण क्षेत्रों में अंधविश्वास के नाम पर अमानवीय कार्य किया जाता है। धर्म का सही रूप न समझकर ग्रामीण जन अंधविश्वास को बनाए रखते हैं। रेणु ने 'परती परिकथा' में ग्रामीण जन किस प्रकार अंधविश्वास को धर्म मानकर उसके ऊपर आस्था रखते हैं, उसका चित्रण किया है। परानपुर गाँव के लोग ब्रह्मपिशच के बारे में यह सोचते हैं, ''ताड़ वृक्ष पर ब्रह्मपिशाच रहता है, विशाल परती पर डेढ़-डेढ़ सौ एकड़ की पाँच परिधियों पर ब्रम्हापिशाच का राज्य था। प्रत्येक वर्ष शरद की चाँदनी में वह इन पाँचों चक्रों में अपना रुपया पसारकर सूखने देता था। असली चाँदी के रूपये, सोने की मुहरें! .....ब्रम्हापिशाच के तथा उसके रुपयों को बहुतों ने देखा, पर किसी की हिम्मत नहीं हुई कि कभी उसे टोके भी। किस की माँ ने ऐसा अगिया बैताल पैदा किया है जो ब्रम्हापिशाच को देखकर भी होश दुरुस्त कर सके?'' (रेणु 1995:22-23) जादू-टोना को ग्रामीण जन दवा समझते हैं। चिकित्सा से ज्यादा उन्हें तांत्रिकों के झाड़-फूँक पर विश्वास है। ''जब लुत्तो बार-बार एक ही सपना देख कर जग जाता था और सो नहीं पाता था तो उसकी माँ ने झाड़-फूँक करवाना शुरू कर दिया। लुत्तो की माँ ने लगातार एक महीना झाड़-फूँक करवाया। तब जाकर कहीं उसे सपने आना बंद हुआ।'' (रेणु 1995:230) 'कपिली परीया साधु' उपन्यास में भी अंधविश्वास के प्रकोप में ग्रामीण जन जकड़े हुए हैं। अज्ञानता, अशिक्षा और निर्धनता से ही ग्राम्य समाज में अंधविश्वास फैला हुआ है। ''किसी को कहे बिना रूपाय रात्रि समय कपिली नदी के किनारे आकर बैठा था। उसकी खोज में उसका भैया नदी के किनारे पहुँच गया।

दूसरे ही दिन से उसे तेज बुखार हो गया। ग्रामीणों को यह लगा कि उसे भूत ने पकड़ लिया। झाड़-फूँक किया, मिर्ची जलाकर धुआँ भी सुंघाया। लोग मानने लगे कि भूत चला गया, क्योंकि भूत जाने का चिन्ह रूप में घर के पास के पेड़ का डाल टुटा हुआ था।'' (बरुवा 2014:16-17) ''केवल इतना ही नहीं, जब रूपाय नदी किनारे ग्रामप्रधान को मिला था तो उसने पहले उसे भूत ही मान लिया था। रूपाय को उन्होंने राम बोलने के लिए कहा था, क्योंकि उनको विश्वास था कि भूत-प्रेत भगवान का नाम नहीं लेते हैं। अब ग्रामप्रधान को यह निश्चित हो गया कि ये रूपाय ही है। भूत राम का नाम नहीं लेता है।'' (बरुवा 2014:15-16)

6. निष्कर्ष :

अत: दोनों उपन्यासों के अध्ययन के पश्चात तुलनात्मक रूप में निम्नलिखित निष्कर्ष सामने आते हैं। 'परती परिकथा' और 'कपिली परीया साधु' उपन्यासों में दर्शाया गया ग्रामीण जीवन अपने-अपने संबंधित क्षेत्रों का प्रतिनिधित्व करता है। दोनों उपन्यास भले ही अलग-अलग भाषा में रचित हों, परंतु उनमें निहित ग्रामीण जीवन से संबंधित भावनाओं में विविध समानताएँ विद्यमान हैं। ग्रामीण समाज में भौगोलिक परिवेश की विशेषता सदियों से रही है। 'परती परिकथा' में चित्रित ग्राम्य वातावरण ने परानपुर गाँव के सौंदर्य को और अधिक जीवंत बना दिया है। वैसे ही 'कपिली परीया साधु' में वर्णित कपिली नदी ने आस-पास के गाँव के वातावरण को सजीव कर दिया है। कपिली न केवल एक नदी है, बल्कि वहाँ केग्रामीणों के लिए एक माँ के समान है। इनके सुख-दुख का संबंध कपिली नदी से जुड़ा हुआ है। दोनों उपन्यासों में ग्रामीण समाज में व्याप्त जाति व्यवस्था के कठोर रूप को दिखाया गया है। हमारे भारत के अधिकांश प्रांतों में जातिगत भेदभाव सदियों से चला आ रहा है और यह इन दोनों उपन्यासों में किसी-न-किसी रूप में विद्यमान है। केवल इतना ही नहीं, अज्ञानता तथा शिक्षा के अभाव के कारण ग्राम्य समाज अंधविश्वास के कुचक्र में फँसा हुआ है। गाँव के लोग प्राय: अंधविश्वास को आस्था के रूप में स्वीकार करते हैं। इसका भी यथार्थ उदाहरण दोनों उपन्यासों में प्रतिबिंबित होता है। जहाँ एक ओर 'परती परिकथा' में शिक्षा की उदासीन मानसिकता का चित्रण है, वहीं 'कपिली परीया साधु' में शिक्षा को लेकर ग्राम्य जन में जागरूकता दिखाई देती है। 'परती परिकथा' में जहाँ टूटते हुए परिवार और ग्राम्य एकता में बिखराव देखने को मिलता है तो वहीं 'कपिली परीया साधु' में अटूट ग्राम्य एकता और आपसी संबंधों की मजबूती बरकरार है। दोनों उपन्यासों में समानता के साथ-साथ कुछ असमानताएँ भी मौजूद हैं। परंतु यह सत्य है कि दोनों भाषाओं के उपन्यासकारों ने बड़ी जीवंतता और सजगता के साथ ग्राम्य जीवन केसूक्ष्म-से-सूक्ष्म विषयों को उपन्यास में यथार्थ रूप में चित्रित किया है। तत्कालीन ग्रामीण समाज में चल रही विविध समस्याओं को दोनों रचनाकारों ने विविध प्रसंगों के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. दास, श्यामसुन्दर, हिंदी शब्दसागर, प्रयाग: काशी-नागरी प्रचारिणी सभा, 1920
2. बरुवा, नवकांत, कपिली परीया साधु, गुवाहाटी: लयार्स बुक स्टॉल, 2014
3. मुखर्जी, रवीन्द्रनाथ, भारतीय सामाजिक संस्थाएं. नई दिल्ली: एसबीपीडी पब्लिकेशन, 2015
4. रेणु, फणीश्वरनाथ, परती परिकथा, नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन, 1995
5. श्रीवास्तव, मुकुन्दी लाल, बृहत् हिंदी कोश, वाराणसी: ज्ञान मंडल, 2016

सहायक प्रोफेसर , हिंदी विभाग,
सिक्किम विश्वविद्यालय, काजी रोड, नियर ओवरसीज़ बैंक,
गंगटोक, सिक्किम-737101
मो.-7864878427

आलेख

रामचरितमानस में चरित्र निर्मिति

✍ डॉ. अमित कुमार शर्मा

हिंदी साहित्य के इतिहास में गोस्वामी तुलसीदास निर्विवाद युग दृष्टा के प्रतीक हैं। तुलसीदास ने साहित्य परंपरा को एक नई ऊँचाई प्रदान की। अवधी भाषा में रचित महाकाव्य रामचरितमानस की लोकप्रियता इतनी है कि संपूर्ण विश्व में इस ग्रंथ का अमंगल की शांति हेतु अखंड पाठ आयोजित होते रहते हैं। महाकवि तुलसीदास का यह महाकाव्य व्यक्तिगत साधना के साथ-साथ लोक धर्म की जन्मस्थली भी है। रामचरितमानस के राम एवं अन्य पात्र अपने-अपने कर्म क्षेत्र में उस समय आदर्श स्थापित करते हैं, जब भारत में इस्लाम की स्थापना के साथ, राज सिंहासन के लिए भाई-भाई का कत्ल कर रहा था। बेटा, बाप को कैदखाने में डालकर राजगद्दी हड़प रहा था। ऐसी स्थिति में तुलसीदास रामराज्य की स्थापना के लिए इस बिखरे हुए भारतीय जनमानस को एक करने हेतु सबसे बड़े मार्गदर्शक प्रभु श्रीराम का चरित्र सामने लाते हैं। समाज के प्रत्येक वर्ग के लिए प्रभु श्रीराम का चरित्र आदर्श बनता है। जातियों में विभाजित भारतीय जनमानस के लिए प्रभु श्रीराम एक समन्वयक की भूमिका में भारतीय समाज के सामने आदर्श व्यक्तित्व के रूप में खड़े दिखाई देते हैं, जहाँ वे एक आदर्श पुत्र के रूप में, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श स्वामी, आदर्श शिष्य, आदर्श राजा के रूप में समाज के सम्मुख आदर्श प्रस्तुत करते हैं। आज भारतीय जनमानस में राम का चरित्र मापदंड का आधार बन गया है।

वर्तमान समय में हमारा चरित्र नई उपलब्धियों और हलचलों से भरा मानवी-जीवन भूमंडलीकरण की दौड़ में हाँफ रहा है। फिर भी यह विडंबना ही कही जाएगी कि आज हमारे सामने सबसे बड़ा संकट मानवीय-चरित्र का है। चरित्र किसी भी समाज एवं व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि मनुष्य का चरित्र ही उसका सबसे बड़ा धन होता है। उसका स्वास्थ्य किसी प्रकार से चला जाए, तो उसे वह पुनः प्राप्त कर सकता है। धन चला जाए तो पुनः धन अर्जित किया जा सकता है, किंतु चरित्र एक बार नष्ट हो जाए तो पुनः प्राप्त नहीं किया जा सकता। जैसे रगड़ने, काटने, तपाने और पीटने, से सोने की परीक्षा होती है, ठीक उसी प्रकार से त्याग शील, गुण और कर्म इन चार गुणों को देखकर ही मनुष्य के अच्छे और बुरे कर्म की पहचान होती है।

तुलसी कृत रामचरितमानस चरित्र-रक्षा का सबसे बड़ा उदाहरण है, क्योंकि राम केवल रामायण के पात्र नहीं हैं, बल्कि वास्तविक जीवन के राम व्यक्ति चरित्र हैं। राम पूरे भारतीय संस्कृति के लिए व्यक्ति चरित्र का उत्तम उदाहरण हैं। राम द्वारा अपने बाहुबल से जीती गई राज्य लंका को बिना किसी हिचक विभीषण को सौंप देना यह दिखाता है कि यह त्याग अचानक आए हुए उत्साह का परिणाम नहीं है, बल्कि राम के बाल्यकाल से ही क्रमबद्ध सतत चला आ रहा चरित्र विकास का स्वभाव है। उसे हम चौगान के खेल में छोटे भाइयों से जीत कर भी हार मानते हुए बालक, पुत्र एवं शिष्य राम

के रूप में देख सकते हैं–

प्रातकाल उठि कै रघुनाथा।
मातु पिता गुरु नावहिं माथा।।
आयसु मागि करहिं पुर काजा।
देख चरित हरषइ मन राजा।।[1]

अर्थात प्रात: काल माता–पिता और गुरु का चरण स्पर्श कर, आज्ञा लेकर अपने राज्य का काम करते हैं। राम के इस चरित्र को देखकर राजा अत्यंत प्रसन्न होते हैं।

राम तुलसी साहित्य के प्रमुख पात्र हैं। वे शक्ति, शील और सौंदर्य के प्रतिमान हैं। जनकपुर में धनुष यज्ञ के उपरांत परशुराम और राम के बीच संवाद होता है। जनकपुर में पराक्रम दिखाने वाले राम परशुराम से विनम्रता से बात करते हैं, जबकि परशुराम बहुत क्रोधित होते हैं। यहाँ तक कि राम को अपशब्द भी कहते हैं। इस स्थिति में लक्ष्मण भले क्रोध में आते हैं, लेकिन राम रंच मात्र भी विचलित नहीं होते, बल्कि वे लक्ष्मण को ही रोकते हैं। वे परशुराम की गरिमा को कहीं भी खंडित नहीं होने देते। तब परशुराम कहते हैं कि तुम सचमुच विष्णु के अवतार हो–

राम रमापति करधन लेहू।
खैंचहु मिटै मोर संदेहूं।।

जब परशुराम कहते हैं, तो राम वह धनुष लेते हैं और धनुष अपने आप चढ़ जाता है। यथा –

देत चापु आपुहिं चलि गयऊ।
परसुराम मन बिस्मय भयऊ।।[2]

राम के पराक्रम को देखकर परशुराम का अहंकार नष्ट हो जाता है। फिर भी राम के भीतर अहंकार का भाव नहीं आता। इतना ही नहीं, जन वासियों के सामने जिस तरह से अपने को प्रस्तुत करते हैं, वहाँ भी कोई अहंकार नहीं है। सीता विवाह के उपरांत अयोध्या जाते हैं तो वहाँ भी अन्य पुत्रों की उपेक्षा कर जेष्ठ पुत्र को ही राज अधिकारी मानने वाली अन्यायपूर्ण प्रथा पर विचार करते हुए युवा राम और फिर पिता के वचनों और माता के प्रति श्रद्धा रखते हुए प्रसन्नता से राज्य छोड़कर वनवासी राम में कहीं भी न तो अहंकार का भाव आता है और न ही ईर्ष्या का भाव। यहाँ तक की माता कैकेई के प्रति भी

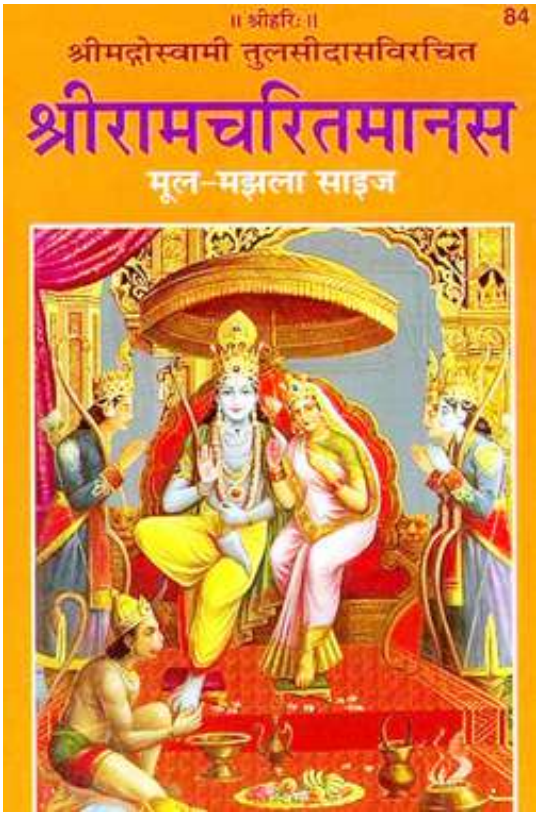

मन में वही सम्मान है। जब वापस जाने का समय आता है। तब राम स्वयं माता कैकेई के पास आते हैं और कहते हैं–

भरत मातु पद बंदि प्रभु सुचि सनेहँ मिलि भेंटि।
बिदा कीन्ह सजि पालकी सकुच सोच सब मेटि।।[3]

अर्थात माता कैकेई के मन के सारे संकोच और सोच को निकालकर पालकी सजाकर आदरपूर्वक विदा करते हैं। यही नहीं, कैकेई की जिस दासी (मंथरा) के कारण राजा दशरथ के परिवार में यह विवाद खड़ा होता है, उसके प्रति भी राम के मन में कोई दुर्भावना नहीं है। संपूर्णता में देखा जाए तो राम अयोध्या से वन के लिए जाते हैं तो उस समय वे राजकुमार राम होते हैं। उसके पश्चात निषादराज नदी पार कराते हैं तो वे तपस्वी राम बनते हैं और जब 14 वर्ष वनवास के उपरांत वापस अयोध्या आते हैं तब वे मर्यादा पुरुषोत्तम राम कहलाते हैं।

'मानस' तुलसी का चरित प्रधान महाकाव्य है। इस

महान ग्रंथ में राम के चरित्र की प्रधानता के साथ-साथ अनेक ऐसे पात्रों का भी चित्रण हुआ है, जो अपने चरित्र के कारण सद्गति की ओर बढ़ते दिखाई देते हैं। अत्याचार की सारी सीमाएँ लांघ जाता है और महापापी होकर मृत्यु को प्राप्त करता है। वह अपने कर्म को जानता है इसलिए अपनी सद्गति प्राप्त करने के लिए अत्याचार करता है ताकि राम उसके अत्याचारों के लिए उसे शीघ्र ही मुक्ति प्रदान करें। रामचरितमानस के किसी भी पात्र के चरित्र में किसी भी प्रकार का संशय दिखाई नहीं पड़ता। सभी के सभी पात्र निर्भीक हैं। वह कभी भी असमंजस की स्थिति में दिखाई नहीं पड़ते। लक्ष्मण, भरत, हनुमान, अंगद, सुग्रीव, कैकेई, कौशल्या, मंथरा शूर्पणखा, रावण, मेघनाथ, मंदोदरी सभी स्त्री-पुरुष पात्र व्यक्तिगत विशेषताएँ रखते हुए भी मानव जीवन की एक विशेष स्थिति में आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

लोक धर्म और समाज की दृष्टि से मानस के पात्रों में भरत महत्वपूर्ण पात्र हैं। भरत के कारण राम को वनवास मिलता है। यह बात भरत को जब पता चलती है तो वे तुरंत ही अपनी माता से संबंध तोड़ लेते हैं और व्यथित अयोध्या वासियों के साथ राम को मनाने चित्रकूट जाते हैं और राम के सामने अपना हृदय खोल कर रख देते हैं-

सानुज पठइअ मोहि बन कीजिए सबहि साथ।
नतरु फेरिअहिं बंधु दोउ नाथ चलौं मैं साथ।।[4]

इस तरह भरत संपूर्ण समाज के सामने अपने बड़े भ्राता राम के समक्ष जिस श्रद्धा से नतमस्तक होते हैं, वह वर्तमान भारतीय जनमानस के लिए अप्रतिम है। रामचरितमानस में तुलसीदास ने भरत के चरित्र को निश्चित रूप से अपने महाकाव्य के अनुरूप ही गढ़ा है। भरत का त्याग इतना बड़ा है कि उनके सामने प्रभु श्रीराम असमंजस में पड़ जाते हैं। मानस में तुलसीदास ने लक्ष्मण को पर्याप्त जगह दी है। सीता और राम के साथ लक्ष्मण भी प्रमुख पात्र के रूप में हमारे सामने आते हैं। लक्ष्मण अपने सूझबूझ, त्याग एवं सेवा धर्म के कारण राम के प्रिय बनते हैं और एक अनुज के रूप में भारतीय समाज के लिए आदर्श पात्र दिखाई पड़ते हैं। इन विशेष पात्रों के साथ ही मानस में महाकवि तुलसीदास गौड़ पात्रों के चरित्र को भी अपनी सूझ-बूझ के साथ भारतीय जनमानस के सामने जीवन के विभिन्न पक्षों को खोलने के लिए प्रस्तुत करते हैं। मंथरा, शूर्पणखा आदि स्त्री पात्र बहुत कम समय के लिए हमारे सामने आती हैं, लेकिन इसके बावजूद हमारे मानस पटल पर अपनी अमिट छाप छोड़ जाती हैं। दरअसल, यह दोनों स्त्री पात्र आज भारतीय जनमानस में प्रतीक बन गई हैं। यही स्थिति कैकेई की भी है। जहाँ तक बात कौशल्या की है, वे केवल राम की माता के रूप में ही नहीं, बल्कि राजरानी के रूप में भी मानस के माध्यम से हमारे सामने दिखाई पड़ती हैं। राजा दशरथ को महाकवि ने एक प्रतापी राजा के रूप में आदर के साथ मानस में चित्रित किया है, जो नियति के चक्र में फँस कर रह जाते हैं।

मानस में तुलसीदास ने पुरुष गौण पात्रों में केवट, निषाद, कोल, किरात आदि का चरित्र-चित्रण जिस कुशलता एवं मार्मिकता के साथ किया है, वह दर्शनीय है-

तुम्ह प्रिय पाहुने वन पगु धारे।
सेवा जोग न भाग हमारे।।
देब काह हम तुम्हहि गोसाईं।
ईंधनु पात किरात मिताई।।[5]

अर्थात भरत अपने राज समाज के साथ वन आते हैं। वन में रहने वाले कोल, किरात जिस उत्साह और प्रेम के साथ उनका स्वागत करते हैं, वह अभूतपूर्व है।

मानस में कपि, भालू, पात्रों में हनुमान अंगद, सुग्रीव, नल, नील, जामवंत आदि पात्र भी अपनी विशिष्ट उपस्थिति के साथ दिखाई पड़ते हैं। हनुमान और अंगद अपने-अपने चरित्र के साथ न्याय करते हुए अलग पहचान बनाते हैं। जहाँ तक बात मानस में राक्षस पात्रों के चरित्र-चित्रण निर्माण की है, वहाँ भी तुलसी बाबा ने अपनी सहृदयता एवं कवि कुशलता का परिचय दिया हैं। खल पात्रों में रावण प्रमुख पात्र के रूप में मानस में दिखाई पड़ता है। रावण अपने जीवन में केवल एक बार पराजय का अनुभव करता है और दूसरी बार उसे अपने ही राज्य में अंगद द्वारा अपमानित होना पड़ता है। इसके बावजूद वह कभी भयभीत नहीं होता। अपने तमाम पुत्रों और भाइयों के वध का समाचार सुनने के बाद भी वह दुख और शोक में नहीं पड़ता,

बल्कि अत्यधिक क्रोधित होता है। यहाँ तक कि स्वयं मृत्यु के समय भी वह वीर गर्जना के साथ युद्ध करने के लिए राम के सामने उपस्थित होता है-

कहं राम कहि सिर निकर धाए
देखि मर्कट भजि चले।।[6]

रावण एक वीर योद्धा के साथ-साथ कुशल सेनापति भी है। वह जब युद्ध के लिए निकलता है तो अपनी सेना को चेतावनी देते हुए कहता है कि जिसे युद्ध में भाग नहीं लेना है वह अभी लौट जाए। वह किसी प्रकार की सहायता की अपेक्षा किए बिना युद्ध को अपने आत्मबल से लड़ता है। उसकी इस युद्ध नीति और वीरतापूर्वक युद्ध करने की कला को देखकर स्वयं राम भी अपने विजय के प्रति विचलित हो जाते हैं। रावण की मृत्यु जिस ढंग से होती है, उसे देखकर तो यही कहा जा सकता है कि उसका वध करना किसी सामान्य प्राणी के वश का नहीं था। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि महाकवि ने नायक के साथ अपने मानस में प्रति नायक के चरित्र के साथ भी पूर्ण न्याय किया है। राक्षस पात्रों में रावण के बाद मेघनाथ का प्रमुख स्थान है। उसने देवराज इंद्र को पराजित कर यह नाम अर्जित किया है। वह पूरी तरह पिता के आदेशों का पालन करने वाला एक आदर्श पुत्र है। रण कौशल और सूर वीरता में अपने पिता रावण के समान ही वह अद्वितीय है। कुंभकरण रावण की नीतियों का विरोध करता है, किंतु भाई के इच्छा को ध्यान में रखते हुए युद्ध भूमि में आता है। रावण और मेघनाथ की भाँति वह युद्ध में कुशल तो नहीं है, किंतु अपनी शारीरिक शक्ति के दम पर युद्ध में भाग लेता है, जहाँ वह रावण और मेघनाथ की अपेक्षा आसानी से मारा जाता है।

निष्कर्षत: आज हम देख सकते हैं कि तुलसीदास रामचरितमानस के द्वारा चरित्र प्रस्तुतीकरण के माध्यम से भारतीय समाज के सामने शिष्टाचार, शालीनता, नैतिकता उच्च मानवीय मूल्य और मर्यादा प्रस्तुत करते हैं। लोक मर्यादा के मूल्य रामचरितमानस के पात्रों में कूट-कूट कर भरे हुए हैं। यही तुलसी की श्रेष्ठता का कारण भी है।

मानस में महाकवि तुलसीदास ने अपने पात्रों के माध्यम से मानव जीवन के व्यापक चरित्र को उद्घाटित किया है। सभी पात्र अपने-अपने उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं, जो मानव समाज के लिए प्रेरणा बनते हैं। आज के संदर्भ में अगर कहा जाए तो रामचरितमानस चरित्र निर्माण की वह मल्टी नेशनल कंपनी है, जहाँ मानस के आदर्शों को जीवन में उतारकर सभ्य सुशिक्षित समाज का निर्माण किया जा सकता है। ❑

संदर्भ संकेत :

1. श्रीरामचरितमानस : तुलसीदास, गीता प्रेस, गोरखपुर, संवत् 2076, बालकांड, पृष्ठ 167.
2. श्रीरामचरितमानस : वही, बालकांड, पृष्ठ 240.
3. श्रीरामचरितमानस : वही, अयोध्याकांड, पृष्ठ 559.
4. श्रीरामचरितमानस : वही, अयोध्याकांड, पृष्ठ 518.
5. श्रीरामचरितमानस : वही, अयोध्याकांड, पृष्ठ 504.
6. श्रीरामचरितमानस : वही, लंकाकांड, पृष्ठ 794.

सहायक ग्रंथ :

1. गोस्वामी तुलसीदास : शुक्ल, रामचंद्र, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली.
2. हिंदी साहित्य का इतिहास : शुक्ल, रामचंद्र, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी.
3. परंपरा का मूल्यांकन : शर्मा, रामविलास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.

हिंदी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग
हेमवती नंदन बहुगुणा गढ़वाल केंद्रीय विश्वविद्यालय, श्रीनगर गढ़वाल (उत्तराखंड)
ईमेल- amitsirmu@gmail.com, मोबाइल-09653302787

आलेख

समकालीन कवि भगवत रावत के काव्य-चरित्र

✍ शंकर शर्मा

समकालीन कविता में काव्य-चरित्र सामान्य जन के जीवन संघर्ष और द्वंद्व को अभिव्यक्त करते हैं। आज के चरित्र में मिथकीय चरित्र की तरह कोई दैवीय शक्ति नहीं होती। वे अपनी सीमाओं और शक्तियों के साथ यथार्थ रूप में अपनी क्रियाशीलता, संघर्ष और द्वंद्व के बीच निखार पाते हैं। भगवत रावत के काव्य का अनुशीलन करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि उनके काव्य चरित्र सामान्य जन हैं। वे कल्पना से किसी चरित्र का निर्माण नहीं करते, अपितु समाज के यथार्थ चरित्र को प्रस्तुत करते हैं। भगवत रावत के काव्य-चरित्र हमें अपने आसपास के जन सामान्य के रूप में परिलक्षित होते हैं, जिससे हम रोज बातें करते हैं या फिर समाज में उन्हें देखते हैं। भगवत रावत की कविताओं में आत्मीय चेहरे हमारे परिवेश के चरित्र हैं, जो कठिनाइयों, अभाव और संघर्ष के बीच उभरते हैं।

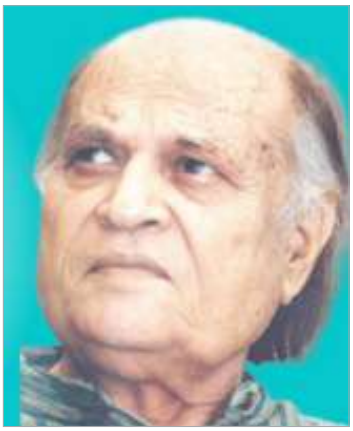

इन्हीं चेहरों में एक चेहरा तीजन बाई का है, जो लोगों को महाभारत की कथा गा-गा कर सुनाती हैं। साथ ही साथ महाभारत की कथा के प्रसंगों का बीच-बीच में अभिनय भी करती हैं। तीजन बाई देश-विदेश का चक्कर भी लगा आई हैं और लोगों के चेहरे भी पहचानने लगी हैं। कवि तीजन बाई से कहते हैं कि तुम चाहे दुनिया-जहान में घुम आना, चाहे छत्तीसगढ़ी गाने को पूरी दुनिया में फैला देना, परंतु जिन सामान्य लोगों के समक्ष तुम गाती आई हो उन्हें न भुला देना, क्योंकि वे ग्रामीण जन तुम्हारे द्वारा गाए गए महाभारत की कथा के माध्यम से ही आज भी न्याय और अन्याय को पहचानते हैं-तुम दुनिया-जहान में घूम आना,/गूँज आना/जगह-जगह अपना छत्तीसगढ़ी गाना/लेकिन उनके बीच जाना मत छोड़ना /उनके लिए गाना मत छोड़ना/ जो तुम्हारा एक-एक बोल सच मानते हैं/जो न्याय और अन्याय/तुम्हारी ही बोली में/पहचानते हैं।[1]

छत्तीसगढ़ प्रांत की अनेक आदिवासी स्त्रियों के अभावमय जीवन का आधार श्रम ही है। गरीब आदिवासी स्त्रियों पर महाजनों की लोलुप नजरें रहती हैं और वे हमेशा मौके की ताक में रहते हैं। 'कहाँ गई री अमरीका' शीर्षक कविता में भगवत रावत ने अमरीका नामक स्वाभिमानी मजदूरीन की क्रियाशीलता और जीवन संघर्ष को अभिव्यक्त किया है। छत्तीसगढ़ प्रांत की अनेक आदिवासी स्त्रियों का नाम अमरीका भी होता है। अमरीका बड़े यत्न से सिर पर ईंटें रखकर सीढ़ी चढ़ती जाती है। लोग उसे कभी चूना लाने को तो कभी मिट्टी लाने को कहते हैं। उसे याद ही नहीं कि कब उसने शीशे में अपना मुँह देखा था। उसकी आँखें कारी और

बाल भूरे हैं। वह बात-बात पर हँसती है और दुनिया की नजरों को ताड़कर हमेशा चौकस और सावधान रहने वाली स्त्री है--बात बात पर हँसते-हँसते/सबकी नजर ताड़ने वाली/सावधान/चैकन्नी चौकस/कसी कमर की हिम्मत वाली/धोती बाँधे।[2]

वर्तमान लोक जीवन में एक ऐसी मानसिकता का विकास हुआ है कि निम्नवर्ग के लोग अगर विकास करने लगें तो लोग उसे आत्मसात नहीं कर पाते और ईर्ष्या से भर उठते हैं। भगवत रावत 'सोच रही है गंगाबाई' शीर्षक कविता में गंगाबाई के माध्यम से समाजिक चेतना के खोखलेपन और वर्गीय द्वंद्व को अभिव्यक्त करते हैं। गंगाबाई लोगों के घर पर बरतन-झाड़ू करके अपने बेटे को पढ़ाती है। उसका बेटा जब काम पर लग जाता है तो गंगाबाई के प्रति लोगों की सोच यकायक बदल जाती है। मुहल्ले के लोग उससे कटे-कटे से रहने लगते हैं जैसे उसने कोई अपराध किया हो। नौकरी मिलने के उपरांत गंगाबाई का बेटा अपनी माँ को दूसरों के घर पर काम करने के लिए जाने नहीं देता, क्योंकि इससे उसकी सामाजिक हैसियत में कमी आती है। गंगाबाई के काम पर न जाने से उसके जात-बिरादरी के लोग उसकी खुशहाली से जल-भून जाते हैं और उसे 'महारानी' का संबोधन देते हैं-अम्मा,अब तू कभी किसी साले के घर का/झाड़ू-पोछा नहीं करेगी/घर बैठेगी आखिर मेरी भी इज्जत है/बस, उस दिन से उसके/ पास-पड़ोस जात-बिरादरी वाले मुँह बिचकाकर/ आपस में गंगाबाई को / कहने लगे गंगा महारानी।[3]

हमारा देश भले ही विकास और उन्नति के पथ पर पग बढ़ा रहा हो, परंतु आज भी हमारे देश में ऐसे तमाम लोग हैं, जो बदहालीपूर्ण, जानवरों-सा जीवन जीने को मजबूर हैं। 'कचरा बीननेवाली लड़कियाँ' सामाज के विद्रूप रूप को प्रत्यक्षता से दर्शाती है। कचरा बीनने वाली लड़कियाँ हर शहर में दिख जाती हैं, जिनके न माता-पिता का पता हैं, न घर का ठिकाना। वे कचरे में ही जन्म लेती हैं और कचरे में ही पलकर बड़ी होती हैं। कचरे की ये पैदाइश जिन्हें न अच्छा खाने को मिलता है न अच्छा पहनने को। समाज के नैतिक पतन की इंतहा तो तब होती हैं जब वे लड़कियाँ कचरे में से कुछ उठाकर अपने मुँह में चुपचाप डाल लेती हैं- जब कोई छपा हुआ फोटू/या साबुत डिब्बा मिल जाता है उन्हें/ तो वे रख देती हैं उसे अलग सँभालकर/और उस समय तो आप/ उन्हें देख ही नहीं सकते जब वे/ कचरे में से न जाने क्या उठाकर/ चुपचाप मुँह में रख लेती हैं।[4]

समाज में स्त्री चरित्रों की कहानी एक ही है, बस स्थान, काल और परिवेश का अंतर है। समय चाहे जितना बदले, परंतु समाज में नासूर घाव की तरह वर्गीकृत समाज कभी परिवर्तित नहीं होगा। भगवत रावत के काव्य में अभिव्यक्त आत्मीय लोक चरित्र के संबंध में रेवती रमण का कहना है, "भगवत रावत की कविताओं में इतनी संख्या में आत्मीय चेहरे हैं कि इच्छा होती है कि कहूँ-ये देखकर आत्मीय चेहरों की कविताएँ हैं, आत्मीय चेहरों की आभा से जगमग।

वर्तमान समाज में कुछ ऐसे लोग भी हैं, जो पैसों के लिए कुछ भी करने को तैयार हैं। यहाँ तक कि संबंधों को भी उन्होंने ताक पर रख दिया है। 'भरोसा' शीर्षक कविता में ऐसी मनोवृत्ति और उससे पड़ने वाले मानसिक प्रभाव का वास्तविक चित्रण किया गया है, जिसमें एक निम्नवर्गीय चरित्र बरतन माँजने वाली बाई है, जो बहुत बोलती है और सभी को अपनी आपबीती सुनाती है। उसके मैले झोले में उसकी बेटी की एक पुरानी तस्वीर है, जिसे उसके पति और सगे भाई ने मिलकर बेच दिया है। इस घटना से उसका मानसिक संतुलन बिगाड़ दिया

है। वह इन दोनों को उनके इस अपराध की सजा दिलवाना चाहती है, जिसके लिए वह विगत सात वर्षों से बरतन माँज कर पैसे जोड़ रही है। वह सबको बताती है कि इसके लिए उसने थाने में रिपोर्ट लिखवाई, नेताओं से मिली, पुलिस अफसर से मिलकर दोनों मुजरिमों के नाम पते दिए और तो और, कुछ जानकार लोगों के जरिए वह जगह पर पैसे भी पहुँचा आई है। इतना कुछ करने के बाद अब उसे कानून पर पूरा भरोसा है कि दोनों अपराधियों को सजा मिलेगी और उसकी लड़की, जो अब भी लड़की है, उसे वापस मिल जाएगी। उसे भरोसा है कि एक दिन/अपराधी पकड़े जाएँगे/ उसे भरोसा है कि एक दिन/उसकी लड़की मिल जाएगी/ उसे भरोसा है/ उसकी लड़की जिन्दा है/उसे भरोसा है/उसकी लड़की/ अब भी लड़की है।[5]

वर्तमान समाज में सामाजिक हैसियत के आधार पर नामकरण होने लगे हैं। 'कहानी' शीर्षक कविता में भगवत रावत ने एक ही नाम के तीन चरित्रों का उल्लेख करते हुए समाज का वर्गीकरण किया है। प्रभा मध्यवर्गीय चरित्र है, जिसने एम.ए, बीएड किया किया है, प्ररभा

निम्नवर्गीय चरित्र है, जो बरतन माँजने वाली बाई है तथा पब्बी उच्चवर्गीय चरित्र है। ये सभी चरित्र समाज में अपनी-अपनी भूमिका अदा करने में लगे हुए हैं। प्रभा, परभा और पब्बी तीनों के नाम एक ही हैं, लेकिन सामाजिक हैसियत ने तीनों के नाम में अंतर ला दिया है और तीनों नाम के आधार पर ही उच्च, मध्य और निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं । भगवत रावत का मानना है कि प्रभा की शादी हो जाएगी, वह पब्बी के बच्चों को हिंदी पढ़ाएगी। पब्बी अपनी माँ की तरह अपनी आठ-नौ साल की बेटी को लेकर पब्बी के बंगले पर काम करने लगेगी और परभा बाई बन जाएगी। परंतु पब्बी में कोई परिवर्तन नहीं होगा। अगर वह कभी नाटक या नाचने गाने के बहाने परभा की भूमिका अदा करेगी तो अखबारों की सुर्खियाँ बन जाएगी- अव्वल पब्बी ने अपना रूप-रंग /ज्यादा नहीं बदला है/जब भी वह नाटक करने /या नाचने गाने के बहाने/ परभा की भूमिका में आ जाती है/तो उसकी तस्वीर/जगह-जगह/ अखबारों में छप जाती है।[6]

अभावजन्य जीवन में आजीविका के लिए स्त्री और पुरुष दोनों को श्रम और संघर्ष करना पड़ता है। गरीब परिवार में लड़कियों के श्रम अधिक करने के कारण समय से पहले ही उनका शरीरिक विकास शुरू हो जाता है। इसलिए ''गरीब घर की लड़कियों का यौवन आरंभ भी जल्दी होता है और समाप्त भी शीघ्र होता है। इन दोनों के लिए जिम्मेदार वह जीवन होता है जो उन्हें जन्म से पहले मिल चुका है।''[7] भगवत रावत ने 'जो भी पढ़ या सुन रहा है इस समय' शीर्षक कविता में भूरी भाभी नामक आदिवासी स्त्री चरित्र के जीवन-संघर्ष और उनके प्रति अपने आकर्षण को व्यक्त किया है। भूरी भाभी की नई-नई शादी हुई थी और वह देखने में बहुत सुंदर थीं। बचपन में वह भगवत रावत को गोद में लिए फिरती थीं और भूरी भाभी का कोमल स्पर्श ने उन्हें इस हद तक आकर्षित कर लिया था कि वे बचपन में ही सोचने लगे कि बड़े होकर वे भूरी भाभी से ही शादी करेंगे। खैर यह सोच बचपन की थी। कुछ वर्षों तक वे भूरी भाभी से नहीं मिले। एक दिन उन्होंने भूरी भाभी को देखा तो वे आश्चर्यचकित रह गए, और उन्हें भौजाई कहकर बुला भी

नहीं पाए और न ही भूरी भाभी डन्हें लाला कहकर पुकार पाईं, क्योंकि जीवन के अभाव ने उनके सौंदर्य को तांबाई रंग में परिणत कर दिया था–पिछले साल/ चैतुओं के डेरे के साथ/ मेरे घर के बगल वाले मैदान में/ पत्थरों का चूल्हा बनाकर/ जब उसने लकड़ियाँ सुगलाई/ तब सड़क से निकलते हुए/ मेरे मुँह से/ निकल नहीं पाया भौजाई / और न उसके मुँह से निकला लाला/ लकड़ियाँ जरूर सुगलीं/ और उनकी आँच में/ एक क्षण तो दिखा/ तांबाई हो चुका उसका भूरा चेहरा / और धुएँ में गुम हो गया।[8]

समाज में स्त्री चरित्रों की कहानी एक ही है, बस स्थान, काल और परिवेश का अंतर है। समय चाहे जितना बदले, परंतु समाज में नासूर घाव की तरह वर्गीकृत समाज कभी परिवर्तित नहीं होगा। भगवत रावत के काव्य में अभिव्यक्त आत्मीय लोक चरित्र के संबंध में रेवती रमण का कहना है, ''भगवत रावत की कविताओं में इतनी संख्या में आत्मीय चेहरे हैं कि इच्छा होती है कि कहूँ– ये देखकर आत्मीय चेहरो की कविताएँ हैं, आत्मीय चेहरों की आभा से जगमग। इनमें संबंधों के उदात्त भाव और रूप हैं, गहरे रचनात्मक स्तर पर वर्गीय आधार की समझ के साथ। इनमें माँ का प्रेरणादायी, दुख में सांत्वना देने वाला एक सर्वथा दिव्य चेहरा है और हाँ, भूरी भाभी का वह चेहरा भी जो चूल्हे की आँच में ताम्बाई हो गया है। यह एक उदास चेहरा है। इन चेहरों की शिनाख्त में भगवत रावत के इबादत में प्रखर समाजशास्त्रीय चिंतन और जनबोध सक्रिय है। वर्ग विभाजित समाज की नैतिकता को मुँह चिढ़ाता हुआ, उसे जगह–जगह बेनकाब करता हुआ। वह चाहे 'कचरा बीननेवाली लड़कियाँ' हों या एक कहानी की प्रभा। प्रभा, परभा और पब्बी एक ही रूप के तीन वर्गीय नाम हैं, सामाजिक हैसियत से नाम बनता और बिगड़ता भी है।''[9] वर्तमान समाज में आज भी हजारों ऐसे निम्नवर्गीय चरित्र हैं, जो आर्थिक विपन्नता के कारण अपनी इच्छाओं को तिलांजलि देकर जीवन निर्वाह के लिए मजदूरी को विवश हैं। कविता में रामचरण ऐसे ही सामाजिक चरित्र का प्रतिनिधित्व करता है। रामचरण कवि के बचपन का दोस्त था और जात का कोरी था। वह इतना अच्छा गाता था कि कवि भी उसी की तरह गाना चाहता था। छठवीं तक वह कवि के साथ पढ़ा और उसी साल उसका विवाह भी हो गया। इसके बाद आर्थिक अभाव के कारण उसने पढ़ाई छोड़ दी और कई वर्षों तक कवि की मुलाकात रामचरण से नहीं हुई। एक दिन अचानक कवि उसे एक बिल्कुल अलग परिवेश में गाते हुए देखता है, जहाँ वह मालगाड़ी में कोयला लाद रहा है–बहुत बरसों बाद/मैंने देखा उसे /वह गा रहा था/ सिर पर कोयले का डला रखे/माल गाड़ी में कोयला लाद रहा था/चेहरा कोयले की राख में गुम हो गया था/ लेकिन उसकी बीड़ी में/उसके गाने की आग थी।[10] रामचरण की 'बीड़ी में गाने की आग का होना' उसके अंतर्मन का द्वंद्व है। यह विरोध समाज और अपने अभावग्रस्त जीवन का है, जो बीड़ी की तरह अंदर–ही–अंदर सुलग रहा है। भगवत रावत का अपने काव्य चरित्र के संबंध में कहना है, ''अगर मेरी कविता के नायक को पहचानना है तो उसकी एकमात्र पहचान होगी कि वह मध्यवर्गीय व्यक्ति है, जो ईमानदार है, जीवन के लिए, प्रगतिशील मूल्यों के लिए संघर्ष कर रहा है। उसकी पीड़ा, उसका तनाव मेरी कविता में दिख पड़ेगा।[11] 'लड़का अजूबा' शीर्षक कविता में लड़का अजूबा एक ऐसा चरित्र है, जो आग के माध्यम से समाज में प्रगतिशील मूल्यों के लिए क्रांति लाना चाहता है। समाज के ठेकेदार इसे बर्दाश्त नहीं कर पाते, क्योंकि अगर समाज में बदलाव आ गया तो उनका साम्राज्य समाप्त हो जाएगा। वे अपने खिलाफ उठने वाले हर आवाज को दबा देना चाहते हैं। इसलिए वे लड़का अजूबा को किसी भी हालत में पकड़ना चाहते हैं–लेकिन समझदार/ झुके हुए टेबिलों पर/ करते हुए विचार/सहमत है/ कि आग की खबर फैलाने वाले/लड़के को पकड़ो/ पकड़ो पकड़ो।[12]

भगवत रावत ने अनेक कविताओं में लोक–चरित्रों के माध्यम से लोक जीवन में व्याप्त मानवीय संवेदना और आत्मीयता की अभिव्यक्ति की है। 'प्याज की एक गाँठ' शीर्षक कविता में बशीर भाई एक ऐसे प्याज बेचने वाले व्यक्ति हैं, जिनमें गहरी मानवीय संवेदना और आत्मीयता है, जिसके कारण ग्राहक उनकी दुकान की ओर आकर्षित होते हैं। प्याज की बढ़ती कीमत की मार के कारण ग्राहक एक किलों के स्थान पर आधा किलों प्याज माँगता है। ग्राहक को प्याज तौलकर देते समय प्याज की एक गाँठ

तराजू में ज्यादा हो जाती है। बशीर भाई प्याज की एक गाँठ तराजू से निकाले या न निकाले इसी उधेड़बुन में वे ग्राहक से सौदा तय करते हैं। ग्राहक के साथ लौकिक संबंध और आत्मीयता के फलस्वरूप वे महँगाई के दौर में भी प्याज की एक गाँठ ग्राहक को ज्यादा तौल देते हैं। बशीर भाई के इस अंतर्द्वंद्व और लोक जीवन में आत्मीयता के संबंध को वास्तविकता से बड़े ही सूक्ष्म रूप से अभिव्यक्त किया गया है- प्याज की एक गाँठ/ और उतारे या न उतारे/ इस सोच में/उनका हाथ/ ग्राहक से रिश्ता तय करता सा/ एक क्षण को/ हवा में रुका / और आखिरकार/बशीर भाई जीत गए।[13]

भगवत रावत ने सामान्य जन की क्रियाशीलता, श्रम और स्वाभिमान को वास्तविकता से चित्रित किया है। लोक जीवन में स्वाभिमान को बहुत महत्व दिया जाता है। भले ही वे गरीब हों, अगर उनके स्वाभिमान पर चोट पर उसे बर्दाश्त नहीं कर पाते हैं। भगवत रावत ने 'अब ऐसा कोई रास्ता नहीं बचा' शीर्षक कविता में एक साथ तीन लोक चरित्र को तीन विशिष्ट विशेषताओं के साथ प्रकट किया है। प्रथम लोक चरित्र एक नेक दिल और स्वाभिमानी व्यक्ति पंडित श्याम सुंदर दास का है। इन्होंने नेक नियति से जीवन व्यतीत करते हुए आजीवन दूसरों की सहायता की। परंतु उनके स्वाभिमान को अगर भगवान भी चोट पहुँचाए तो उनसे भी लड़ बैठते हैं। द्वितीय चरित्र गप्पे कक्का का है, जो चाट का ठेला लगाते थे और अपनी चीजों को बेचने के लिए मधुर वचन से ग्राहकों का मन मोह लेते थे। लोक जीवन की यही आत्मीयता ही लोगों में अपनेपन का बोध कराती है। तृतीय चरित्र रहमान का है, जो सभी का दोस्त है। उसके मुँह में हमेशा गाली रहती है। रहमान अगर किसी से नाराज हो जाता तो उर्दू में बातें करने लगता था। उसके मुँह में गाली होना सामाजिक व्यवस्था के प्रति विद्रोह को ही अभिव्यक्त करता है- एक था रहमान जो सबका दोस्त होता था / बिना गाली दिए किसी को आवाज नहीं देता था/ जिससे नाराज हो जाता उसी से उर्दू बोलने लगता था[14]

भगवत रावत के काव्य में सामाजिक जीवन के पारिवारिक चरित्र में गृहस्थ पत्नी का चित्रण है, जो सारे कष्टों को सहते हुए पारिवारिक दायित्व का निर्वहन करती है। संवेदनशील और प्रेरणादायी माँ का चित्रण है, जो भगवत रावत के कवि-कर्म की प्रेरणा-स्रोत रही हैं तथा बेटी के बालमन का मनोवैज्ञानिक चित्रण भी है। इसके अतिरिक्त भी हीरामन, हीराबाई, झबुआ की मजदूरिन, आदि अनेक चरित्र हैं, जो सामाजिक जीवन की विसंगति, अभाव आदि के बीच अपने होने का अहसास दिलाते हैं।

संवाद चरित्र के क्रिया-कलाप, रहन-सहन, क्रियाशीलता आदि को अभिव्यक्त करते हैं। किसी भी तथ्य को जीवंत और प्रभावपूर्ण रूप से चित्रित करने के लिए काव्य में चरित्र के संवाद को प्रस्तुत करना आवश्यक होता है। पाठक पात्रों के संवादों से ही उनकी मन:स्थिति का पता लगा लेता है। भगवत रावत की कविता में चित्रित चरित्र की सबसे बड़ी कमजोरी है कि पात्रों के द्वंद्व और संघर्ष को पात्र नहीं, अपितु भगवत रावत कवि संवाद के माध्यम से स्वयं ही व्यक्त कर देते हैं। इससे पात्रों की क्रियाशीलता और चेतना आदि में कमी आती है। ऐसा नहीं है कि भगवत रावत के चरित्र में संवाद नहीं है, परंतु उसकी मात्रा अपेक्षाकृत कम है।

निष्कर्षत: आधुनिकीकरण और शहरीकरण ने लोक जीवन और उसके स्वभाव पर अपना प्रभाव अवश्य छोड़ा है। लोक जीवन में रिश्तों में जटिलता विसंगति और जड़ता किसी से छिपी हुई नहीं है। शहरीकरण और औद्यौगिकीकरण के दबाव इतने बढ़े कि लोग जीवन बोध, लोक अनुभव एवं चिंतन से निरंतर कटते जा रहे हैं। भगवत रावत अपने काव्य में लोक जीवन और चरित्र के माध्यम से संबंधों की वह आत्मीयता वापस पाना चाहते हैं, जो जीवन की जटिलता में कहीं खो गए हैं, जिसे वे बचपन से ही देखते आ रहे हैं। भगवत रावत का मानना है कि आत्मीयता ही भारतीय लोक जीवन की पहचान है और बचपन से ही अनुभव किया है। भगवत रावत की सहानुभूति उन श्रमिकों के साथ है, जो जीवन की क्रियाशीलता और संघर्ष में आज भी अडिग भाव से खड़े हैं। भगवत रावत की काव्य भावना वैश्विक चिंतन-सृजन का फलक तैयार करती है, जो साम्राज्यवादी-पूँजीवादी व्यवस्थाओं से तीसरी दुनिया के देशों के

शोषित लोगों के संघर्ष और दुख को आत्मसात करती हुई उनके पक्ष में खड़ी होती हैं। भगवत रावत के काव्य चरित्र वह सामान्य जन हैं, जिनमें खुशी, गम, अवसाद आदि सभी कुछ है, वह चाहे गंगाबाई हो या गप्पे कक्का, बशीर भाई हो या लड़का अजूबा, कचरा बीननेवाली लड़कियाँ हों या फिर भूरी भाभी। यही कारण है कि उनकी कविताओं में लोक जीवन और चरित्र की क्रियाशीलता सहजता के साथ रूपायित है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. भगवत रावत : 'ऐसी कैसी नींद', वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2004 पृष्ठ- 106
2. भगवत रावत : 'हुआ कुछ इस तरह', परिमल प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 1998 पृष्ठ-35
3. भगवत रावत : 'सच पूछो तो', राधाकृष्ण प्रकाशन, प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1996 पृष्ठ-20
4. वही, पृष्ठ -28
5. विकास (संपा.) : 'निर्वाचित कविताएँ', साहित्य उपक्रम, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2004, पृष्ठ- 78
6. भगवत रावत : 'हुआ कुछ इस तरह', पृष्ठ -27
7. डॉ. बृजबाला सिंह : 'भगवत रावत अपने समय का चरितार्थ, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2006 पृष्ठ -173
8. भगवत रावत : 'बिथा कथा', प्रवीण प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1997,पृष्ठ -71
9. वसुधा अंक 56-57, पृष्ठ-50
10. भगवत रावत : हुआ कुछ इस तरह, पृष्ठ-115
11. वागार्थ अंक 146 सितंबर 07, पृष्ठ-22
12. भगवत रावत हुआ कुछ इस तरह पृष्ठ-82
13. विकास (संपा.) : 'निर्वाचित कविताएँ', पृष्ठ -75
14. भगवत रावत : 'ऐसी कैसी नींद', पृष्ठ-30

कछार कॉलेज,
सिलचर असम-788001
मो. 9401287200

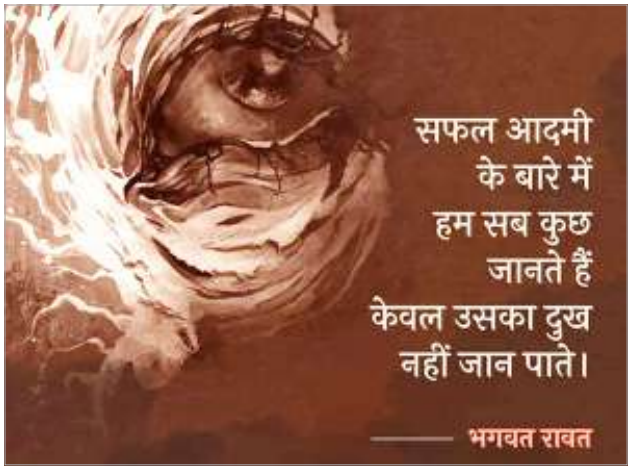

आलेख

असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि

✍ स्मिता रजक

असमीया उपन्यास के उदय के कई कारण हैं। जिनमें पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली, पत्र-पत्रिकाएं, मध्य वर्ग का उदय एवं पाश्चात्य फॉर्म आदि गिने जाते हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट किया गया है कि भले ही असमीया उपन्यास का विकास पाश्चात्य ढांचे से होकर गुजरा हो, लेकिन उपन्यास में निहित समस्याएं, संवेदनाएं और संघर्ष भारत भूमि की हैं।

बीज शब्द :

असमीया, औपनिवेशिक, पद्मावती देवी फुकननी, अंग्रेजी, नायक, नायिका, मध्यवर्ग, लेखिका, छापाखाना, पत्र-पत्रिकाएं, पृष्ठभूमि।

प्रस्तावना :

उपन्यास आधुनिक युग का सबसे सशक्त विधा रूप है। भारत में उपन्यास के उदय के लिए, अंग्रेजी राज, अंग्रेजी शिक्षा, अंग्रेजी शिक्षाविदों द्वारा लेखन को बढ़ावा दिए जाने, अंग्रेजी पुस्तकों का भारतीय भाषाओं में अनुवाद, छापे की मशीन एवं नए पाठक वर्ग के निर्माण; जैसे कारणों को भूमिका के तौर पर माना जाता है। इन कारणों ने नवीं सदी की आख्यान परंपरा को एक विशेष ढांचे (अंग्रेजी ढंग) के प्रभाव से पुनर्जीवित किया। आख्यान एक पूर्वनिर्धारित रूप और अंतर्वस्तु के खांचे से संबद्ध है तो उपन्यास इन दोनों खांचों को तोड़ता हुआ एवं उसकी परंपरा को आधुनिक संदर्भों से निखारता हुआ एक आधुनिक रूपबंध है। यूरोप में औपन्यासिक रूपबंध का इस्तेमाल विशेष संस्कृति, सभ्यता और आर्थिक उन्नति के तहत एक विशेष व्यक्तिवादी मध्यवर्गीय जीवन की अभिव्यक्ति के लिए हुआ। भारत में उपन्यास का उदय यूरोप की तुलना में कुछ देर से हुआ। भारत में उपन्यास किसी विशेष खांचे में बंधने के बजाय विविध रूपों में दस्तक देता है। मसलन भारतीय उपन्यास का उदय यथार्थवादी, भारतीय एवं दास्तानों के रूप में हुआ।

□□□□□□□□□□□□□□□□

भारतीय उपन्यास के परिप्रेक्ष्य में असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि को देखने और परखने के उद्देश्य को सामने रख प्रस्तुत शोधालेख तैयार किया गया है। औपन्यासिक फॉर्म और विषय वस्तु को उजागर करना भी ध्येय रहा है।

□□□□□□□□□□□□□□□□

प्रस्तुत शोधालेख में विश्लेषणात्मक, तुलनात्मक एवं आलोचनात्मक पद्धति का प्रयोग किया गया है।

महत्व :

भारत की औपन्यासिक पृष्ठभूमि से कई मायने में असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि मेल खाती है। परंतु भारतीय औपन्यासिक पृष्ठभूमि से जो बात असमीया उपन्यास को अलग करती है, वह है एक स्त्री द्वारा औपन्यासिक शुरुआत। इतना ही नहीं असमीया उपन्यास विशेष जनजाति की समस्याओं को उठाने के कारण भारतीय औपन्यासिक जगत में एक अलग पहचान रखता है।

विश्लेषण :

बिरिंचि कुमार बरुवा अपने 'असमीया साहित्य का इतिहास' नामक पुस्तक में उपन्यास के उदय पर प्रकाश डालते हैं। उनके अनुसार औपनिवेशिक शासन में पाश्चात्य शिक्षण प्रणाली के अंतर्गत पाश्चात्य साहित्य से प्रेरणा प्राप्त कर असमीया उपन्यास अस्तित्व में आया। "The novel in Assamese came in the wake of the Western system of education that was introduced by the British Administration, and it drew its inspiration from the literature of the west."[1]

यह धारणा बहुत कुछ मराठी के आलोचक आर.बी. जोशी जी से मिलती-जुलती है। जोशी जी मराठी उपन्यास के उदय की पृष्ठभूमि स्पष्ट करते हुए इन्हीं कारणों का उल्लेख करते हैं।

पद्मावती देवी फुकननी कृत 'सुधर्मार उपाख्यान' (1880 ई.) के विषय में उनका मानना है कि यह प्रथम उपन्यास के रूप में प्रख्यात हुआ, लेकिन हेमचंद्र बरुवा कृत 'बाहिरे रंग-संग भीतरे कोरा भातुरी' को उपन्यास के रूप में पहला प्रयास कहते हैं। वे औपन्यासिक ढांचे के रूप में इसकी प्रशंसा करते हैं, क्योंकि उपन्यास में प्लॉट है। इसके अतिरिक्त तत्कालीन समय के सामाजिक और धार्मिक जड़ता का विरोध होने के कारण उपन्यास की सराहना भी करते हैं। वे पहली बार इस उपन्यास में यथार्थवाद और चरित्र विकास को लक्षित करते हैं। बरुवा जी इस उपन्यास को सामाजिक कहते हैं। "The first attempt at anything approaching a plot, was Hemchandra BaruaÓs Bahire-oang Bhitare Kowa Bhaturi. As this is a novel with a purpose directed against the social and religious evils of the time, here for the first time realism and characterisation find fuller development."[2] वे ऐतिहासिक उपन्यास की प्रवृत्ति पर विचार करते हुए लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा कृत 'पदुम कुंवरी' को ऐतिहासिक उपन्यास के घेरे में रखते हैं। यह पदमा और सूरजया की एक दु:खान्त प्रेम कहानी है। इस प्रेम कहानी के अतिरिक्त दो विद्रोहियों की भी कहानी चलती है। एक कामरूप नामक प्रख्यात जमींदार है तो दूसरी ओर हरदत्त और वीरदत्त (नायिका के पिता और चाचा) हैं। इन जमींदारों की आपसी लड़ाई के साथ-साथ नायक और नायिका की प्रेम कहानी भी आगे बढ़ती है। बरुवा जी उपन्यास के शिल्प की सराहना करते हैं। उपन्यास में वर्णित विद्रोहियों की कथा के बीच प्रेमियों के जीवंत चरित्र को रखने, स्पष्ट विचार और शिल्प की गतिशीलता के लिए उपन्यास को महत्वपूर्ण मानते हैं।

बरुवा जी आगे चलकर पद्मनाथ गोहाईंबरुवा कृत 'भानुमति' पर टिप्पणी करते हैं। दरअसल 'भानुमति' एक पारिवारिक शोकपूर्ण उपन्यास है। इसमें दो प्रेमिकाएं एक युवक से और दो प्रतिद्वंद्वी युवक एक नारी से प्रेम करते हैं। भानुमति और चारु गोहाईं में प्रेम है, किंतु राजा भानुमति से विवाह करना चाहता है। चारु भीरु सिद्ध होता है, भानुमति आत्मगोपन करती है। चारु बंदी बना लिया जाता है। भानुमति पुरुष वेश धारण कर उसे छुड़ाना चाहती है। भानुमति की तरह एक प्रयास हिंदी उपन्यास में देखा गया है। किशोरीलाल गोस्वामी कृत 'प्रणयिनीप्रणय' नामक उपन्यास में प्रणयिनी अपने प्रेमी को वेश बदलकर मृत्यु दण्ड से बचाने निकलती है। राजघराने की भी एक लड़की चारु से प्रेम करती है, वह भी छुड़ाने की चेष्टा करती है। वध्यभूमि में चारु की मृत्यु वज्रपात से होती है। छल-प्रपंच, आत्महत्या, मृत्यु तथा वैराग्य से युक्त अनेक घटनाएं चलती रहती है। चरित्रों और कथा में स्वाभाविता और मनोवैज्ञानिकता का अभाव है। इस उपन्यास में ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में आधुनिक समस्याओं के चित्रण का भी प्रयास है। कुछ आलोचक इसे असमीया साहित्य का प्रथम उपन्यास भी मानते हैं।

बरुवा जी को इस उपन्यास में ऐतिहासिक व्याख्या की कमी और उपन्यास में किसी भी प्रकार के ऐतिहासिक ढांचे की भी कमी दिखती है। इसके अलावा उपन्यास में प्लॉट के न होने, चरित्र-विकास की कमी और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण के न होने की ओर भी संकेत करते हैं, "Though placed against historical settings, neither novel deals with any history as such. Moreover, neither in

plot- development nor in characterisation and psychological analysis do the novels show and distinction."[3]

असमीया उपन्यास के उदय को समग्र दृष्टि से देखने का प्रयास तिलोत्तमा मिश्र जी ने किया है। यह प्रयास उन्होंने मीनाक्षी मुखर्जी द्वारा संपादित पुस्तक 'Early Novels in India' के एक लेख में किया है।

तिलोत्तमा जी, अंग्रेजी शासन के आगमन, व्यापार संबंधी विकास की योजना का आरंभ, मिशनरियों द्वारा स्थानीय लोगों के सहयोग से लेखन कार्य की शुरुआत, छापेखाने की शुरुआत, इतिहास, पाठ्यपुस्तकों एवं पत्रिकाओं के साथ जोड़कर उपन्यास के उदय को देखती हैं। उनके अनुसार 'अरुणोदय' एवं 'मोउ' जैसे आरंभिक दौर के पत्र-पत्रिकाओं से उपन्यास लेखन की शुरुआत हुई।

पद्मावती देवी फुकननी कृत 'सुधर्मार उपाख्यान' (1884 ई.) को तिलोत्तमा जी असमिया का प्रथम साहित्यिक गद्य कहती हैं, जबकि तिलोत्तमा जी यह स्वीकार करती हैं कि कुछ आलोचक इसे उपन्यास कहते हैं, लेकिन तिलोत्तमा जी आगे चलकर इसे नैतिक काल्पनिक (पौराणिक) कथा के रूप में अभिहित करती हैं। 'सुधर्मार उपाख्यान' में मनोरमा नामक स्त्री अपने पति को सही मार्ग पर लाने की चेष्टा करती है। वह अपने पति के बुरे बर्ताव की निंदा नहीं करती वरन् उसे ईश्वर के समान पूजती है। यह कथा मनोरमा और उसके पति की कथा के साथ-साथ सत्यवन-सुधर्मा और माधवचंद्र- लीलावती की कथा भी है।

तिलोत्तमा जी 'सुधर्मार उपाख्यान' के शिल्प में कई प्रकार की त्रुटियां देखती हैं। उनका मानना है कि चरित्र को जीवंत रूप में चित्रित नहीं किया गया है। वे भौतिक वातावरण के वर्णन का अभाव चिन्हित करती हैं जिसमें यथार्थ का चिह्न नहीं मिलता है। उनके अनुसार पद्मावती उन स्थानों के वर्णन को छोड़ देती है, जिस स्थान पर मनोरमा को जंगल में छोड़ दिया जाता है। उस स्थान का वर्णन वास्तविक रूप में प्रकट नहीं हुआ है बल्कि मिथ के रूप में है। जहां शिकारी, साधु और आश्रम है। इसके अतिरिक्त जिस समय नाव उलट जाती है, उस समय मुश्किल से दो वाक्य सामने आते हैं। तिलोत्तमा जी लेखिका के अनुभव की कमी की ओर भी इशारा करती है; उनका मानना है कि लेखिका उच्च मध्यवर्गीय महिला को सुरक्षा प्रदान करती हैं। इसीलिए जोखिम भरे जीवन को दर्शाने का अनुभव उनके पास नहीं है। इतना ही नहीं वह आगे कहती हैं कि लेखिका का अनुभव धार्मिक पुस्तकों तक सीमित है। इसीलिए जंगल, जोखिम भरे जीवन और नदियों का वर्णन नहीं कर पाती हैं।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में कहा जाए तो 'सुधर्मार उपाख्यान' में तिलोत्तमा जी जीवंत चरित्र और बाह्य जगत के वर्णन का अभाव देखती हैं। अत: वे उपन्यास को पौराणिक या नैतिक काल्पनिक कथा भर मानती है। "Padmavati's fictional narrative remains at the level of a moral fable."[4]

तिलोत्तमा जी 'सुधर्मार उपाख्यान' के पश्चात् तीन उपन्यासों के प्रकाशन की चर्चा करती हैं। जो पाश्चात्य ढांचे के निकट ठहरते हैं। जिनमें लक्ष्मीनाथ बेजबरुवा कृत 'पदुम कुंवरी' (1890 ई.), पद्मनाथ गोहानी बरुवा कृत 'भानुमति' (1891 ई.) और 'लाहोरी' (1892 ई.) प्रमुख है। समानता की बात की जाए तो सामाजिक समानता ही इन उपन्यासों को 'सुधर्मार उपाख्यान' से जोड़ती है।

तीनों ही उपन्यास ऐतिहासिक रूप से अतीत की कथा है। केंद्रीय विषय प्रेम कहानी है। 'भानुमति' और 'पदुमकुंवरी' का अंत दु:खांत है तो लाहोरी का अंत मिलन के रूप में हुआ है।

जिस समाज में स्त्रियों का विवाह कम उम्र में हो जाया करता है, ऐसे समाज में युवाओं की प्रेम कहानी को दिखाया गया है। नायक-नायिका मध्यवर्गीय परिवार की नैतिकता का मान रखते हैं। प्रथम दो उपन्यास के नायक, ज्यों ही यह देखते हैं कि उनकी प्रेमिकाओं का विवाह निकट आ गया है, वे भाग खड़े होते हैं।

उपन्यास में कुछ खामियों को चिह्नित करते हुए तिलोत्तमा जी कहती हैं कि इन उपन्यासों में जातिगत-वर्गगत बंधन के परे जाकर लोक जीवन के साहसिक कार्यों से युक्त सच्चा रूप लाने की असमर्थता देखी गई

है। प्रेम और विवाह जैसे विषय बांग्ला उपन्यासों के अनुकरण पर लिखे गए हैं। वे इन उपन्यासों में बिहु संगीत और नृत्य के अभाव को रेखांकित करती हैं। इस अभाव का कारण स्पष्ट करती हुई तिलोत्तमा जी कहती हैं कि ऐसा इसलिए, क्योंकि उच्च वर्ग ग्रामीण लोक संस्कृति के विरुद्ध थे। इसलिए उपर्युक्त लेखकों ने इन दृश्यों के वर्णन से अपनी लेखनी को रोके रखा- "The inability of the early novelists of Assam to beyond the bounds of their class and caste boundaries and to present bold and realistic pictures of the lives of ordinary folk, is thus the greatest weakness of these novels."[5]

तिलोत्तमा जी रजनीकांत बरदलै कृत 'मिरिजियरी' (1894 ई.) उपन्यास का उल्लेख भी करती हैं।

'मिरिजियरी' यह रजनीकांत बरदलै का प्रथम उपन्यास है। न्यायधीश बरदलै को 1894 ई. में कार्यवश नेफा जाने का अवसर मिला था। वहां उन्होंने मिरि नामक जनजाति के रहन-सहन, आचार-विचार का अध्ययन किया था। उन्होंने अपने अध्ययन का उपयोग इस उपन्यास में किया है। जंकि (पानेई-जंकि) और पानेई (पानेई जंकि) बालसखा हैं, यौवन आने पर वे प्रणयी बन जाते हैं। गांव और परिवार की प्रथा के अनुसार उनके प्रेम को स्वीकृति नहीं मिलती है। उन्हें अनेक कष्टों का सामना करना पड़ता है। जनजाति की अदालत के अनुसार उन्हें मृत्यु दंड दिया जाता है। जीवित अवस्था में वे नहीं मिल सके किंतु सुवर्ण श्री नदी में दोनों के शव एक साथ तैरते दिखाई देते हैं। यह दु:खांत उपन्यास असमीया साहित्य का (और वह भी जनजाति पर आधारित) प्रथम सामाजिक उपन्यास कहा जाता है। इस उपन्यास में औपनिवेशिक कानून-व्यवस्था और मिरी-जनजाति की कानून-व्यवस्था के बीच सामाजिक न्याय पीस कर रह जाता है। आज अंतर्जातीय प्रेम और विवाह की छूट हम कानून व्यवस्था में देखते हैं। इसके बावजूद जंकी और पानेई जैसी घटनाएं भी घटती रहती है। इस लिहा? से रजनीकांत जी की यह रचना आज भी प्रासंगिक बनी हुई है।

तिलोत्तमा जी बरदलै जी के रचनाओं को पूर्ववर्ती औपन्यासिक कृतियों से भिन्न मानती हैं। वे इस मायने में भिन्न मानती हैं कि पूर्ववर्ती लेखकों ने जहां मध्यवर्गीय जीवन को आंकने की कोशिश की वहीं बरदलै जी ने असम के ग्रामीण जीवन को रखने का प्रयास किया है।

तिलोत्तमा जी असमीया का पहला उपन्यास किसे मानती है? इस पर उनकी कोई टिप्पणी नहीं मिलती है।

निष्कर्ष :

आलोचकों ने असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि निर्मित करते हुए कई तत्वों को रेखांकित किया है। ब्रिटिश शासन और उनकी शिक्षा प्रणाली, पत्र-पत्रिकाओं की शुरुआत या फिर उपन्यास का अंग्रेजी ढांचा आदि। ये सारे तत्व असमीया उपन्यास की पृष्ठभूमि निर्मित करने में एक अहम भूमिका रखते हैं। इसके बावजूद असमीया उपन्यास अपनी प्रकृति और समस्याओं को रखते हुए अंग्रेजी ढांचे से अलग एक जातीय मौलिक रूप भी रखता हुआ चलता है। ❑

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1. History of Assamese Literature- Birinchi Kumar Barua, Sahitya Akademi, First published: 1964, Si& Printing: 2016 , पृष्ठ संख्या- 167
2. वही, पृष्ठ संख्या-167
3. वही, पृष्ठ संख्या-167-168
4. Early Novels In India- Edited by Meenakshi Mukherjee- Sahitya Akademi, First published, 2002, पृष्ठ संख्या-14
5. वही, पृष्ठ संख्या-18

-शोधार्थी, प्रेसिडेंसी विश्वविद्यालय, कोलकाता
20डी, लाला बाबू लेन, कोलकाता-700002
मोबाइल नं : 9331514136
ईमेल : rajaksimita@gmail.com

किन्नर समुदाय एवं धार्मिक संघर्ष : एक विवेचनात्मक अध्ययन

✍ प्रियंका कलिता

'किन्नर' शब्द उस समुदाय के लिए प्रयुक्त होता है, जो लैंगिक रूप से न स्त्री होता है, न पुरुष ।'किन्नर' या 'हिजड़ा' शब्द सुनकर ही आम जनमानस के मन में यह धारणा बन जाती है कि ये लोग असामाजिक कार्य करने वाले लोग हैं, जो ताली बजाकर अपशब्दों का प्रयोग करने, छीना-झपटी करके आजीविका चलाने तथा प्रतिक्रियास्वरूप हाथापाई करने पर आमादा हो जाते हैं ।

भारतीय समाज में किन्नर समुदाय की स्थिति अत्यंत शोचनीय है। हमारे देश के संविधान में सभी नागरिकों के लिए समान अधिकारों का प्रावधान है, परंतु यह समुदाय सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा राजनीतिक अधिकारों को प्राप्त करने के लिए निरंतर संघर्षरत है। साधारण जनता की भाँति उन्हें धार्मिक-स्थलों पर स्वीकार्यता प्राप्त नहीं है । किन्नरों हेतु किसी भी प्रकार के पूजा-पाठ संबंधी धार्मिक कृत्य नहीं देखे जाते। यदि होते भी हैं तो यह समुदाय गोपनीय तरीके से अपने प्रयासों एवं अनुष्ठानों का क्रियान्वयन करता है। अत: किन्नर समुदाय अपने धार्मिक अधिकारों की प्राप्ति हेतु भरसक प्रयास कर रहा है ।

बीज-शब्द : किन्नर समुदाय, धार्मिक संघर्ष, अस्मिता, अधिकार, लैंगिकता ।

1. प्रस्तावना :

किन्नरों का इतिहास समृद्ध एवं संस्कृति गौरवशाली रही है - शतपथ ब्राह्मण, रामायण, महाभारत, जैन एवं बौद्ध ग्रंथ इत्यादि में किन्नर समुदाय का उल्लेख मिलता है। देश के प्राचीन साहित्य में किन्नर को तृतीय प्रकृति अथवा नपुंसक मानव के रूप में संबोधित किया गया है। संस्कृत के प्राचीन ग्रंथों में लिंग संबंधी ज्ञान पर प्रकाश डाला गया है ।

बीसवीं सदी के अंत और इक्कीसवीं सदी के आरंभ में हिंदी साहित्य जगत में स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श, वृद्ध विमर्श जैसे अनेक महत्वपूर्ण विमर्शों ने जन्म लिया। इन विमर्शों के अंतर्गत अस्मिता संबंधी प्रश्न तथा उन पक्षों पर विस्तृत रूप से चर्चा होने लगी, जो मुख्य विषय नहीं बन पाते थे। इनमें 'थर्ड जेंडर' विमर्श भी एक महत्वपूर्ण विमर्श है । यह समाज का उपेक्षित ,उपहासित एवं अत्यंत परित्यक्त वर्ग है - जिसे थर्ड जेंडर या तृतीय पंथी समाज के रूप में जाना जाता है। इस वर्ग को सदैव समाज द्वारा निम्न दृष्टि से देखा जाता है ।

परंपरागत रूप से जो लैंगिकता के आधार पर न नर होते हैं, न मादा। वह तीसरे लिंग के रूप में पहचाने जाते हैं। जैविक अनिश्चितता के कारण यह समुदाय

समाज में अन्य मानव समुदाय की भाँति सामान्य प्रतीत नहीं होता । लेखिका नंदा ने अपनी पुस्तक 'नाइदर मेन नोर वुमेन' जो सन 1990 प्रकाशित हुई, जिसमें किन्नर की परिभाषा इस प्रकार प्रस्तुत की गई है –

स्वयं किन्नर भी अपने आपको न तो आदमी और न ही औरत के रूप में स्वीकारते हैं, बल्कि उनका मानना है कि महिला-पुरुष द्विधार के बीच में कहीं-न-कहीं एक जीवन ईश्वर ने बनाया है, जहाँ स्त्रीत्व और पुरुषत्व की गहरी जड़ें सांस्कृतिक निर्माण के द्वारा प्रतिबंधित हैं। अधिकांश हिजड़े शारीरिक रूप से नर होते हैं या अंत:लिंगी (इंटरसेक्स), किंतु कुछ मादा (स्त्री) भी होते हैं।

(सिंह और गोंड 2016 : 43-44)

2. विश्लेषण :

संघर्ष जीवन का एक महत्वपूर्ण आयाम है। जीवन में संघर्ष के बिना मानव का अस्तित्व ही नहीं है। इसके माध्यम से ही मानव जीवन में गतिशीलता आती है। यह आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है । जब तक व्यक्ति मृत्यु को प्राप्त नहीं कर जाता, तब तक यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। प्रत्येक व्यक्ति या समूह इस प्रक्रिया से गुजरता है ।

वर्तमान समाज में विभिन्न अस्मिता समूह अपने अधिकारों के लिए निरंतर संघर्षरत हैं। इन्हीं समूहों के अंतर्गत किन्नर समुदाय भी अस्तित्व की लड़ाई लड़ रहा है। थर्ड जेंडर समुदाय आज भी शिक्षा एवं स्वास्थ्य की समान पहुँच से वंचित है। जिस कारण वे शैक्षिक रूप से पिछड़ेपन के शिकार हैं तथा साथ ही उन्हें विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना भी करना करना पड़ता है। इन्हें केवल समाज में शुभ कार्यों में बधाई देने वाले, ताली बजाने वाले, भिखारी, सेक्स वर्कर आदि के रूप में देखा जाता है। मनुष्य के रूप में आज भी इन्हें देखना कठिन प्रतीत होता है, किंतु समय बीतने के साथ कुछ किन्नर आगे भी बढ़े हैं, लेकिन इनकी संख्या नगण्य है ।

आज इक्कीसवीं शताब्दी के समाज में वैज्ञानिकता आने के पश्चात भी लोगों की मानसिकता में विशेष परिवर्तन नहीं आया है, क्योंकि किसी व्यक्ति का तृतीय लिंगी होना जैविक कारण है। भारत के संविधान में भी प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार प्रदान किए गए हैं, किंतु आज भी इस समुदाय को सामाजिक स्वीकार्यता प्राप्त नहीं हो पाई है ।

भारत में विभिन्न प्रकार के धार्मिक अनुष्ठान तथा पूजा-पाठ संबंधी मान्यताएँ हैं। किन्नरों हेतु किसी भी प्रकार के पूजा-पाठ संबंधी धार्मिक कृत्य नहीं देखे जाते। यदि होते भी हैं तो यह समुदाय गोपनीय तरीकेसे अपने प्रयासों एवं अनुष्ठानों का क्रियान्वयन करता है ।

जब किन्नर अपने परिवार से पृथक हो जाता है, तब वह अपने आपको किन्नर समुदाय के साथ जोड़ लेता है

तथा एक पारिवारिक संबंध स्थापित कर लेता है। इस समुदाय में गुरु की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। यहाँ गुरु का पद उनके माता-पिता तथा पत्नी के समान होता है। इनके शारीरिक लक्षणों के आधार पर इन्हें बेटा या बेटी माना जाता है, जबकि इनमें पूर्ण पुरुष या पूर्ण स्त्री नहीं होता। इस कारण इनमें माँ, बेटी, बेटा, बहन, पिता जैसे संबंध बन जाते हैं ।इसलिए इनके मध्य भावनात्मक स्तर पर संबंधों का आदान-प्रदान होता है ।

परिवार का उदाहरण देते हुए यहाँ घरानों के रूप उनका चित्रण किया गया है - भारत में हिजड़ों के सात घराने माने जाते हैं, यथा- मुंबई, पुणे और हैदराबाद जैसे अधिक जनसंख्या वाले शहरों में इनके केंद्र स्थापित हैं । हिजड़ों की चार शाखाएँ हैं, यथा- बूचरा, नीलिमा, मनसा और हंसा। बूचरा पैदाइशी हिजड़े हैं, नीलिमा बने, मनसा स्वेच्छा से शामिल तथा हंसा शारीरिक कमी के कारण बने हिजड़ा हैं । (वहीं : 57)

किन्नरों में गुरु-शिष्य परंपरा एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है, साथ ही इनके मध्य एक अनुशासन भी विद्यमान होता है। किन्नरों का एक सर्वमान्य गुरु होता है। गुरु का निर्धारण वरिष्ठता तथा सर्वस्वीकृति से होता है। इस गुरु का कार्य अपने शिष्यों को गीत तथा नृत्य में प्रशिक्षित करना होता है। एक गुरु के अनेकों शिष्य होते हैं तथा गुरु की यह जिम्मेदारी होती है कि वह शिष्यों की रक्षा करे। शिष्यों के मध्य किसी भी विवाद का निपटारा गुरु ही करता है। उनकी आमदनी का एक हिस्सा गुरु धर्मार्थ कार्यों हेतु अपने पास रखता है। वह किसी शिष्य पर जुर्माना अथवा उसके निष्कासन के फैसले का अधिकार भी रखता है ।

सभी धर्म के किन्नर बेसरा माता को अपनी आराध्या देवी मानते हैं। बेसरा माता की सवारी मुर्गा माना जाता है, इसलिए मुर्गे को आदर एवं सम्मान के भाव से देखा जाता है ।वे प्रतिदिन मुर्गों को आटे की गोलियाँ खिलाते हैं, क्योंकि इनका मानना है कि इससे इन्हें पुण्य की प्राप्ति होगी। बेसरा माता का मंदिर गुजरात में अवस्थित है, जहाँ पूरे देश से किन्नर आकर एकत्रित होकर उत्सव मनाते हैं। इस उत्सव में नृत्य-संगीत तथा भोजन का प्रबंध होता है। यह सम्मेलन दो से चार दिनों तक चलता है। यहाँ एक-दूसरे के साथ सुख-दुःख बाँटे जाते हैं तथा साथ ही कुछ नीतियों पर चर्चा भी की जाती है। किन्नर बनने की प्रक्रिया को यहाँ बेसरा माता के समक्ष पूर्ण करना होता है, जो निम्नलिखित है :-

हिजड़ा समुदाय में मान्यता है कि रूपांतरण की प्रक्रिया के दौरान यानी बधिया प्रक्रिया में एक 'हिजड़ा दाई' प्रक्रिया जारी रखे या नहीं, यह जानने के लिए एक नारियल की कटौती करता है। बेसरा माता सहमत हैं तो नारियल दो स्पष्ट टुकड़ो में विभक्त हो जाएगा और यदि नहीं तो नारियल केदो स्पष्ट टुकड़े नहीं होंगे। जो हिजड़ा बधिया प्रक्रिया के दौर से गुजर रहा है, प्रक्रिया पूर्ण होने तक माता-माता-माता जपता रहेगा। यह अनुष्ठान जुलूस के रूप में किया जाता है, उसको एक दुल्हन के रूप में सजाकर उसका समुदाय में प्रवेश कराया जाता है ।

(वहीं : 58)

किन्नर समुदाय में शामिल होने के लिए निश्चित प्रक्रिया का पालन करना होता है। इस प्रक्रिया के तहत किन्नरों को अपना मूल धर्म मानने की स्वतंत्रता होती है। प्रक्रिया पूर्ण होने के पश्चात उनका नया नामकरण किया जाता है ।इन्हें किन्नर समुदाय में शामिल करने की प्रक्रिया एक उत्सव की भाँति मनाई जाती है। सर्वप्रथम किसी नए किन्नर को गुरु द्वारा यह परामर्श दिया दिया जाता है कि वह अपने परिवार तथा समाज में ही रहे, किंतु वह तब भी नहीं मानता है तो उसे विधिवत समुदाय में शामिल कर लिया जाता है ।

तमिलनाडु के 'विल्लुपुरम' जिले में 'कुनागम' नामक गाँव में एक मंदिर है, जहाँ प्रत्येक वर्ष हजारों की संख्या में किन्नर एकत्र होते हगें। यहाँ किन्नरों के आदिपुरुष 'अरावन' की पूजा की जाती है तथा इस समय त्योहार जैसा वातावरण बन जाता है। इस समारोह में अरावन की मूर्ति के साथ किन्नरों का विवाह संपन्न किया जाता है। यह विवाह केवल एक रात्रि के लिए किया जाता है। अगले दिन 'अरावन' की पुत्तलिका शहर की सड़कों पर घुमाया जाती है तथा अंत में उसे जला दिया जाता है। इसके पश्चात किन्नर समुदाय के लोग विधवा का स्वांग रचते हुए अपनी चूड़िया तोड़ते हैं। इस प्रकार वे अपने 'आदिपुरुष' की पूजा करकेअपनी परंपरा का निर्वहन करते हैं ।

किन्नर समुदाय के समक्ष अपने आपको आध्यात्मिक रूप से सुदृढ़ करने तथा साधु-संन्यासियों के समान अखाड़ा बनाने की चुनौती थी। इस संदर्भ में किन्नरों ने अपना लक्ष्य सामने रखा, जो इस प्रकार है: -

किन्नरों ने पहली बार उज्जैन के सिंहस्थ कुंभ में साधु वेश में अपनी उपस्थिति दर्ज की। सिंहस्थ आरंभ होने के 6 महीने पहले ही किन्नर अखाड़े का गठन किया गया ।

(बिश्नोई : 69)

आचार्य स्वामी लक्ष्मीनारायण त्रिपाठी को किन्नर अखाड़े का महामंडलेश्वर बनाया गया। देश के विभिन्न भागों से आए साठ से अधिक किन्नरों ने संन्यासी वेश धारण किया। वैदिक संस्कार के माध्यम से स्वामी वासुदेवानंद ने किन्नरों को संत बनाने की प्रक्रिया पूर्ण की । कुंभ में तेरह अखाड़े संचालित करने की परंपरा रही है। ऋषि अजय दास के मार्गदर्शन में 13 अक्टूबर, 2015 को किन्नर अखाड़े की विधिवत स्थापना की गई। बाईस किन्नरों को मठाधीश्वर बनाया गया। जो किन्नर मठाधीश्वर प्रबंधन का लेखा-जोखा करते हैं उनको महंत की उपाधि दी जाती है ।

किन्नर समुदाय की मृत्यु के संबंध में विभिन्न प्रकार की भ्रामक तथा संदेहास्पद चर्चाएँ आम जनमानस में सुनने को मिल जाती हैं, जैसे कि किन्नर समुदाय के किसी किन्नर की मृत्यु के पश्चात उसे जूते अथवा चप्पलों से पीटने की परंपरा है ताकि उसका पुनर्जन्म पुन: इस योनि में न हो। साथ ही यह भी सुनने में आता है कि रात्रि में शव को समुदाय के बीच खड़ा करके ले जाया जाता है ताकि किसी को कोई संदेह न हो। इसी प्रकार यह भी माना जाता है कि उनके निवास स्थान पर ही गड्ढा खोदकर शव को वहीं गाड़ दिया जाता है तथा उस पर थूका जाता है ताकि उसे पुन: इस योनि में जन्म न लेना पड़े ।

ऐसी विभिन्न प्रकार की भ्रामक खबरें हमारे सभ्य समाज में चारों ओर फैली हुई हैं। इन खबरों में कितनी सच्चाई है, इसको जानना कठिन है, क्योंकि गैर-किन्नर समुदाय में से किसी ने भी किन्नर समुदाय के अंतिम संस्कार को होते हुए नहीं देखा है। इस संदर्भ में लेखिका नीरजा माधव ने किन्नरों के गुरु अंदाज गुरु से एक बार पूछा था, किंतु इन्हें इसका सपाट-सा उत्तर मिला -

''बेटी, इसके बारे में हम लोग बाहरी आदमियों को कुछ नहीं बताते । हमारे समाज में यह नहीं बताया जाता इसलिए हम तो नहीं बताएँगे ।

(माधव 2019 : 54)

3. निष्कर्ष :

समग्रत: यह कहा जा सकता है कि किन्नर समुदाय प्रत्येक क्षेत्र में अपने आपको मुख्य धारा में लाने के लिए निरंतर संघर्षरत है। इस निरंतर प्रयास के फलस्वरूप समाज में तृतीय लिंगी अधिकारों को प्राप्त करने में तथा लोगों की मानसिकता में परिवर्तन लाने में कुछ हद तक सफल हुआ है । ❑

संदर्भ ग्रंथ-सूची :

- बिश्नोई, मिलन, सम्पा. किन्नर विमर्श साहित्य और समाज. कानपुर : विद्या प्रकाशन, 2018.
- माधव, नीरजा, किन्नर नहीं हिजड़ा समुदाय (कुछ तथ्य, कुछ सत्य). वाराणसी: ए.बी.एस. पब्लिकेशन, 2019
- सिंह, रवि कुमार गोंड और विजेंद्र प्रताप, सम्पा. भारतीय साहित्य एवं समाज में तृतीय लिंगी विमर्श. कानपुर: अमन प्रकाशन, 2016.

शोध-प्रज्ञा, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम-14
Priyanka2016kalita@gmail.com

स्वशक्ति उद्घोष

✍ अशोक शर्मा 'अतुल'

गुवाहाटी (असम)
76640-38857

समय ही तो है
बीत जाएगा
इहलोक-परलोक
समय ही तो है
बीता है, बीत जाएगा
हर्ष-विषाद-द्वंद्व-संघर्ष
'कोरोना क्रंदन'
समय ही तो है
बीत जाएगा

जन्म एक जंजाल
मृत्यु भी कहां आराम
बंधनों से मुक्त
कहां इंसान
आना है, जाना है
यही दर्शन
यही अध्यात्म
फिर कोरोना पर

काहे करुण विलाप
तन-मन शुद्धि का
फिर है आह्वान
ज्ञान है विज्ञान है
मानव भी संज्ञान
चिंता आज चट्टान
चतुराई का है भान
प्रकृति है समाधान
मानव फिर
क्यों है परेशान

त्यागो भय, बुंझा
लेकर समर्पण भाव
करो स्वशक्ति का
अश्वमेध उद्घोष
कोरोना 'काल'
समय ही तो है
बीत जाएगा
जेवर है जीवन
चमक ही जाएगा ❑

फर्ज निभाना बाकी है

✍ प्रमोद तिवाड़ी

आहिस्ता चल जिंदगी, अभी
कई कर्ज चुकाना बाकी है
कुछ दर्द मिटाना बाकी है
कुछ फर्ज निभाना बाकी है
रफ्तार में तेरे चलने से
कुछ रूठ गए कुछ छूट गए
रूठों को मनाना बाकी है
रोतों को हँसाना बाकी है
कुछ रिश्ते बनकर ,टूट गए
कुछ जुड़ते -जुड़ते छूट गए
उन टूटे -छूटे रिश्तों के
जख्मों को मिटाना बाकी है
कुछ हसरतें अभी अधूरी हैं
कुछ काम भी और जरूरी हैं
जीवन की उलझ पहेली को
पूरा सुलझाना बाकी है
जब साँसों को थम जाना है
फिर क्या खोना, क्या पाना है
पर मन के जिद्दी बच्चे को
यह बात बताना बाकी है
आहिस्ता चल जिंदगी, अभी
कई कर्ज चुकाना बाकी है
कुछ दर्द मिटाना बाकी है
कुछ फर्ज निभाना बाकी है! ❑

गुवाहाटी (असम) 7637003111

संवदिया

✍ फणीश्वरनाथ रेणु

साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में जो कुछ भी घटित होता है, उसका प्रतिबिंब साहित्य में दिखाई देता है। इस लिहाज से हिंदी कहानी-जगत अत्यंत समृद्ध है। महान रचनाकारों प्रेमचंद, भारतेंदु हरिश्चंद्र, महादेवी वर्मा आदि ने जब अपनी कलम चलाई तो उससे निकले पात्र मानो जी उठे। द्विभाषी राष्ट्रसेवक ने अपने हर अंक में आपके लिए देशी-विदेशी लेखकों की ऐसी एक प्रतिनिधि कहानी प्रकाशित करने का निश्चय किया है ताकि समाज और समाज के बीच एक सेतु बना रहे और रोजमर्रा की व्यस्त जिंदगी में भी आप साहित्य रस का आनंद उठा पाएँ। इस क्रम में इस बार प्रस्तुत है फणीश्वरनाथ रेणु की कहानी 'संवदिया'।

-संपादक

हरगोबिन को अचरज हुआ- तो, आज भी किसी को संवदिया की जरूरत पड़ सकती है! इस जमाने में, जबकि गाँव-गाँव में डाकघर खुल गए हैं, संवदिया के मार्फत संवाद क्यों भेजेगा कोई? आज तो आदमी घर बैठे ही लंका तक खबर भेज सकता है और वहाँ का कुशल संवाद मँगा सकता है। फिर उसकी बुलाहट क्यों हुई है?

हरगोबिन बड़ी हवेली की टूटी ड्योढ़ी पार कर अंदर गया। सदा की भाँति उसने वातावरण को सूँघकर संवाद का अंदाज लगाया। ...निश्चय ही कोई गुप्त संवाद ले जाना है। चाँद-सूरज को भी नहीं मालूम हो! परेवा-पंछी तक न जाने!

''पाँवलागी बड़ी बहुरिया!''

बड़ी हवेली की बड़ी बहुरिया ने हरगोबिन को पीढ़ी दी और आँख के इशारे से कुछ देर चुपचाप बैठने को कहा...। बड़ी हवेली अब नाम-मात्र को ही बड़ी हवेली है! जहाँ दिन-रात नौकर-नौकरानियों और जन-मजदूरों की भीड़ लगी रहती थी, वहाँ आज हवेली की बड़ी बहुरिया अपने हाथ से सूप में अनाज लेकर झटक रही है। इन हाथों में सिर्फ मेहंदी लगाकर ही गाँव की नाइन परिवार पालती थी। कहाँ गए वे दिन? हरगोबिन ने एक लंबी साँस ली।

बड़े भैया के मरने के बाद ही जैसे सब खेल खत्म हो गया। तीनों भाइयों ने आपस में लड़ाई-झगड़ा शुरू कर दिया। रैयतों ने जमीन पर दावे करके दखल किया। फिर, तीनों भाई गाँव छोड़कर शहर जा बसे। रह गई अकेली बड़ी बहुरिया। कहाँ जाती बेचारी!

भगवान भले आदमी को ही कष्ट देते हैं। नहीं तो एक घंटे की बीमारी में बड़े भैया क्यों मरते?... बड़ी बहुरिया की देह से जेवर खींच-खींच कर बँटवारे की लीला हुई, हरगोबिन ने देखी है अपनी आँखों से द्रौपदी-चीरहरण लीला! बनारसी साड़ी को तीन टुकड़े करके बँटवारा किया

था, निर्दयी भाइयों ने। बेचारी बड़ी बहुरिया!

गाँव की मोदिआइन बूढ़ी न जाने कब से आँगन में बैठकर बड़बड़ा रही थी– ''उधार का सौदा खाने में बड़ा मीठा लगता है और दाम देते समय मोदिआइन की बात कड़वी लगती है। मैं आज दाम लेकर ही उठूँगी।''

बड़ी बहुरिया ने कोई जवाब नहीं दिया।

हरगोबिन ने फिर लंबी साँस ली। जब तक यह मोदिआइन आँगन से नहीं टलती, बड़ी बहुरिया हरगोबिन से कुछ नहीं बोलेगी। वह अब चुप नहीं रह सका, ''मोदिआइन काकी, बाकी–बकाया वसूलने का यह काबुली कायदा तो तुमने खूब सीखा है!''

'काबुली कायदा' सुनते ही मोदिआइन तमककर खड़ी हो गई, ''चुप रह, मुँहझौंसे! निमोंछिये...!

''क्या करूँ काकी, भगवान ने मूँछ–दाढ़ी दी नहीं, न काबुली आगा साहब की तरह गुलजार दाढ़ी...!

''फिर काबुल का नाम लिया तो जीभ पकड़कर खींच लूँगी।''

हरगोबिन ने जीभ बाहर निकालकर दिखलाई। अर्थात – ''खींच ले।''

...पांच साल पहले गुल मुहम्मद आगा उधार कपड़ा लगाने केलिए गाँव आता था और मोदिआइन के ओसारे पर दुकान लगाकर बैठता था। आगा कपड़ा देते समय बहुत मीठा बोलता और वसूली के समय जोर–जुल्म से एक का दो वसूलता। एक बार कई उधार लेने वालों ने मिलकर काबुली की ऐसी मरम्मत कर दी कि फिर लौटकर गाँव में नहीं आया। लेकिन इसके बाद ही दुखनी मोदिआइन लाल मोदिआइन हो गई। ...काबुली क्या, काबुली बादाम के नाम से भी चिढ़ने लगी मोदिआइन! गाँव के नाचवालों ने नाम में काबुली का स्वांग किया था : ''तुम अमारा मुलुक जाएगा मोदिआइन? अम काबुली बादाम–पिस्ता–अकरोट किलायगा...!''

मोदिआइन बड़बड़ाती, गाली देती हुई चली गई तो बड़ी बहुरिया ने हरगोबिन से कहा, ''हरगोबिन भाई, तुमको एक संवाद ले जाना है। आज ही। बोलो, जाओगे न?

''कहाँ?''

''मेरी माँ के पास!''

हरगोबिन बड़ी बहुरिया की छलछलाई हुई आँखों में डूब गया, ''कहिए, क्या संवाद?''

संवाद सुनाते समय बड़ी बहुरिया सिसकियाँ लेने लगी। हरगोबिन की आँखें भी भर आईं। ...बड़ी हवेली की लछमी को पहली बार इस तरह सिसकते देखा है हरगोबिन ने। वह बोला, ''बड़ी बहुरिया, दिल को कड़ा कीजिए।''

''और कितना कड़ा करूँ दिल?'' ...माँ से कहना मैं भाई–भाभियों की नौकरी करके पेट पालूँगी। बच्चों के जूठन खाकर एक कोने में पड़ी रहूँगी, लेकिन यहाँ अब नहीं... अब नहीं रह सकूँगी। ...कहना, यदि माँ मुझे यहाँ से नहीं ले जाएगी तो मैं किसी दिन गले में घड़ा बांधकर पोखरे में डूब मरूँगी। ...बथुआ साग खाकर कब तक जीऊँ? किसलिए.... किसके लिए?''

हरगोबिन का रोम–रोम कलपने लगा। देवर–देवरानियाँ भी कितने बेदर्द हैं। ठीक अगहनी धान के समय बाल–बच्चों को लेकर शहर से आएँगे। दस–पंद्रह दिनों में कर्ज–उधार की ढेरी लगाकर, वापस जाते समय दो–दो मन के हिसाब से चावल–चूड़ा ले जाएँगे। फिर आम के मौसम में आकर हाजिर। कच्चा–पक्का आम तोड़कर बोरियों में बंद करके चले जाएँगे। फिर उलटकर कभी नहीं देखते... राक्षस हैं सब!

बड़ी बहुरिया आँचल के खूँट से पाँच रुपए का एक गंदा नोट निकालकर बोली, ''पूरा राह खर्च भी नहीं जुटा सकी। आने का खर्चा माँ से माँग लेना। उम्मीद है, भैया तुहारे साथ ही आवेंगे।''

हरगोबिन बोला, ''बड़ी बहुरिया, राह खर्च देने की जरूरत नहीं। मैं इंतजाम कर लूँगा।''

''तुम कहाँ से इंतजाम करोगे?''

''मैं आज दस बजे की गाड़ी से ही जा रहा हूँ।''

बड़ी बहुरिया हाथ में नोट लेकर चुपचाप, भावशून्य दृष्टि से हरगोबिन को देखती रही। हरगोबिन हवेली से बाहर आ गया। उसने सुना, बड़ी बहुरिया कह रही थी, ''मैं तुम्हारी राह देख रही हूँ।''

संवदिया! अर्थात संवादवाहक!

हरगोबिन संवदिया!...संवाद पहुँचाने का काम सभी नहीं कर सकते। आदमी भगवान के घर से ही संवदिया

बनकर आता है। संवाद के प्रत्येक शब्द को याद रखना, जिस सुर और स्वर में संवाद सुनाया गया है, ठीक उसी ढंग से जाकर सुनाना, सहज काम नहीं। गाँव के लोगों की गलत धारणा है कि निठल्ला, कामचोर और पेटू आदमी ही संवदिया का काम करता है। न आगे नाथ, न पीछे पगहा। बिना मजदूरी लिए ही जो गाँव-गाँव संवाद पहुँचावे, उसको और क्या कहेंगे? ...औरतों का गुलाम। जरा-सी मीठी बोली सुनकर ही नशे में आ जाए, ऐसे मर्द को भी भला मर्द कहेंगे? किंतु, गाँव में कौन ऐसा है, जिसके घर की माँ-बहू-बेटी का संवाद हरगोबिन

ने नहीं पहुँचाया है। ....लेकिन ऐसा संवाद पहली बार ले जा रहा है वह।

गाड़ी पर सवार होते ही हरगोबिन को पुराने दिनों और संवादों की याद आने लगी। एक करुण गीत की भूली हुई कड़ी फिर उसके कानों के पास गूँजने लगी:

''पैयां पड़ूं दाढ़ी धरूं....

हमरी संवाद लेले जाहु रे संवदिया या-या!...''

बड़ी बहुरिया के संवाद का प्रत्येक शब्द उसके मन में काँटे की तरह चुभ रहा है - किसके भरोसे यहाँ रहूँगी? एक नौकर था, वह भी कल भाग गया। गाय खूँटे से बंधी भूखी-प्यासी हिकर रही है। मैं किसके लिए इतना दु:ख झेलूँ?

हरगोबिन ने अपने पास बैठे हुए एक यात्री से पूछा, ''क्यों भाई साहेब, थाना बिहपुर में सभी गाड़ियाँ रुकती हैं या नहीं?''

यात्री ने मानो कुढ़कर कहा, ''थाना बिहपुर में सभी गाड़ियाँ रुकती हैं।''

हरगोबिन ने भाँप लिया यह आदमी चिड़चिड़े स्वभाव का है। इससे कोई बातचीत नहीं जमेगी। वह फिर बड़ी बहुरिया के संवाद को मन ही मन दुहराने लगा।...लेकिन, संवाद सुनाते समय वह अपने कलेजे को कैसे संभाल सकेगा! बड़ी बहुरिया संवाद कहते समय जहाँ-जहाँ रोई है, वहाँ भी रोएगा!

कटिहार जंक्शन पहुँचकर उसने देखा, पंद्रह-बीस साल में बहुत कुछ बदल गया है। अब स्टेशन पर उतरकर किसी से कुछ पूछने की कोई जरूरत नहीं। गाड़ी पहुँची और तुरंत भोंपे से आवाज अपने-आप निकलने लगी - थाना बिहपुर, खगड़िया और बरौनी जाने वाले यात्री तीन नंबर प्लेटफार्म पर चले जाएँ। गाड़ी लगी हुई है।

हरगोबिन प्रसन्न हुआ- कटिहार पहुँचने के बाद ही मालूम होता है कि सचमुच सुराज हुआ है। इसके पहले कटिहार पहुँचकर किस गाड़ी में चढ़ें और किधर जाएँ, इस पूछताछ में ही कितनी बार उसकी गाड़ी छूट गई है।

गाड़ी बदलने के बाद फिर बड़ी बहुरिया का करुण मुखड़ा उसकी आँखों के सामने उभर गया: 'हरगोबिन भाई, माँ से कहना, भगवान ने आँखें फेर ली, लेकिन मेरी माँ तो है... किसलिए... किसके लिए... मैं बथुआ की साग खाकर कब तक जीऊँ?'

थाना बिहपुर स्टेशन पर जब गाड़ी पहुँची तो हरगोबिन का जी भारी हो गया। इसके पहले भी कई भला-बुरा संवाद लेकर वह इस गाँव में आया है, कभी ऐसा नहीं हुआ। उसके पैर गाँव की ओर बढ़ ही नहीं रहे थे। इसी पगडंडी से बड़ी बहुरिया अपने मैके लौट आवेगी। गाँव छोड़ चली आवेगी। फिर कभी नहीं जाएगी!

हरगोबिन का मन कलपने लगा- तब गाँव में क्या

रह जाएगा? गाँव की लक्ष्मी ही गाँव छोड़कर चली आवेगी! ...किस मुँह से वह ऐसा संवाद सुनाएगा? कैसे कहेगा कि बड़ी बहुरिया बथुआ साग खाकर गुजर कर रही है। ...सुनने वाले हरगोबिन के गाँव का नाम लेकर थूकेंगे, कैसा गाँव है, जहाँ लक्ष्मी जैसी बहुरिया दुख भोग रही है।

अनिच्छापूर्वक हरगोबिन ने गाँव में प्रवेश किया।

हरगोबिन को देखते ही गाँव के लोगों ने पहचान लिया- जलालगढ़ गाँव का संवदिया आया है!... न जाने क्या संवाद लेकर आया है!

''राम-राम भाई! कहो, कुशल समाचार ठीक है न?''

''राम-राम भैया जी। भगवान की दया से सब आनंदी है।''

''उधर पानी-बूंदी पड़ा है?''

बड़ी बहुरिया के बड़े भाई ने पहले हरगोबिन को नहीं पहचाना। हरगोबिन ने अपना परिचय दिया, तो उन्होंने सबसे पहले अपनी बहिन का समाचार पूछा, ''दीदी कैसी हैं?''

''भगवान की दया से सब राजी-खुशी है।''

मुँह-हाथ धोने के बाद हरगोबिन की बुलाहट आँगन में हुई। अब हरगोबिन काँपने लगा। उसका कलेजा धड़कने लगा- ऐसा तो कभी नहीं हुआ?

...बड़ी बहुरिया की छलछलाई हुई आँखें! ...सिसकियों से भरा हुआ संवाद! उसने बड़ी बहुरिया की बूढ़ी माता को पाँवलागी की।

बूढ़ी माता ने पूछा, कहो बेटा, क्या समाचार है?''

''मायजी, आपके आशीर्वाद से सब ठीक है।''

''कोई संवाद?''

''एं? ...संवाद ? ...जी, संवाद तो कोई नहीं। मैं कल सिरसिया गाँव आया था, तो सोचा कि एक बार चलकर आप लोगों का दर्शन कर लूँ।''

बूढ़ी माता हरगोबिन की बात सुनकर कुछ उदास-सी हो गई, ''तो तुम कोई संवाद लेकर नहीं आए हो?''

''जी नहीं, कोई संवाद नहीं। ...ऐसे बड़ी बहुरिया ने कहा है कि यदि छुट्टी हुई तो दशहरा के समय गंगाजी के मेले में आकर माँ से भेंट-मुलाकात कर जाऊँगी।'' बूढ़ी माता चुप रही। हरगोबिन बोला, ''छुट्टी कैसे मिले! सारी गृहस्थी बड़ी बहुरिया के ऊपर ही है।''

बूढ़ी माता बोली, मैं तो बबुआ से कह रही थी कि जाकर दीदी को लिवा लाओ, यहीं रहेगी। वहाँ अब क्या रह गया है? जमीन-जायदाद तो सब चली ही गई। तीनों देवर अब शहर में जाकर बस गए हैं। कोई खोज-खबर भी नहीं लेते। मेरी बेटी अकेली.... !''

''नहीं, मायजी। जमीन-जायदाद अभी भी कुछ कम नहीं। जो है, वही बहुत है। टूट भी गई है, तो आखिर बड़ी हवेली ही है। 'सवांग' नहीं है, यह बात ठीक है। मगर, बड़ी बहुरिया का तो सारा गाँव ही परिवार है। हमारे गाँव की लछमी है बड़ी बहुरिया। ...गाँव की लछमी गाँव को छोड़कर शहर कैसे जाएगी? यों, देवर लोग हर बार आकर ले जाने की जिद्द करते हैं।''

बूढ़ी माता ने हरगोबिन को जलपान लाकर दिया, ''पहले थोड़ा जलपान कर लो, बबुआ।''

जलपान करते समय हरगोबिन को लगा, बड़ी बहुरिया दालान पर बैठी उसकी राह देख रही है- भूखी, प्यासी... ! रात में भोजन करते समय भी बड़ी बहुरिया मानों सामने आकर बैठ गई...कर्ज-उधार अब कोई देते नहीं। ....एक पेट तो कुत्ता भी पालता है। लेकिन, मैं ?....माँ से कहना... !!

हरगोबिन ने थाली की ओर देखा - भात-दाल, तीन किस्म की भाजी, घी, पापड़ अचार।... बड़ी बहुरिया बथुआ साग उबालकर खा रही होगी।

बूढ़ी माता ने कहा, ''क्यों बबुआ, खाते क्यों नहीं?''

''मायजी, पेट भर जलपान जो कर लिया है।''

''अरे, जवान आदमी तो पाँच बार जलपान करके भी एक थाल भात खाता है।''

हरगोबिन ने कुछ नहीं खाया। खाया नहीं गया।

संवदिया डटकर खाता है और 'अफर' कर सोता है, किंतु हरगोबिन को नींद नहीं आ रही है। ...यह उसने क्या किया? क्या कर दिया? वह किसलिए आया था? वह झूठ क्यों बोला? ...नहीं, नहीं, सुबह उठते ही वह बूढ़ी माता को बड़ी बहुरिया का सही संवाद सुना देगा- अक्षर-अक्षर : 'मायजी, आपकी एकलौती बेटी बहुत कष्ट में है। आज ही किसी को भेजकर बुलवा लीजिए। नहीं तो वह सचमुच कुछ कर बैठेगी। आखिर, किसके लिए

वह इतना सहेगी!... बड़ी बहुरिया ने कहा है, भाभी के बच्चों के जूठन खाकर वह एक कोने में पड़ी रहेगी... !'

रात-भर हरगोबिन को नींद नहीं आई।

आँखों के सामने बड़ी बहुरिया बैठी रही-सिसकती, आँसू पोंछती हुई। सुबह उठकर उसने दिल को कड़ा किया। वह संवदिया है। उसका काम है सही-सही संवाद पहुँचाना। वह बड़ी बहुरिया का संवाद सुनाने के लिए बूढ़ी माता के पास जा बैठा। बूढ़ी माता ने पूछा, ''क्या है बबुआ, कुछ कहोगे?''

''मायजी, मुझे इसी गाड़ी से वापस जाना होगा। कई दिन हो गए।''

''अरे इतनी जल्दी क्या है! एकाध दिन रहकर मेहमानी कर लो।''

''नहीं, मायजी, इस बार आज्ञा दीजिए। दशहरा में मैं भी बड़ी बहुरिया के साथ आऊँगा। तब डटकर पंद्रह दिनों तक मेहमानी करूँगा।''

उसने धीरे से हाथ बढ़ाकर बड़ी बहुरिया का पैर पकड़ लिया, ''बड़ी बहुरिया। ...मुझे माफ करो। मैं तुम्हारा संवाद नहीं कह सका। ...तुम गांव छोड़कर मत जाओ। तुमको कोई कष्ट नहीं होने दूंगा। मैं तुम्हारा बेटा! बड़ी बहुरिया, तुम मेरी मां, सारे गांव की मां हो! मैं अब निठल्ला बैठा नहीं रहूंगा। तुम्हारा सब काम करूंगा। ...बोलो, बड़ी मां ...तुम गांव छोड़कर चली तो नहीं जाओगी? बोलो....!!''

बूढ़ी माता बोली, ''ऐसा जल्दी थी तो आए ही क्यों! सोचा था, बिटिया के लिए दही-चूड़ा भेजूँगी। सो दही तो नहीं हो सकेगा आज। थोड़ा चूड़ा है बासमती धान का, लेते जाओ।''

चूड़ा की पोटली बगल में लेकर हरगोबिन आँगन से निकला तो बड़ी बहुरिया के बड़े भाई ने पूछा, ''क्यों भाई, राह खर्च है तो?''

हरगोबिन बोला, भैयाजी, आपकी दुआ से किसी बात की कमी नहीं।''

स्टेशन पर पहुँचकर हरगोबिन ने हिसाब किया। उसके पास जितने पैसे हैं, उससे कटिहार तक का टिकट ही वह खरीद सकेगा। और यदि चौअन्नी नकली साबित हुई तो सैमापुर तक ही। ...बिना टिकट के वह एक स्टेशन भी नहीं जा सकेगा। डर के मारे उसकी देह का आधा खून सूख गया।

गाड़ी में बैठते ही उसकी हालत अजीब हो गई। वह कहाँ आया था? क्या करके जा रहा है? बड़ी बहुरिया

को क्या जवाब देगा?

यदि गाड़ी में निरगुन गाने वाला सूरदास नहीं आता, तो न जाने उसकी क्या हालत होती! सूरदास के गीतों को सुनकर उसका जी स्थिर हुआ, थोड़ा-

...कि आहो रामा!

नैहरा को सुख सपन भयो अब,

देश पिया को डोलिया चली...ई...ई....ई,

माई रोओ मति, यही करम गति...!!

सूरदास चला गया तो उसके मन में बैठी हुई बड़ी बहुरिया फिर रोने लगी - ''किसके लिए इतना दु:ख सहूँ ?''

पाँच बजे भोर में वह कटिहार स्टेशन पहुँचा। भोंपे से आवाज आ रही थी- बैरगाछी, कुसियार और जलालगढ़ जाने वाली यात्री एक नंबर प्लेटफार्म पर चले जाएँ।

हरगोबिन को जलालगढ़ स्टेशन जाना है, किंतु वह एक नंबर प्लेटफार्म पर कैसे जाएगा? उसके पास तो कटिहार तक का ही टिकट है। ...जलालगढ़! बीस कोस! बड़ी बहुरिया राह देख रही होगी। ... बीस कोस की मंजिल भी कोई दूर की मंजिल है? वह पैदल ही जाएगा।

हरगोबिन महावीर-विक्रम-बजरंगी का नाम लेकर पैदल ही चल पड़ा। दस कोस तक वह मानो 'बाई' के झोंके पर रहा। कसबा शहर पहुँचकर उसने पेट भर पानी पी लिया। पोटली में नाक लगाकर उसने सूंघा : अहा! बासमती धान का चूड़ा है। माँ की सौगात-बेटी के लिए। नहीं, वह इससे एक मुठ्ठी भी नहीं खा सकेगा। ....किंतु वह क्या जवाब देगा बड़ी बहुरिया को!

उसके पैर लड़खड़ाए। ...उंहूं, अभी वह कुछ नहीं सोचेगा। अभी सिर्फ चलना है। जल्दी पहुँचना है, गाँव। ...बड़ी बहुरिया की डबडबाई हुई आँखें उसको गाँव की ओर खींच रही थीं- ''मैं बैठी राह ताकती रहूँगी!...''

पंद्रह कोस! ...माँ से कहना, अब नहीं रह सकूँगी।

सोलह...सत्रह...अठ्ठारह...जलालगढ़ स्टेशन का सिग्नल दिखाई पड़ता है... गाँव का ताड़ सिर ऊँचा करके उसकी चाल को देख रहा है। उसी ताड़ के नीचे बड़ी हवेली के दालान पर चुपचाप टकटकी लगाकर राह देख रही है बड़ी बहुरिया- भूखी-प्यासी: 'हमरो संवाद लेले जाहु रे संवदिया...या...या...या!!'

लेकिन, यह कहाँ चला आया हरगोबिन? यह कौन गाँव है? पहली साँझ में ही अमावस्या का अंधकार! किस राह से वह किधर जा रहा है? ...नदी है? कहाँ से आ गई नदी? नदी नहीं, खेत है। ....ये झोंपड़े हैं या हाथियों का झुंड? ताड़ का पेड़ किधर गया? वह राह भूलकर न जाने कहाँ भटक गया... इस गाँव में आदमी नहीं रहते क्या? ...कहीं कोई रोसनी नहीं, किससे पूछे? ...वहाँ, वह रोशनी है या आँखें? वह खड़ा है या चल रहा है? वह गाड़ी में है या धरती पर....?

''हरगोबिन भाई, आ गए?'' बड़ी बहुरिया की बोली या कटिहार स्टेशन का भोंपा बोल रहा है?

''हरगोबिन भाई, क्या हुआ तुमको...''

''बड़ी बहुरिया?''

हरगोबिन ने हाथ से टटोलकर देखा, वह बिछावन पर लेटा हुआ है। सामने बैठी छाया को छूकर बोला, ''बड़ी बहुरिया?''

''हरगोबिन भाई, अब जी कैसा है? ...लो, एक घूँट दूध और पी लो। ...मुँह खोलो...हाँ...पी जाओ। पीयो!!''

हरगोबिन होश में आया। ...बड़ी बहुरिया दूध पिला रही है?

उसने धीरे से हाथ बढ़ाकर बड़ी बहुरिया का पैर पकड़ लिया, ''बड़ी बहुरिया। ...मुझे माफ करो। मैं तुम्हारा संवाद नहीं कह सका। ...तुम गाँव छोड़कर मत जाओ। तुमको कोई कष्ट नहीं होने दूँगा। मैं तुम्हारा बेटा! बड़ी बहुरिया, तुम मेरी माँ, सारे गाँव की माँ हो! मैं अब निठल्ला बैठा नहीं रहूँगा। तुम्हारा सब काम करूँगा। ...बोलो, बड़ी माँ ...तुम गाँव छोड़कर चली तो नहीं जाओगी? बोलो....!!''

बड़ी बहुरिया गर्म दूध में एक मुठ्ठी बासमती चूड़ा डालकर मसकने लगी। ...संवाद भेजने के बाद से ही वह अपनी गलती पर पछता रही थी! ❑

● ● ● ● ● ●

প্রবন্ধ

কোচ ৰাজবংশী জনগোষ্ঠীৰ লোকদেৱতা ‘মাশান ঠাকুৰ’ - এক অধ্যয়ণ

✍ গোবিন্দ বৈশ্য

প্রস্তাৱনা ঃ

আদিম মানৱৰ প্রবৃত্তিগত দুর্বলতাৰ প্রতি থকা সচেতনতাই পূজা-পার্ব্বনৰ সৃষ্টি কৰে। প্রকৃতিৰ ওপৰত নির্ভৰ কৰি জীৱন নির্বাহ কৰা বাবেই প্রকৃতিৰ বিভিন্ন অংশক তেওঁলোকে একোটা শক্তি বুলি কল্পনা কৰে আৰু সেই অংশবোৰৰ ওপৰতে দেৱত্ব আৰোপ কৰি অপায়-অমঙ্গল নাশক শক্তি হিচাবে জ্ঞান কৰে। অপায়-অমঙ্গলনাশক বুলি কোৱাৰ লগতে ইয়াৰ লগত মঙ্গল, শ্রীবৃদ্ধি কাৰক শক্তিৰ ধাৰনাও নিহিত হৈ থাকে। প্রথম অৱস্থাত প্রকৃতিৰ একোটা উৎসই আছিল দেৱতা। পিছৰ কালত মেজিকধর্মী দেৱতাই প্রাধান্য পালে। প্রতীক ধর্মীতাৰ লগত মেজিক বিশ্বাস থাকেই। আদিম মানুহৰ ভয়-বিস্ময়, অসহায়তা আদি প্রবৃত্তিৰ লগত ইয়াৰ সম্পর্ক আছিল।

লোকদেৱতা বা লোকপূজা প্রধানতঃ লোকবিশ্বাসৰ সৈতে জড়িত। লোক বিশ্বাসৰ ওপৰত ভিত্তি কৰিয়েই লোকদেৱতাৰ পূজা চলি আহিছে। লোকপূজা মূলতঃ কোনো অঞ্চল ভিত্তিত বা ভিন্ন জাতি-জনগোষ্ঠীৰ মাজত স্বকীয়ভাবে প্রচলিত। লোকদেৱতা শাস্ত্র বর্হিভূত। লোকদেৱতা পূজাৰ অন্তৰালত একো একোটা উদ্দেশ্যজনিত কাৰন বা মনোকামনা পূৰণৰ আকাংক্ষা জড়িত হৈ থাকে। মনোকামনা পূৰণৰ উদ্দেশ্য আগত ৰাখিয়েই লোকপূজাৰ পৰম্পৰা এতিয়াও প্রচলন হৈ আহিছে। বৰষুণৰ বাবে হুদুম পূজা, বাঘৰ ভয় মুক্তিৰ বাবে সোণাৰায় পূজা, সন্তান প্রাপ্তি তথা মাটিৰ উর্ব্বৰা শক্তি বৃদ্ধিৰ বাবে কার্তিকা পূজা ইত্যাদি বিভিন্ন লোকদেৱতা পূজা কোচ ৰাজবংশী সমাজত প্রচলিত হৈ আহিছে।

কোচ ৰাজবংশী লোক সমাজত বিভিন্ন লোকবিশ্বাসৰ বাবে এই লোকদেৱতাৰ পূজা প্রাচীন কালৰে পৰা বর্তমান লৈকে চলি আছে। কোচ ৰাজবংশী লোক সমাজত অনেক লোক দেৱতাৰ উল্লেখ পোৱা যায়। যেনে-হুদুম, কার্তিকা, বাঁশ, ৰাজা ঠাকুৰ, ডাকাইত ঠাকুৰ, মাশান, বুঢ়া সর্দাৰ, দেউৰী ঠাকুৰ, মাৰৈ বা বিষহৰি, টংবুঢ়া-টংবুঢ়ী, বামুণী ঠাকুৰ, ভাঙুৰা ঠাকুৰ, বকুৰা ঠাকুৰ, সুবচনী ঠাকুৰ, তিস্তা বুঢ়ী, মেচেনী, গায়া, কুচুনা, হাজৰা গম্ভিৰা, ধর্মদেৱতা, ধূমসীয়া, যখা ইত্যাদি। এই লোক দেৱতাবোৰৰ পূজা অসম, পশ্চিমবংগ, নেপালৰ ঝাপা মৰং অঞ্চল, বিহাৰৰ পূর্ণিয়া, বাংলাদেশৰ ৰংপুৰ জিলা আদিত বসবাস কৰা কোচ ৰাজবংশী লোকসকলৰ মাজত এতিয়া পৰম্পৰাগত ভাবে চলি আহিছে। আমাৰ এই প্রবন্ধত লোক দেৱতা মাশানৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যত্ন কৰা হ'ব।

লোকদেৱতা মাশান ঃ

‘মাশান’ কোচ ৰাজবংশী জনগোষ্ঠীৰ মাজত পূজিত হৈ অহা এক উল্লেখযোগ্য লোকদেৱতা। ‘মাশান’ এক শ্রেণীৰ অপদেৱতা বা উপদেৱতা। পশ্চিমবংগ আৰু অসমত প্রাচীন কালৰে পৰাই মাশান দেৱতাৰ পূজা চলি আহিছে। মাশান মূলতঃ অনার্য্য দেৱতা আছিল, গাহৰি বলি, পোৱা মাছ দিয়া, পাৰ চৰাই পোৱা দিয়া আদি কথাই ইয়াৰ প্রমাণ কৰে। এতিয়া মাশান আর্য্য দেৱতা। মাশানক শিৱৰ লগত তুলনাৰ দ্বাৰাই ইয়াক জাতত তোলাৰ প্রৱণতা দেখা যায়। মাশান পূজাৰ লগত সংস্কৃত মন্ত্রৰ ব্যৱহাৰ তথা ইয়াৰ প্রসাদ লক্ষ্য কৰিলে বা মাশানৰ লগত জড়িত সকলোবোৰ কথাৰ বিশ্লেষণ কৰিলে

মাশানক যে আর্যীকৰণ কৰা হৈছে তাৰ আভাষ পোৱা যায়। প্রসাদৰ ক্ষেত্রত পোৱা মাছ, আধাপোৱা, শুকান মাছ আদিৰ উপকৰণবোৰ চিকাৰকেন্দ্রীক জীৱনৰ ইঙ্গিত বহন কৰে আৰু দৈ-চিৰা, গাখীৰ, কল, চেনি, আখৈ, কলৰ ব্যৱহাৰৰ দ্বাৰা ইয়াৰ আর্যীকৰণ ৰূপটো প্রকট কৰি তোলে। সংস্কৃত মন্ত্রৰ ব্যৱহাৰ কৰি মাশান দেৱতাক আর্যীকৰণ কৰা হৈছে। লগতে ৰাজবংশী ভাষাৰ মন্ত্রই ইয়াৰ প্রগার্য্য ৰূপটো দাঙি ধৰে।

মাশানৰ জন্ম কথা ঃ

মাশানৰ জন্ম সম্পর্কে বিভিন্ন লোককাহিনী পোৱা যায়। ড° দ্বিজেন্দ্রনাথ ভকতে উল্লেখ কৰা মতে- 'এদিন কালি অকলে নৈত গা ধুবলৈ গৈছিল। এনে সময়ত তাত আকস্মিক ভাৱে ধর্ম ঠাকুৰ উপস্থিত হয়। দুয়োজনৰে মিলনৰ ফল স্বৰূপে মাশানৰ জন্ম হয়।'[১]

আন এক লোককাহিনী মতে - ধর্মদেৱতাৰ ঔৰষত কালীৰ গর্ভত মাশানৰ জন্ম। 'এদিনাখন সৰোবৰত কালীয়ে পাঁচ ভগ্নীৰ লগত স্নান কৰিছিল, হঠাৎ সেই সেই ঠাইত সূর্যদেৱতা বা ধর্মদেৱতা উপস্থিত হয় আৰু কালীক লগত লৈ সৰোবৰৰ অতল পানীত ডুব দিয়ে। অৱশেষত কালীৰ গর্ভত গঙ্গাটোপ মাছৰ আকৃতিৰ মাশান দেৱতাৰ জন্ম হয়।'[২]

ড° চাৰু চন্দ্র স্যানালৰ মতে-

'Masan is said to the oppspring of the union of Kali (Mother) and Dharma (Father).'[৩]

জলপাইগুৰি জিলাৰ প্রচলিত লোককথা মতে -

'দেৱী কালীৰ পাঁচজনী ভগ্নী। এই পাঁচ ভগ্নীয়ে লগ হৈ এদিনাখন পুখুৰীত গা ধুবলৈ গ'ল। গা ধুই থাকোতে ধর্মদেৱতা হঠাৎ আবির্ভাৱ হয়। গা ধুই থকা অৱস্থাতে সিহঁতক দেখি পদুম ফুলৰ ৰূপ ধৰি কালীক ছলনা কৰে। পদুম ফুল চিঙিব যাঁওতে কালীক লগত লৈ ধর্মদেৱতাই পুখুৰীৰ পানীত ডুব দিয়ে আৰু পানীৰ তলত সাত দিন নৰাত্রি কালীৰ লগত সহবাস কৰে। সহবাসৰ ফলত কালী গর্ভৱতী হয়। গর্ভৱতী কালীয়ে পানীত ওপঙি থাকে। এই অৱস্থাটোক লোককথাত টেপামাছ (গঙ্গাটোপ) আখ্যা দিয়া হৈছে। এই টেপামাছ (গঙ্গাটোপ) আকৃতিৰ কালীৰ গর্ভত মাশানৰ জন্ম হয়।'[৪]

মাশানৰ জন্ম সম্পর্কে এনে ধৰণৰ লোক কাহিনী পোৱা যায়। সকলোবোৰ লোককাহিনীৰ পৰা জনা যায় যে মাশান ধর্মদেৱতা আৰু কালীৰ সন্তান।

মাশানৰ পৰিচয় ঃ

কোচ ৰাজবংশী লোক সমাজত মাশান দেৱতাক উপদেৱতা বা অপদেৱতা হিচাপে পূজা অর্চনা চলি আহিছে। মাশানক বিভিন্ন ৰূপত কল্পনা কৰা হৈছে। সেইবোৰ হ'ল -

(ক) মাশানক জলদেৱতা ৰূপত পূজা কৰা হয়। মাছ চিকাৰ কৰাৰ আগতে মৎস্যজীৱিসকলে মাশান দেৱতাৰ পূজা দি আহিছে। মাছ চিকাৰ কৰিবলৈ যাওঁতে যাতে দায়-দোষ নধৰে, অপায় অমঙ্গল নকৰে সেই বাবে মাছ চিকাৰৰ আগ মুহূর্তত মাশানক পূজা দিহে পানীত নামে। মাশান শব্দৰ সৃষ্টি সম্পর্কে কিছু অভিমতৰ পৰা জনা যায় যে- 'মাছ + আন' শব্দৰ পৰা মাছান শব্দৰ সৃষ্টি হৈছে আৰু কালক্রমত 'মাছান' শব্দৰ পৰা 'মাশান' শব্দৰ সৃষ্টি হয়। যি দেৱতাই মাছ আনি দিয়ে বা যোগান ধৰে তাক মাশান বুলি কোৱা হয়।

(খ) শ্মশান শব্দৰ অনুকাৰ শব্দ হিচাপে মাশান শব্দৰ প্রয়োগ হয়। অর্থাৎ মানুহে শ্মশান মাশান বুলি কোৱা শুনা যায়। এতিয়া কথা হ'ল শ্মশানত কোনে বাস কৰে? শ্মশানৰ অধিপতি হ'ল মহাকাল শিৱ আৰু শ্মশান কালী। মাশানৰ পূজা ঘৰত কোনেও নকৰে। নির্জন ঠাই, নদীৰ পাৰ, শ্মশান ভূমিত এই পূজা কৰা হয়। গতিকে গুণগত আৰু স্থানগত মিলনৰ শ্মশানৰ সৈতে মাশানৰ মিল দেখা যায়। শিৱ-কালীৰ লগত বহুতো ভূত-পিশাচ, অপদেৱতা থাকে, অনুৰূপ শিৱ-কালীৰ আজ্ঞাবাহী অনুচৰ মাশানকো অপদেৱতা বুলি ধৰা হয়।

(গ) বহুতেই ভাবে যে শ্মশান শব্দৰ পৰা মাশান শব্দৰ উৎপত্তি। ড° গিৰিজা শংকৰ ৰায়ৰ মতে-

'সাধাৰণ লোক মাশানকে শিব বলিয়াই মান্য ও মানত কৰেন। উপৰক্ত শব্দটি পর্য্যালোচনা কৰিলেও আমাদের অনুমানটির ভিত্তি সুদৃঢ় হইতে পারে। শ্মশান-মাশানও বলা হইয়া থাকে। সম্ভবত শ্মশানে যে দেবতা বিরাজ করেন সেই দেবতাই পরবর্তী কালে মাশান হইয়াছেন, অর্থাৎ শ্মশানচারী শিৱই মাশানের মূলে রহিয়াছেন।'[৫]

(ঘ) চাৰু চন্দ্র সান্যালৰ মতে-

'Masan is said to be the oppspring of the union of Kali (Mother) and Dharma (Father). There is a story about its birth. Once mother Kali went to bathe in a river. She was alone. Suddenly god Dharma appeared. They had union and Masan was born. He was named Pitsla Masan or simply masan. He is said to be a great fighter the

leechis said to be a manifestation of masan and hence if any one gets frightened at the sight of an approaching leech and in consequence gets fever. A pak is done to propitiate masan. This spirit is said to ride on a horse.[৬]

(ঙ) "নমঃ কুবেৰম ধনদং খড়গং দ্বিভূজং পীতবাসাং প্রসন্নবদন দেৱ দক্ষ গুহাক সেবিতং" মাশান পূজাৰ এই সংস্কৃত মন্ত্রৰ পৰা স্পষ্ট বুজা যায় যে মাশানক কুবেৰ বুলি গ্রহণ কৰা হৈছে। কুবেৰৰ অন্য নাম যক্ষ। এই যক্ষৰ পৰাই উত্তৰ বঙ্গত যখা ঠাকুৰৰ উৎপত্তি। ৰাজবংশী সমাজত বিশ্বাস যে এই যখা ঠাকুৰ হৈছে শিৱ। মাশান ঠাকুৰক হিন্দুৰ যক্ষ কুবেৰ তথা শিৱৰ অন্যৰূপ হিচাপে প্রতিষ্ঠা কৰাৰ প্রচেষ্টা চলিছিল।

মাশানৰ বাসস্থান ঃ

মাশানৰ বাসস্থান সম্পর্কে কোচ ৰাজবংশী সমাজত বিভিন্ন বিশ্বাস প্রচলিত আছে। মাশানৰ বাসস্থান শ্মশানত। পূর্বত মাশানৰ পূজা শ্মশানত চলিছিল বাবে মাশানৰ বাসস্থান শ্মশানত বুলি ভৱা হয়। তাৰোপৰি ৰূপভেদে মাশানৰ বাসস্থান ভিন্ন। নির্জন বিশাল পথাৰ, জংগল, নদী, বিল পুখুৰী, বিলৰ পাৰ, বাঁহনি, শ্মশানত ভিন্নৰূপী মাশানে বাস কৰে।

মাশানৰ প্রকাৰ ঃ

লোক দেৱতা মাশানৰ ওঠৰো (১৮) প্রকাৰ ৰূপৰ উল্লেখ পোৱা যায়। সেইবোৰ হ'ল -

১) **বাৰীকা মাশান ঃ** বাৰীকা মাশান ঘৰৰ পিছফালৰ বাঁহনিত থাকে। কোনোবাই দোষ ত্রুটি কৰিলে বাৰীকা মাশানে লম্ভে। এই মাশানৰ নির্দিষ্ট কোনো থান নাই।

২) **চান্দিয়া মাশান ঃ** লোকবিশ্বাস যে এই মাশান তপা আৰু এই মাশানে লম্ভিলে মুৰৰ চুলি উঠি যায়। ঠাই ভেদে চান্দিয়া মাশান, ন্যাড়া মাশান, মুড়িয়া মাশান বা নিস্কিন্দা মাশান নামে জনা যায়।

৩) **ছলনা মাশান ঃ** যিকোনো ৰাস্তাৰ কাষত বা ৰাস্তাৰ ওচৰৰ গছত এই মাশান বাস কৰে। বিভিন্ন ৰূপ ধাৰণ কৰি পথচাৰীক ছলনা কৰি পথ ভুল কৰি দিয়ে। স্থান ভেদে ইয়াক চালান মাশান, ঘোড়া মাশান, ভ্যাড়া মাশান, হাতি মাশান, সিংহ মাশান গড়কাটা মাশান, ইত্যাদি নামেৰে জনা যায়।

৪) **ৰঙিয়া মাশান ঃ** এই মাশান বিভিন্ন ৰূপ ধাৰণ কৰি মানুহক বিভ্রান্ত কৰে। স্থান ভেদে অঙিনা মাশান, অঙ্গিয়া, উংগিয়া মাশান নামেৰে জনা যায়।

৫) **ভুলা মাশান ঃ** মানুহক ভুল পথেদি লৈ যায় আৰু বিপদত পেলায়। নির্জন পথাৰত ভুলা মাশান থাকে। ভুলা মাশান ভৰ কৰাক পাউৰে ধৰা বুলি কয়। পাউৰ সম্ভৱতঃ পৰীৰ অপভ্রংশ।

৬) **শুটকা মাশান ঃ** ক্ষীণকায় এই মাশান লম্ভিলে ৰোগী ক্রমশঃ শুকাই ক্ষীণাই যায়। এই মাশানৰ নির্দিষ্ট কোনো বাসস্থান নাই। স্থান বিশেষে এই মাশানক হাগুড়া মাশান বুলিও জনা যায়।

৭) **ওবুয়া মাশান ঃ** এই মাশানৰ কোপ দৃষ্টি পৰিলে আক্রান্ত ব্যক্তিৰ বমি হয়। স্থান বিশেষে অবুয়া মাশান, পইৰী মাশান, সুৰ মাশান, টসা মাশান ইত্যাদি নামেৰে জনা যায়।

৮) **চুচিয়া মাশান ঃ** নির্জন পথাৰত বাস কৰে। এই মাশানে ভৰ দুপৰীয়া, সন্ধিয়া আৰু মধ্যৰাত্রিত পথচাৰীক আক্রমণ কৰে।

৯) **কুহুলীয়া মাশান ঃ** কুলী চৰাইৰ মাত অনুসৰণ কৰে। ৰাজবংশী ভাষাত কুহুলী মানে কুলী চৰাই। এই কুলী চৰাইৰ মাত দি মানুহক বিভ্রান্ত কৰে। কুহুলীয়া মাশানৰ নির্দিষ্ট কোনো স্থান নাই।

১০) **লেংটিয়া মাশান ঃ** লেংটিয়া মাশান উলংগ হৈ থাকে। সকলো সময়ত উলংগ হৈ থাকে বাবে এই মাশানক লেংটিয়া, নাঙোট মাশান বোলা হয়।

১১) **বিষুৰা মাশান ঃ** এই মাশান লম্ভিলে সর্বশৰীৰত বিষ হয়। এই মাশান সকলোতে চলা ফুৰা কৰে।

১২) **ঘাটিয়া মাশান ঃ** পুখুৰী, খাল, বিল আদিৰ পাৰত বাস কৰে। এই মাশানৰ নির্দিষ্ট কোনো স্থান নাই।

১৩) **বহতা মাশান ঃ** বহতা মাশান খাল, বিল, নদী পুখুৰীৰ পানীত ভাসমান হৈ থাকে আৰু কলৰ ভূৰত বাস কৰে। ভুলতে যদি কোনোৱে উক্ত ভূৰত স্পর্শ কৰে তেতিয়া বহতা মাশান লম্ভে।

১৪) **কাল মাশান ঃ** কাল মাশান শ্মশানত বসবাস কৰে। শ্মশানৰ ওচৰেদি নিশাৰ ভাগত যাতায়ত কৰিলে কাল মাশানে লম্ভে। কাল মাশানে লম্ভিলে ৰোগী বেছিদিন জীয়াই নাথাকে। স্থান বিশেষে শ্মশান মাশান, শ্মশান কালী আদি নামেৰে জনা যায়।

১৫) **তিছিলা মাশান ঃ** জলাশয়ত ইয়াৰ বাসভূমি। নদী পৰিত্যক্ত পুখুৰী, বিল, কুড়াত এই মাশানে বাস কৰে। স্থান ভেদে ইয়াৰ বিভিন্ন নাম- জলুৱা মাশান, পিছলা মাশান, তিশিলা মাশান,গদাধৰ মাশান ইত্যাদি। নদী, জলাশয় পুখুৰীত গা ধুবলৈ গৈ অথবা দুপৰীয়া, সন্ধিয়া অকলে ঘুৰি ফুৰা ব্যক্তিক এই মাশানে লম্ভে। এই মাশানৰ বাহন শাল মাছ।

১৬) **কালী মাশান ঃ** গাওঁৰ সকলো ঠাইতে এই মাশানে বাস কৰে। সকলো মাশানতকৈ এই মাশান ভয়ংকৰ।

১৭) **ডাকিনী মাশান ঃ** ডাকিনী মাশান লম্ভিলে আক্রান্ত ব্যক্তিয়ে নানা স্বপ্ন দেখা পায়। স্থান ভেদে ডাকিনী মাশানক পিচ্ছকাৰী, খ্যাতাউৰা মাশান নামেৰে জনা যায়।

১৮) **ডেমছা মাশান ঃ** সেমেকা স্থানত এই মাশান থাকে। এই মাশান লম্ভিলে প্রচণ্ড ঠাণ্ডা লাগে আৰু শৰীৰত কঁপনি উঠে আৰু কানেৰে নুশুনা হয়। এই মাশানক ড্যামসা মাশান টসা মাশান নামেৰেও জনা যায়। এই মাশানৰ বাহন গাহৰি আৰু শোল মাছ।

উক্ত ওঠৰো (১৮) প্রকাৰ মাশানৰ বাহিৰেও অন্যান্য লৌকিক দেৱ দেৱীক মাশানৰ লগত তুলনা কৰা হয়। যেনে যখা অন্যতম লৌকিক দেৱতা হ'লেও বিভিন্ন ঠাইত যখা মাশান ৰূপে পূজিত হয়। শিৱৰ লৌকিক ৰূপ বহু থানত মাশান ৰূপে পূজিত হয়। আকৌ কিছু থানত মাশানক শিৱ জ্ঞান কৰি পূজা কৰা হয়।

মাশানে লম্ভা ব্যক্তিৰ লক্ষণ ঃ

মাশানে বিভিন্ন কাৰণত মানুহক লম্ভে। দুপৰীয়া সন্ধিয়া আৰু ৰাতি অকলে নির্জন পথাৰত, শ্মশানত গলে, নদী-জলাশয়ত গলে, হাবিত ঘুৰি ফুৰিলে মাশানে লম্ভে। মাশান লম্ভি আক্রান্ত হোৱা ব্যক্তিয়ে আঁখাৰ মাটি (চৌকাৰ মাটি) ছাঁই, আঙঠা, ভাজা, পোৰা, কয়লা ইত্যাদি খায়। শিশু বা কিশোৰৰ ক্ষেত্রত পেট ফুলি যায়, গ্রহণী, বদহজম, দুর্বলতা হয়, স্বপ্নদোষ হয়, ৰাতি মাছ ধৰাৰ সপোন দেখে, বিছনাত প্রসাৱ কৰে, প্রলাপ বকে। বিভিন্ন কাৰণত মাশানে মানুহৰ দেহত লম্ভে, যেনে- নদীত প্রস্রাৱ কৰিলে, মলত্যাগ কৰিলে, নদীক ভক্তি প্রদর্শন নকৰিলে, ৰজঃস্বলা নাৰীয়ে নদীত স্নান কৰিলে আদি অনাচাৰৰ বাবে মানুহক মাশানে লম্ভে। মাশানে লম্ভিলে ওজা বা কবিৰাজৰ দ্বাৰা আক্রান্ত ব্যক্তিক জৰা-ফুৰা, পানী জৰা বা ৰোগীক পৰীক্ষা কৰি কোন মাশানে লম্ভিছে ওজাই জানি সেই মাশানক পূজা কৰে। মাশানে লোহা জুই ইত্যাদি বস্তুলৈ ভয় কৰে সেইবাবে হাতত লোৰ অস্ত্র, জুই, জালৰ গুটি, কটাৰী ইত্যাদি থাকিলে মাশানে আক্রমন কৰিব নোৱাৰে।

মাশান দেৱতাৰ মূর্ত্তি ঃ

লোকদেৱতা মাশানৰ প্রতীক আৰু মূর্ত্তি স্থান ভেদে ভিন্ন ভিন্ন হোৱা দেখা যায়। কিছু ঠাইত মাশানৰ প্রতীকৰূপে মাটিৰ থাপনা, পাথৰ, শিলাখণ্ড, কিছু ঠাইত মাটিৰ প্রতিমা আৰু কুঁহিলাৰে নির্মিত মাশানৰ মূর্ত্তিক পূজা কৰা হয়। মাশান দেৱতা দ্বিভূজ আৰু চতুর্ভূজধাৰী। মাশানৰ বাহন হৈছে ঘোঁৰা, হাতী, গাহৰি, শোলমাছ, শালমাছ। প্রকাৰ ভেদে মাশানৰ হাতত বিভিন্ন অস্ত্র থাকে যেনে- দণ্ড, গদা, ত্রিশূল, শালমাছ ইত্যাদি।

কুঁহিলাৰে নির্মিত মাশানৰ মূর্ত্তি নির্মাণ কৰা লোকসকলক 'মালী' বোলা হয়। মালীসকলে কৃষি কৰে। মালীসকলে মূলত সময় বাংলাদেশৰ ৰংপুৰ অঞ্চলৰ পৰা অহা লোক। কোনো ব্যক্তিক মাশানে লম্ভিলে ওজাৰ বিধান মতে মালীয়ে মাশান মূর্ত্তি নির্মাণ কৰে। মাশানৰ মূর্ত্তি বজাৰত কিনিবলৈ পোৱা নাযায়। মাশান পূজাৰ উদ্দেশ্যতহে মাশান দেৱতাৰ মূর্ত্তি নির্মাণ কৰা হয়। মাশান অতি ভয়ংকৰ লোকদেৱতা সেইবাবে মালী বা অন্য মানুহে মাশানক ঘৰত থান নিদিয়ে।

মাশান পূজাৰ উপকৰণ ঃ

লোকদেৱতা মাশানৰ নিত্য পূজা দিয়া নহয়। বহুতো মাশান থানত শনিবাৰ আৰু মঙ্গলবাৰে পূজা দিয়া হয়। বার্ষিক পূজা চ'ত, ব'হাগ আৰু আহাৰ মাহত অনুষ্ঠিত হয়। তদুপৰি কাৰোবাৰ ওপৰত মাশান দেৱতাই লম্ভিলে ওজাৰ বিধান মতে যিকোনো দিনত পূজা কৰা হয়। মাশান দেৱতাৰ পূজাত নৈবদ্য ৰূপে দিয়া হয়- ফুল, জবাফুল, বেলপাত, মনোহৰ কল, আঁঠিয়া কল, গাখীৰ, আখৈ, দৈ, চিনি তামোল-পান, ধূপ-ধূনা, চিৰা, চাউল ভাজা, চিৰা ভাজা, মাছ পোৰা, চেংমাছ পোৰা, কাঠ, কয়লা ইত্যাদি। উৎসর্গ কৰা হয় পঠা ছাগলী, হাঁহ, কলা পাৰ চৰাই, গাহৰি, শোল মাছ আদি। বহু থানত বলি বিধানৰ প্রচলন আছে। উত্তৰবঙ্গৰ দিনহাটাৰ গড়কাটা মাশান থানত গাহৰি বলি দিয়া হয়।

মাশান পূজাৰ সময়কাল ঃ

ওজা বা দেউসীয়ে মাশান পূজা কৰে শনিবাৰ বা মঙ্গলবাৰে। অমাৱস্যাৰ ৰাতি বা সন্ধিয়া সময়ত মাশান পূজাৰ বাবে উৎকৃষ্ট সময় বুলি মানি অহা হৈছে। কাৰোবাক মাশানে লম্ভিলে ওজা বা কবিৰাজে যিকোনো সময়ত জৰা-ফুকা,

পানীজৰা, ঝাপ ইত্যাদি দিয়ে।

মাশান পূজাৰ পূজাৰী যওজায দেউসী ঃ

কোচৰাজবংশী সমাজত পূজা-পার্ব্বণ সামাজিক আচাৰ-অনুষ্ঠান সম্পন্ন কৰে নিজস্ব ৰাজবংশী জনগোষ্ঠীৰ পূজাৰীৰ দ্বাৰা। কোচৰাজবংশী সমাজত এই লোকসকল অধিকাৰী, দেউসী, ভৌৰিয়া, ওজা, দেমধা ইত্যাদি নামেৰে জনা যায়। এই পূজাৰীবোৰ কিছুমানে বংশ পৰম্পৰাৰে হয় আৰু কিছুমানে সামাজিক দায়িত্ব লাভ কৰে। অসম আৰু পশ্চিমবংগত মাশান পূজা, মাশান লম্ভা লোকক জৰা-ফুকা কৰে ওজা আৰু দেমধাসকলে। ইতিহাস অনুসন্ধান কৰিলে জনা যায় যে লোকদেৱতা বা গ্রামদেৱতাৰ পূজাৰীসকল আছিল স্থানীয় ৰাজবংশীলোকসকল। কিন্তু পৰৱর্ত্তী সময়ত অনার্য্য দেৱতাৰ পৰা আর্য দেৱতালৈ পৰিৱর্তন কৰাৰ চেষ্টাত ব্রাহ্মণ পুৰোহিতৰ দ্বাৰা পূজা দিয়া দেখা যায়। কোচবিহাৰ জিলাৰ বিভিন্ন থানৰ মাশান দেৱতাৰ পূজাৰ পুৰোহিত ব্রাহ্মণ সম্প্রদায়ৰ লোক।

মাশান পূজাৰ মন্ত্র গীত ঃ

মাশান পূজাৰ মন্ত্র মূলতঃ ৰাজবংশী ভাষাত গোৱা হয়। ৰাজবংশী ভাষাৰ লগতে সংস্কৃত মন্ত্রও গোৱা দেখা যায়। পূজাৰ সময়ত ওজা-দেউসীয়ে গোৱা মন্ত্র-গানবোৰ প্রয়োগিক পদ্ধতিত ছন্দৰ প্রয়োগত এক বিশেষ মাত্রা লাভ কৰে। কেতিয়াবা মন্ত্রবোৰ ওজা বা দেউসীয়ে মুখৰ ভিতৰতে পাঠ কৰে। মাশান পূজাৰ শেষ পর্বত জিভাক ওলোটাই তালুত স্পর্শ কৰি অস্পষ্ট স্বৰত মন্ত্র উচ্চাৰণ কৰাৰ ৰীতি আছে বুলি জনা যায়।

ড° সুভাস মিস্ত্রীয়ে মন্ত্রৰ সংজ্ঞা এনেদৰে দিছে-

'মন্ত্র হ'ল সকল জীৱ প্রাকৃত অ-প্রাকৃত বিষয়ের রহস্যময় অথবা উদঘাটিত, অচিন্ত ও অমোঘ শক্তি যা গোপনে বা নিভৃতে অনুশীলন ও সম্পাদনযোগ্য। জপ্য উচ্চারিতব্য ইষ্ট প্রতীক বা গুঢ়ার্থক ধ্বনি শব্দ বাক্য বা বাক্যাংশ অথচ দ্রুত অভীষ্ট সিদ্ধির পরিপূরক তথা পরিচায়ক।'[৭]

মাশান পূজাৰ মন্ত্র গানৰ সুৰত গোৱা হয়। তলত মাশান পূজাৰ কেইটামান মন্ত্র গান তুলি দিয়া হ'ল-

মাশান পূজাৰ আৰম্ভনিতে ওজা বা দেউসীয়ে পূজা আসনত বহি প্রথমে আৱাহন মন্ত্র পাঠ কৰে-

"চেকঠি আসন চেকঠি বহ'সন
চেকঠি বসিল শ্রী নন্দেৰ নন্দন"

আৱাহন মন্ত্রগানৰ পিছত নামানী গানৰ জৰিয়তে মাশানক থানত নমাই অনা হয়।

নামানী গান-

কি কৰিছিও কালী পীৰ নিচন্তে বসিয়া
চামেৰ দড়ি লোহাৰ হাত্যোৎ কৰিয়া।
পূর্ব পৰি আজ্যে নাগি চালন হাটে
পূর্বে ধৰম গোসাইৰ নাড়িল আসন
ধৰম গোসাই নিলেক ভক্তি
কৰি সবন্দেৰ আখেৰা নাগি
চালিলেক হাটি।
সবন্দে আখেৰা উত্তৰ সিংহাসন
তাতে বসিয়া প্রভূ কৰহ আসন।[৮]

মাশানক থানত নামানী মন্ত্রৰে নমাই অনাৰ পিছত আসনত বহুৱাবলৈ বসানী মন্ত্র বা গান গোৱা হয়।

বসানী মন্ত্র ঃ

"তিন তেউৰী তিন তাল
মধ্যতে বসিল শ্রীদাম আৰ গোপাল
চাইৰ দিকে চাইৰ চাল
মধ্যতে জদেৰ আসন
তিন তেউৰী তিন তাল
মধ্যতে বসিল শ্রীদাম আৰ গোপাল"[৯]

মাশান পূজাৰ মাটিৰ প্রতিমা বা কুঁহিলাৰ প্রতিমাক চক্ষুদান কৰা হয় মন্ত্রৰ জৰিয়তে।

চক্ষুদান মন্ত্র ঃ

"জল শুদ্ধ তল শুদ্ধ আৰ শুদ্ধ কায়া
শলাৰ মাশান শুদ্ধ কৃষ্ণেৰ আজ্ঞা পায়া।"[১০]

মাশান দেৱতাই মানুহক লম্ভিলে ওজা বা কবিৰাজে মন্ত্রৰ দ্বাৰা জৰা-ফুকা কৰা হয়। এই জৰা ফুকা কৰা মন্ত্রবোৰক ঝাড়ানী মন্ত্র বোলা হয়।

ঝাড়ানী মন্ত্র ঃ

"আকাশে মাশান পাতালে মাশান, হাগুয়া
ছাদুৱা হলুয়া,-অন্ধাশূলা, কানাকুকুড়ী।
পূজা পানী নেইক হস্তে কৰিয়া
পূজা পানী যা তুই তুষ্ট কৰিয়া
ফন্যাৰ শৰীৰ ছাড়িয়া যা তুই
কইলাশোক নাগিয়া
শিবশঙ্কৰেৰ মাথাত মুছিবো দুই পাও

দোহাই ধর্মৰ মাথাত মুছিবো দুই পাও।।"[১১]

মাশান পূজা শেষ হোৱাৰ পিছত ওজা বা কবিৰাজে চালান মন্ত্ৰৰ দ্বাৰা মাশানক চালান দিয়ে।

চালান মন্ত্ৰ ঃ

"শিবেৰ দুৰ্লভ নামে যাবো নিতে নিতে
ব্ৰহ্মাৰ দুৰ্লভ নাম যাবো নিতে নিতে
ৰুগী ছাড়ি ভাসিল কাল
ঐ জীৱেৰ বদলিৰে।"[১২]

মাশান পূজাৰশান্তি মন্ত্ৰ ঃ

"আন্ধাৰ কিটকি বিজল ছটকি
গগনে গৰজিল দেওয়া গে মাই
গগনে গৰজিল দেওয়া।
আষাঢ়ে সাবন মাসে
কিসানে কাটে আলি
গে মাই, গগনে গৰজিল দেওয়া
ঐ মতন পঞ্চবইনি কাটিয়া দিলো জালি
গে মাই.....
ঐ ৰকমে পঞ্চবইনি ভূমিতে পৰিলো
গে মাই.....
আৰ ওয়া ওয়া চোয়া চোয়া
কান্দিবাৰ নাগিলো গে মাই।"[১৩]

মাশান পূজাৰ সকলো কৰ্ম শেষ হোৱাৰ পিছত যাবতীয় পূজা সামগ্ৰী, উপকৰণ, প্ৰতিমা ইত্যাদি পানীতে বিসৰ্জন দিয়ে। এই সকলো কাম কৰে ওজাৰ সহকাৰীজনে। সকলো সামগ্ৰী বিসৰ্জন দি ঘুৰি আহোতে পিছফালে চাব নাপায়। পিছফালে চালে মাশানে লম্ভিব পাৰে বুলি লোকবিশ্বাস আছে।

ভাসানী মন্ত্ৰ ঃ

গঙ্গা গঙ্গা মা গঙ্গাও
তোমাৰ কোলে ১৮ মাশানকে
দিনু ভাসায়ে।
ভাসানী মন্ত্ৰৰ সৈতে ভাসানী গীতো গোৱা হয়।
"আজি তিস্তা নদীৰ ধাই ধাই বালা
তুইৰে চ্যাংৰা নাইয়া গলাৰ মালা
দেৰে নাইয়া পাৰ কৰি
হামেৰা বামো কৈলাশপুৰী।"

শেষত উপস্থিত সকলোৰে শৰীৰত শান্তিপানী চটিয়াই মঙ্গল কামনা কৰি মাশান পূজাৰ সমাপ্তি ঘোষনা কৰে।

মাশান পূজাৰ প্ৰসাদ ভক্ষনৰ বিশেষত্ব ঃ

মাশান পূজা শেষ হোৱাৰ পিছত দেৱতালৈ নিবেদন কৰা প্ৰসাদ, চিৰা ভজা আৰু চেংমাছ পোৰা ৰীতি অনুযায়ী তিনিবাৰ চোবাই মাশান দেৱতালৈ নিক্ষেপ কৰা হয় ওজাৰ নিৰ্দেশত। তাৰ পিছত আকৌ প্ৰসাদ গ্ৰহণ কৰে। পূজাত এনেদৰে প্ৰসাদ ভক্ষণ অন্য ক'ত দেখা পোৱা নাযায়। মাশান দেৱতালৈ উৎসৰ্গিত পাৰ চৰাইবোৰ জুইত পুৰি চিৰা ভজাৰ লগত মিহলাই প্ৰসাদ হিচাপে গ্ৰহণ কৰা হয়। চিৰা আৰু পোৰা পাৰ চৰাইৰ মাংস ভক্ষণ অনাৰ্য সংস্কৃতিৰ নিদৰ্শন বহন কৰে।

মাশানৰ উপাসক সম্প্ৰদায় ঃ

লোকদেৱতা মাশানৰ প্ৰধান উপাসক মঙ্গোলীয় নৃগোষ্ঠীৰ অন্তৰ্গত কোচ আৰু ৰাজবংশীসকল। পশ্চিমবংগৰ কোচবিহাৰ, জলপাইগুৰি, দার্জিলিং, উত্তৰ দিনাজপুৰ, দক্ষিণ দিনাজপুৰ আৰু অসমৰ ৰাজবংশী সমাজত মাশানৰ যথেষ্ট প্ৰভাৱ দেখিবলৈ পোৱা যায়। কোচ ৰাজবংশীৰ লগতে ৰাভা, হাজং সম্প্ৰদায়েও এই পূজা কৰে। ড° চাৰু চন্দ্ৰ সান্যালৰ মতে- ৰাভা সমাজত বনদেৱতাৰূপে মাশান পূজা কৰে। কামাখ্যাগুৰি অঞ্চলৰ কোচ ৰাভাসকলে অনান্য দেৱ-দেৱীৰ লগতে মাশান পূজা কৰে। বাংলাদেশৰ ৰংপুৰ জিলা, বিহাৰৰ পূৰ্ণিয়া জিলাতো কোচ ৰাজবংশীসকলে মাশান পূজা কৰে। মেঘালয়ৰ গাৰোপাহাৰ অঞ্চলতো হাজং সকলে মাশানক আজিও জাগ্ৰত দেৱতাৰূপে পূজা কৰে।

মাশান আৰ্য্য নে অনাৰ্য্য দেৱতা ঃ

মাশান মূলতঃ অনাৰ্য্য দেৱতা। পৰৱৰ্তী সময়ত বৰ্ণ হিন্দু ধৰ্মৰ প্ৰভাৱত বা হিন্দু ধৰ্ম গ্ৰহণ কৰাৰ পিছত মাশানক বৈদিক দেৱতাৰ ৰূপত স্থান দিয়া দেখা যায়। মাশানৰ সংস্কৃত মন্ত্ৰই ইয়াৰ প্ৰমাণ বুলিব পাৰি। মাশান ঠাকুৰক দিয়া পোৰা চেংমাছ, পাৰ চৰাই পোৰা, গাহৰি বলি দিয়া আদি কথাৰ পৰা স্পষ্ট হয় যে ই অনাৰ্য দেৱতা। বৰ্তমানে বহু মাশান থানত জীয়া গাহৰিৰ ঠাইত মাটিৰ গাহৰিৰ মূৰ্ত্তি নিৰ্মাণ কৰি উৎসৰ্গা কৰা হয়। হিন্দু ধৰ্মত যে বৰ্তমান গাহৰি-কুকুৰা নিষিদ্ধ এয়ে প্ৰমাণ কৰে। আৰ্য্য দেৱতাৰূপে ইয়াক গাখীৰ, কল, চেনী, দৈ, আখৈ ইত্যাদি নৈবদ্য দিয়া হয়। সৰ্বশক্তিমান মাশানক হিন্দুৰ যক্ষ, কুবেৰ তথা শিৱৰ অন্যৰূপত প্ৰতিষ্ঠা কৰাৰ প্ৰচেষ্টা চলিছিল। হিন্দু দেৱ-দেৱীৰ দৰে মাশানৰো মূৰ্ত্তি আৰু বাহন কল্পনা কৰা হৈছিল। এই কথাবোৰৰ বিশ্লেষণ কৰিলে দেখা যায় যে মাশানক পৰ্য্যায়ক্ৰমে আৰ্যীকৰণ কৰা হৈছে।

সামৰণি ঃ

মাশান পূজা ধর্মীয় বিশ্বাসৰ ওপৰত প্রতিষ্ঠিত। ইয়াৰ লগত মানুহৰ আবেগ-অনুভূতি জড়িত হৈ আছে। পৰম্পৰা ৰক্ষা কৰি বর্তমানেও এই পূজা প্রচলিত আছে। বর্তমান গোলকীকৰণৰ যুগত এই মাশান দেৱতাৰ যি ৰূপ সেয়া সমাজৰ পৰা ক্রমান্বয়ে পৰিবর্তন হৈ আহিছে। আগৰ দিনত চাৰিওফালে বৃহৎ বৃহৎ হাবি, নদী, পুখুৰী, বিল, জলাশয় বহুত আছিল। এতিয়া এইবোৰ কমি আহিছে। আগৰ চিকিৎসা বিজ্ঞান আজিৰ দৰে অগ্রগতি লাভ কৰা নাছিল। মানুহে সাধাৰণ বেমাৰতে জ্বলা-কলা খাব লগা হৈছিল। মানুহৰ আপদ-বিপদৰ পৰা ৰক্ষা কৰিবলৈ লোকদেৱতা সমূহৰ সৃষ্টি আৰু পূজা চলি আহিছিল। বর্তমান বিশ্বায়ণৰ যুগত মানুহৰ কর্মব্যস্তময় জীৱন, আর্থিক সমস্যা, নগৰকেন্দ্রীক আধুনিক জীৱন, চিকিৎসা বিজ্ঞানৰ অগ্রগতিয়ে লোক জীৱনত এইবোৰ বিশ্বাসৰ ক্ষেত্রত পৰিবর্তন সাধন কৰিছে। ❑

প্রসঙ্গ টোকা ঃ

১। দ্বিজেন্দ্র নাথ ভকত (সম্পা) ৰাজবংশী লোক দেৱতা মাশান, পৃ-১
২। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-৬১
৩। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-৫১
৪। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-২২
৫। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-৬১
৬। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-৬১
৭। উল্লিখিত গ্রন্থ, পৃ-৭২
৮। তথ্যদাতা ঃ কামাখ্যা অধিকাৰী
৯। তথ্যদাতা ঃ কামাখ্যা অধিকাৰী
১০। তথ্যদাতা ঃ জহৰলাল অধিকাৰী
১১। তথ্যদাতা ঃ জহৰলাল অধিকাৰী
১২। তথ্যদাতা ঃ জহৰলাল অধিকাৰী
১৩। তথ্যদাতা ঃ দয়াল অধিকাৰী

গ্রন্থপঞ্জী ঃ

দাস, উমেশ (সম্পা) ঃ সাহিত্য সংস্কৃতি মুকুৰ, সাহিত্য চ'ৰা অসমীয়া বিভাগ, কোকৰাঝাৰ চৰকাৰী মহাবিদ্যালয়, প্রথম প্রকাশ, ২০১৪

ভকত, দ্বিজেন্দ্রনাথ ঃ ৰাজবংশী লোক দেৱতা মাশান, চি ই এস আৰ, গোলকগঞ্জ, ধুবুৰী, ২০০৭

ভকত, লাবণ্য ঃ ৰাজবংশী লোকসংস্কৃতি, বনমালী প্রকাশন, ধুবুৰী, ২০১৪

তথ্যদাতা ঃ

১। কামাখ্যা অধিকাৰী (৬০), টুনীয়াডাঙ্গা, কোকৰাঝাৰ, অসম
২। দয়াল ৰায় (৭০), গঙ্গাৰ জাফলং, কোকৰাঝাৰ, অসম
৩। জহৰলাল অধিকাৰী (৭২), বনৰগাওঁ, কোকৰাঝাৰ, অসম
৪। বাবুলাল ৰায় (৭০), হাব্রুবাৰী, কোকৰাঝাৰ, অসম
৫। ৰত্নেশ্বৰ ৰায় (৫৮), সেৰফাংগুৰি, কোকৰাঝাৰ, অসম

গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
বড়োলেণ্ড বিশ্ববিদ্যালয়, কোকৰাঝাৰ, অসম
ফোন-৭০০২৭১১১৪৮
E-mail - gobindabaishya111@gmail.com

প্ৰবন্ধ

লিংগ অধ্যয়নৰ আলোকত মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ 'নীলকণ্ঠী ব্ৰজ'

✍ বিকাশ দাস

প্ৰস্তাৱনা ঃ

নাৰীবাদী সাহিত্য সমালোচনাৰ ইতিহাসত ইলেইন শ্বোৱাল্টাৰ (Elaine Showalter, 1941) ৰ প্ৰধান কৃতিত্ব হৈছে বিস্মৃত আৰু উপেক্ষিত নাৰীৰ পৰিচয় আৰু সাহিত্যৰ পুনৰাবিস্কাৰ। শ্বোৱাল্টাৰৰ মতে নাৰী কেৱল উপসংস্কৃতি নহয়, নাৰীৰ নিজস্ব ভাষা, সাহিত্য আৰু অভিজ্ঞতাৰ এখন সুকীয়া জগত আছে। নাৰীবাদী সমালোচনাৰ বিষয়ে মতপোষণ কৰিবলৈ যাওঁতে সমালোচক গৰাকীয়ে ইয়াক দুটা ভাগত (পঠন কেন্দ্ৰিক আৰু লিখন কেন্দ্ৰিক) বিভক্ত কৰিছে। 'লিংগ অধ্যয়ন'ৰ বিষয়টো শ্বোৱাল্টাৰে 'মতাদৰ্শবাদী বুলি অভিহিত কৰা পঠন কেন্দ্ৰিক ধাৰাটোৰ পৰা উদ্ভুত।[১] (বশিষ্ঠ, প্ৰাঞ্জল শৰ্মা, ২০০৯ঃ১৪১) পৰৱৰ্তী সময়ত বিভিন্ন চিন্তা, তত্ব আৰু দৰ্শনৰ সংযোজনে লিংগ অধ্যয়নৰ বিষয়টোক পূৰ্বতকৈ অধিক শক্তিশালী কৰি তোলে। এই ক্ষেত্ৰত ফাৰ্ডিনাণ্ড দ্য চচ্যুৰৰ যুগ্ম বৈপৰীত্য, নৃতত্ববিদ ক্লড লেভি ষ্ট্ৰছৰ লিংগ পৃথকীকৰণ, জেক লাঁকাৰ নব্য ফ্ৰয়েদীয় মনঃ সমীক্ষণ, জুলিয়া খ্ৰীষ্টোৱাৰ চিহ্নতত্ব, মিশ্বেল ফুকোঁৰ ক্ষমতা সম্পৰ্ক, ৰ'লা বাৰ্থৰ সংস্কৃতি অধ্যয়ন, জেক ডেৰিদাৰ বিনিৰ্মান আদি উল্লেখযোগ্য। প্ৰাৰম্ভিক পৰ্যায়ত লিংগ অধ্যয়নৰ বিষয়টো কেৱল নাৰীৰ সামাজিক লিংগ নিৰ্মাণ সম্পৰ্কীয় আলোচনাতে সীমাবদ্ধ আছিল। পৰৱৰ্তী সময়ত ই পুৰুষৰ প্ৰাসংগিকতাৰ লগতে বিষম লিংগকামিতা, সমকামিতা, উভয়লিংগতা আৰু নপুংসকতাৰ বিষয়কো সামৰি লয়। লিংগ তত্বই ইতিমধ্যে বিশ্বসাহিত্যত প্ৰৱেশ কৰিছে। অসমীয়া সাহিত্যতো জ্ঞাত-অজ্ঞাত ভাৱে লিংগ তত্বই ভুমুকি মাৰিছে। বেজবৰুৱা, গোঞাইবৰুৱা, ৰজনীকান্ত বৰদলৈৰ সময়ৰ পৰাই অসমীয়া সাহিত্যত সাংস্কৃতিক লিংগ নিৰ্মাণৰ প্ৰতিচ্ছবি দেখিবলৈ পোৱা যায়।

মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ লীলকণ্ঠী ব্ৰজ ঃ

ব্ৰজক পটভূমি হিচাপে লিখা ভাৰতীয় আঞ্চলিক ভাষাৰ উপন্যাস সমূহৰ ভিতৰত ড° মামণি ৰয়ছম গোস্বামী (১৯৪২-২০১১)ৰ 'নীলকণ্ঠী ব্ৰজ' (১৯৭৬) উপন্যাস খনেই প্ৰথম। উপন্যাসখন লেখিকাৰ ব্যক্তিগত জীৱনৰ বাস্তৱ অভিজ্ঞতাৰ আধাৰত গ্ৰথিত। 'মোৰ লেখাৰ আঁৰৰ কাহিনী' ত লেখিকাই কৈছে ' নীলকণ্ঠী ব্ৰজ নামৰ উপন্যাসখন লেখাৰ সময়ত বৃন্দাবনত আছিলোঁ। ... সেই সময়ত মই নিজে ভোগ কৰা যন্ত্ৰণাৰ ছবি মোৰ নায়িকা সৌদামিনীৰ চৰিত্ৰৰ মাজত ঢালি দিবলৈ চেষ্টা কৰিছিলোঁ।'[২] (১৯৯১ঃ২১২) ইয়াৰ পৰাই অনুমান কৰিব পাৰি উপন্যাসখনৰ নায়িকা দৰাচলতে লেখিকাৰ প্ৰতিকল্প। সত্বা উপন্যাসখনৰ জৰিয়তে লেখিকাই ৰীতি-নীতি আৰু সংস্কাৰৰ বলি হোৱা নায়িকা সৌদামিনীৰ লগতে সামাজিকভাৱে বঞ্চিত, নিঠৰুৱা বিধৱাৰ নিৰাপত্তাহীন জীৱনৰ যি কাহিনী নিৰ্মাণ কৰিছে তাত পিতৃতান্ত্ৰিক সভ্যতাৰ লিংগ বৈষম্যৰ ছবিখন বাস্তৱ ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। আনহাতে উপন্যাসখনৰ কথন কৌশল, চৰিত্ৰৰ ক্ৰিয়া-প্ৰতিক্ৰিয়া, স্বপ্নময়-দুঃস্বপ্নময় পৰিবেশৰ মাজত প্ৰতিধ্বনিত

হোৱা সামাজিক প্ৰতিবাদ আদিয়ে উপন্যাসখনক কিছু পৰিমাণে অতি বাস্তৱবাদী উপন্যাসলৈ ৰূপান্তৰ কৰিছে। ড° গোবিন্দ প্ৰসাদ শৰ্মাই তেখেতৰ 'উপন্যাস আৰু অসমীয়া উপন্যাস' শীৰ্ষক গ্ৰন্থখনত আলোচ্য উপন্যাসখন সম্পৰ্কত এনেদৰে মন্তব্য আগবঢ়াইছে - 'অসমীয়া উপন্যাসত অতি বাস্তৱবাদ যেনেকৈ বিৰল আৰু সেই অতি কম সংখ্যক উপন্যাসৰ ই এখন, ঠিক তেনেকৈ অসমীয়া সাহিত্যৰ অতি কম সংখ্যক কাব্যিক উপন্যাসৰো ই এখন। এক স্বপ্নময় জগত অংকন কৰা এই কাব্যিক উপন্যাস উচ্চ মূল্যৰ এখন উপন্যাস। এই বাবেই যে এনে এখন উপন্যাসেও এক সামাজিক বাস্তৱ প্ৰতিবাদী দৃষ্টিভঙ্গীৰে দাঙি ধৰিছে।[৩] (১৯৯৫ ঃ ১৯০) গতিকে ক'ব পাৰি অসমীয়া উপন্যাস সাহিত্যত 'নীলকণ্ঠী ব্ৰজ' কেইবাটাও দিশৰ পৰা গুৰুত্বপূৰ্ণ এখন অভিনৱ উপন্যাস।

লিংগ অধ্যয়নৰ পৰিচয় ঃ

লিংগ অধ্যয়নৰ আলোচ্য বিষয় সাংস্কৃতিক লিংগ। কিন্তু সাংস্কৃতিক লিংগৰ বিষয়ে আলোচনা কৰিবলৈ যাওঁতে লিংগ অধ্যয়নে প্ৰাকৃতিক লিংগক অস্বীকাৰ কৰিব নোৱাৰে। কাৰণ প্ৰাকৃতিক তথা জৈৱ বৈজ্ঞানিক লিংগক আধাৰ হিচাপে লৈয়ে সমাজ ব্যৱস্থাৰ ভিত্তি আৰু স্বৰূপ (পিতৃতান্ত্ৰিক/মাতৃতান্ত্ৰিক) অনুসৰি ভিন্ন ভিন্ন সামাজিক তথা সাংস্কৃতিক পটভূমিত সামাজিকীকৰণ প্ৰক্ৰিয়াৰ যোগেদি সামাজিক লিংগ (পুৰুষ/নাৰী, পুৰুষসুলভতা/নাৰীসুলভতা) নিৰ্মাণ প্ৰক্ৰিয়া চলি থাকে। পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত সাংস্কৃতিক লিংগই সদায় প্ৰাকৃতিক লিংগ পাৰ্থক্যক সক্ৰিয়/ নিস্ক্ৰিয় হিচাপে মূল্যায়ন কৰাৰ ফলস্বৰূপে পুৰুষ/ নাৰী সম্পৰ্কত এক স্বতঃ সিদ্ধ আৰু দীৰ্ঘম্যাদী বাগ্‌ধাৰাৰ সৃষ্টি হৈছে। যেনে- পুৰুষ আত্ম, কৰ্তা, প্ৰয়োজনীয়, আনহাতে নাৰী পৰ, অপ্ৰয়োজনীয়, দুৰ্বল। হেগেলৰ মতে দুই লিংগৰ ভিতৰত পুৰুষ সক্ৰিয় (Active), আৰু নাৰী নিস্ক্ৰিয় (Passive) সাহিত্যত চাৰিবাৰকৈ নবেল পুৰস্কাৰৰ বাবে মনোনয়ন লাভ কৰা ফৰাচী ঔপন্যাসিক, দাৰ্শনিক জুলিন বেন্দা (Julin Benda, 1867-1956) ৰ মতে নাৰীৰ শৰীৰ পৰা বিচ্ছিন্ন থাকিও পুৰুষৰ শৰীৰে সুকীয়াকৈ অৰ্থ প্ৰকাশ কৰিব পাৰে কিন্তু পুৰুষ অবিহনে নাৰীৰ শৰীৰ তাৎপৰ্যহীন। (Uriel's Report, 1947) দাৰ্শনিক আলফ্ৰেদ ফুইলি (Alfrad Fouillee, 1838-1912) য়ে নাৰী পুৰুষৰ সংজ্ঞা নিৰ্মাণ কৰিছে শুক্ৰাণু/ডিম্বাণুক কেন্দ্ৰ কৰি। ঠিক তেনেদৰে ফ্ৰয়েদৰ মনঃ সমীক্ষাত্মক পদ্ধতিত শিশ্ন পিতৃতন্ত্ৰৰ সাৰ্বভৌমত্বৰ ৰূপক আৰু নাৰী হৈছে লিংগচ্ছেদ প্ৰাণী। পিতৃতন্ত্ৰৰ এনে অনুমান সিদ্ধ ধ্যান ধাৰণাবোৰ মানুহৰ চিন্তন আৰু মননত দকৈ শিপাই ই মজ্জাগত হৈ পৰিছে।

পিতৃতন্ত্ৰৰ লিংগ সম্পৰ্কীয় প্ৰথাগত ধাৰণা সমূহক পোন প্ৰথমবাৰৰ বাবে প্ৰত্যাহবান জনাই নাৰীবাদৰ দ্বিতীয় তৰংগৰ হোত্ৰী চিমন দ্য বিভোৱাই (১৯০৮-১৯৮৬)। বিভোৱাৰ মতে পুৰুষক শুক্ৰাণুবহনকাৰী অথবা নাৰীক ডিম্বাণুবহনকাৰী হিচাপে সংজ্ঞায়িত কৰা উচিত নহয়। কাৰণ জনন কোষৰ সৈতে জীৱৰ সম্পৰ্ক অনিয়ত। সেয়ে শুক্ৰাণু বা ডিম্বাণুক উৎকৃষ্ট বা নিকৃষ্ট হিচাপে অভিহিত কৰিব নোৱাৰি, ই কেৱল নিজৰ দায়িত্ব হে পালন কৰে। (বিভোৱা , ১৯৫৩ (১৯৪৭) ঃ ৫২) বিভোৱাই নাৰী লিংগ নিৰ্মাণ সম্পৰ্কত তেওঁৰ The Second Sex (১৯৪৯) গ্ৰন্থখনৰ দ্বিতীয় খণ্ডৰ প্ৰথম অধ্যায় (Childhood) ত গুৰুত্বপূৰ্ণ মন্তব্য আগবঢ়াইছে— 'One is not born, but rather becomes a women. No, biological, psychological or economie fate determines the figure that the human female presents in society, it is civilization as a whole that produces this creature, intermediate between male and ench, which is describecl as female'[৪] (১৯৫৩ঃ৩৩০)

সংক্ষেপে অৰ্থাৎ পুৰুষতন্ত্ৰত নাৰী জন্ম হোৱাৰ পৰিৱৰ্তে সভ্যতাই সাৰ্বিকভাৱে এজন মানুহক নাৰী হিচাপে উৎপাদন, নিৰ্মাণ কৰে। বিভোৱাৰ ওপৰোক্ত বক্তব্যই পৰৱৰ্তী সময়ত লিংগ অধ্যয়নৰ মাইলৰ খুঁটি হিচাপে পৰিগনিত হৈছিল। বিভোৱাই কথাখিনি নাৰী লিংগ নিৰ্মাণ সম্পৰ্কত কৈছিল যদিও পুৰুষ লিংগ নিৰ্মাণ সম্পৰ্কতো সমানে প্ৰযোজ্য। কাৰণ পুৰুষতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত এটা শিশুৰ জন্মৰ পৰৱৰ্তী সময়ৰ পৰাই শিশুৰ জৈৱবৈজ্ঞানিক লিংগৰ আধাৰত পুৰুষসুলভ/ নাৰীসুলভ গুণসমূহ আৰোপ কৰি পৃথক ব্যক্তিত্ব গঠনত সমাজ অগ্ৰসৰ হয়। এই পুৰুষসুলভ/ নাৰীসুলভ গুণসমূহ আহৰণৰ ক্ষেত্ৰত বয়স বঢ়াৰ লগে লগে কেতিয়াবা এজন ব্যক্তিয়ে ভাবুকিৰ সন্মুখীনো হ'ব লগা হয়। কাৰণ এজন পুংলিগৰ ব্যক্তিয়ে যদি নাৰীসুলভ আচৰণ কৰে অথবা এজন স্ত্ৰীলিংগৰ

ব্যক্তিয়ে যদি পুৰুষসুলভ আচৰণ কৰে তেন্তে সমাজে সদায় ভয়, ভাবুকিৰে এই আচৰণ সমূহ দমন কৰাৰ বাবে চেষ্টা চলায়। এই ক্ষেত্রত Berkowitz এ লিংগ সম্পর্কত গুৰুত্বপূর্ণ মন্তব্য আগবঢ়াইছে —

"Demonstrate the social constructiveness of gender, maintaing that gender should be conceptualized and portryed as a process, system of stratification and social structure"[৫] ঠিক তেনেদৰে West আৰু Zimmerman য়েও কৈছে — ' ender is not something we are born with and not something 'we have' and something we do'.[৬] ৱিজৱে আৰু স্মিথ লভিনে লিংগৰ ধাৰণাক সামাজিক পদ্ধতি হিচাপে অভিহিত কৰিছে। তেওঁলোকৰ মতে, এই সমাজ পদ্ধতিয়ে লিংগ ৱৈষম্যৰ সৃষ্টি কৰে আৰু এই ৱৈষম্যৰ আধাৰত অসমতাৰ সম্পর্কৰ বীজ ৰোপন হয়। আমেৰিকীয় নৃতত্ত্ববিদ গেয়ল ৰুবিনে লিংগক লেভিষ্ট্রছৰ 'exchange of women' আৰু মার্ক্স-এংগেলছৰ 'সমাজ তত্ত্ব'ৰ ধাৰণাৰ সৈতে যুক্ত কৰিছে —

'A sex/ gender system is the set of arrangement by which a society transforms biological sexuality into products of human activity, and in which these transformed sexual needs are satisfied.' [৭] (Rubin -75) . ওপৰোক্ত মন্তব্য সমূহৰ পৰা এটা কথা স্পষ্ট যে পুৰুষ- নাৰীৰ মাজত ৱৈষম্য সৃষ্টি কৰা লিংগ বিভাজন দৰাচলতে জন্মগত বা স্বাভাৱিক নহয়। পিতৃতন্ত্রৰ আধ্যপত্য আৰু স্বার্থ সুৰক্ষাৰ বাবে গঠন কৰা ই এক সামাজিক তথা সংস্কৃতিক নির্মান।

প্রস্তাৱিত বিষয়ৰ পর্যালোচনা ঃ

আধিপত্যবাদী পিতৃতন্ত্রৰ এটা কুটিল ৰাজনীতি হৈছে নাৰীক শ্রেণীভুক্ত কৰি মূল্যায়ন কৰা। এনে ষড়যন্ত্রৰ পৰিণতিতে সতী/অসতী, শুচিতা/ অশুচিতা আদিৰ দৰে যুৰীয়া ৱৈপৰীত্য বোৰৰ সৃষ্টি হৈছে। যিহেতু এনে যুৰীয়া ৱৈপৰীত্যবোৰৰ সৈতে জড়িত দ্বিতীয়টো ধাৰণাই লিংগ প্রমূল্যকৰণত সদায় নিম্ন মানদণ্ডৰ হিচাপে চিহ্নিত হয় সেয়ে পিতৃতান্ত্রিক সমাজ ব্যৱস্থাত নাৰীক সদায় সতী, শুচিতা অথবা ভাল নাৰীলৈ ৰূপান্তৰ কৰাৰ বাবে ধাৰাবাহিকভাৱে সামাজিকীকৰণ প্রক্রিয়া চলি থাকে, এই প্রক্রিয়া নাৰীৰ জন্মৰ পৰা মৃত্যুৰ আগমুহূর্তলৈকে অব্যাহত থাকে, সতীদাহ প্রথাৰ পৰৱর্তী সময়তো নাৰী যাতে অসতী বা অশুচিতালৈ ৰূপান্তৰ হব নোৱাৰে সেই সম্পর্কে পিতৃতন্ত্র যঠেষ্ট সচেতন আছিল। স্বামীৰ মৃত্যুৰ পিছত দ্বিতীয় বিবাহ নিষিদ্ধ কৰা, শুভ্র সাজ- সজ্জা, সিদ্ধ খাদ্য, সমগ্র জীৱন ইশ্বৰৰ চৰণত অর্পন আদি বিধবা নাৰীৰ বাবে আছিল পিতৃতন্ত্রৰ বিশেষ বিধান। যি আজিও আমাৰ সমাজত বর্তি আছে। এনে এখন মূল্যবোধ সম্পন্ন সমাজৰে প্রতিনিধি উপন্যাসখনৰ ৰায়দম্পতী পৰিয়াল। সেয়ে অকালতে বিধৱা হোৱা তেওঁলোকৰ একমাত্র কন্যা সৌদামিনীৰ মানসিক পৰিৱর্তন বিচাৰি তে ওঁলোক ব্রজলৈ আহিছে। কিন্তু উপন্যাসখনৰ আৰম্ভণিতে সমাজ সৃষ্ট সতী বা ভাল নাৰীৰ ধাৰণাই জটিলতাৰ সৃষ্টি কৰা দেখা যায়, কোৰণ — '... এই কোমল বয়সীয়া ছোৱালীটিয়ে বিধৱা হোৱাৰ পিছত এটি খ্রীষ্টান যুৱকৰ সৈতে মিলা-প্রীতিৰ আয়োজন আৰম্ভ কৰিলে, গোড়া মতাৱলম্বী আৰু ধর্মভীৰু ৰায়চৌধুৰী পৰিয়ালত এয়া এক অবিশ্বাস্য কাহিনী।'[৮] (২০১১ঃ৯)

সৌদামিনীৰ মাতৃ পিতৃতন্ত্রৰ বহতীয়া। পিতৃতান্ত্রিক সমাজ ব্যৱস্থাৰ ৰীতি-নীতি আৰু সংস্কাৰক তেওঁ সকলো নাৰীৰ ধর্ম হিচাপে গ্রহন কৰিছে। সেয়ে জীয়েকৰ ৱৈধব্য জীৱনক তেওঁ দুর্ভাগ্য হিচাপে মানি লৈছে। পিতৃতন্ত্রৰ বিৰুদ্ধে গৈ জীয়েকৰ দ্বিতীয় প্রেম বা বিবাহত সন্মতি দিয়াটো তেওঁৰ বাবে সম্ভৱ নহয়। পিতৃতন্ত্রৰ অনুশাসন ভংগ কৰি বিধৱা জীয়েকে এজন খ্রীষ্টান যুৱকৰ সৈতে গঢ়ি তোলা প্রেমৰ সম্পর্কই তেওঁক বাৰে বাৰে চিন্তিত কৰি তুলিছে। সেয়ে হৃদয়ৰ সমস্ত শক্তিৰে দেওঘৰী বাবাক মিনতি কৰিছে — 'প্রভু মোৰ বাবে মই একো বিচৰা নাই, এই ছোৱালীজনীৰ দায়িত্ব লওক এটা জীৱন মোৰ লগত সাঙোৰ খাই পৰিল আৰু মই যদি ভালদৰে পথ দেখুৱাব নোৱাৰো মোৰ ভয় হৈছে প্রভু। মই পেপুৱা লাগি আহিছোঁ'।[৯] (২০১১ঃ২৭) ইফালে সৌদামিনীয়ে বিধৱা নাৰীৰ ওপৰত সমাজে আৰোপ কৰা বিধান সমূহৰ বিপৰীতে স্বামীৰ মৃত্যুৰ পিছতো অনুভৱ কৰে — 'মই সেই মাটিৰ তিৰোতা যাৰ দেহ মন এতিয়াও ধূলি মাকতিৰে ধুসৰিত হৈ আছে।'[১০] (২০১১ঃ৭৬) ইয়াৰ পৰা এটা কথা স্পষ্ট যে পিতৃতন্ত্রই লিংগ আৰু ধর্ম শাস্ত্রৰ ব্যাখ্যাৰে নাৰীৰ যৌন স্বাধীনতাক নিয়ন্ত্রন কৰিব পাৰে কিন্তু জৈৱিক চেতনাক শৰীৰৰ পৰা বিচ্ছিন্ন কৰিব নোৱাৰে। সৌদামিনীয়ে অষ্টধাতুৰ শিল্পী ৰাকেশৰ আগত অকপটে স্বীকাৰ কৰিছে 'আপুনি শিল্পী, আপোনাৰ অনুভূটি আছে মোৰ নিজৰ ওপৰতেই গৱেষণা কৰি চাইছোঁ মোৰ জৈৱিক স্পৃহাৰ সেই তৰংগৰাশিৰ কোনো পৰিৱর্তন হোৱা নাই।'[১১] (২০১১ঃ৭৭) কিন্তু পিতৃতান্ত্রিক সমাজব্যৱস্থাৰ মতে সৌদামিনীয়ে আৱেগ

অনুভৱৰ কোষ বিলাক যেনেকৈ নহওঁক দমন কৰিবই লাগিব, হৃদয়ৰ নিভৃত কোণৰ গোপন দুৱাৰ চিৰদিনৰ বাবে বন্ধ কৰিবই লাগিব, কাৰণ এইয়া পিতৃতন্ত্ৰৰ দাবী আৰু সেই সমাজৰে অনুগামী সৌদামিনীৰ পিতৃ-মাতৃৰো দাবী।

সতী বা ভাল নাৰী সদায় পিতৃতন্ত্ৰৰ অনুশাসনৰ বাধ্য। পিতৃতন্ত্ৰই নিৰ্ধাৰণ কৰা নিৰ্দিষ্ট গণ্ডীৰ ভিতৰত লাভ কৰা সীমিত স্বাধীনতাক লৈয়ে 'ভাল' নাৰী সুখী হোৱা উচিত। এই নিৰ্দিষ্ট গণ্ডীৰ ভিতৰত পিতৃতন্ত্ৰই 'ভাল' নাৰীক যিদৰে নিৰ্মান কৰে তেওঁলোকৰ চিন্তা চেতনা তেনেদৰেই গঢ়ি উঠে। অষ্টধাতুৰ শিল্পী ৰাকেশৰ কাম কৰা বিধৱা গৰাকীয়ো পৰম্পৰাগত নাৰী সুলভ চিন্তাৰে পৰিচালিত। ভাংগী বিধৱা গৰাকীৰ সৈতে হোৱা কথোপকোথনত প্ৰকাশ পাইছে তেওঁৰ পিতৃতন্ত্ৰৰ কোঠোৰ ৰীতি-নীতিৰ প্ৰতি থকা তেওঁৰ সচেতনতা-'এটা সময়ত তাই শিল্পী ৰাকেশৰ কাম কৰি দিয়া ৰাধেশ্যামীক এটোপা পানী খজিলে। ৰাধেশ্যামী জাঙুৰ খাই উঠিল - তই বেশ্যাৰ দৰে কাম কৰিছ। বুকুৰ কাচলি ঠিক কৰিল। মহামতি আকবৰৰ দিনত এনে কাম কৰা তিৰোতাক ক্ষুধাতুৰ সৈনিকৰ লগত মেলি দিছিল।'[১২] (২০১১ঃ৭৯) পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত লিংগ ভূমিকা সমূহৰ সৈতে এক ধৰণৰ সকিয়নিও জড়িত হৈ থাকে। ৰাকেশৰ কাম কৰা বিধবা গৰাকীৰ ওপৰোক্ত কথোপকোথনত এটা কথাই স্পষ্ট হৈ উঠিছে যে সমাজ নিৰ্দেশিত আচৰণ উলংঘা কৰিলে পিতৃতন্ত্ৰই প্ৰয়োজন হলে মহামতী আকবৰতকৈয়ো যে ভয়াবহ হৈ উঠিব পাৰে তাৰে ইংগিত পোৱা গ'ল।

পিতৃতান্ত্ৰিক সমাজ ব্যৱস্থাত লিংগ পৰিচয় সমূহ গঠনৰ ক্ষেত্ৰত কিছুমান বিশেষ কৌশল অৱলম্বন কৰা হয়। সাধৰণতে নাৰী লিংগ নিৰ্মান কৰোঁতে নাৰীক দেৱী তুল্য জ্ঞান কৰা সমাজত উচ্চ স্থান দিয়া আদি ভাষ্য সমূহক বিশেষ গুৰুত্ব দিয়া হয়। কিন্তু এনে ভাষ্য সমূহৰ বাস্তৱ প্ৰভাৱ নাৰীৰ সামাজিক জীৱনত কেতিয়াও নপৰে। সেয়ে দার্শনিক জন ষ্টুৱার্ট মিলে পিতৃতন্ত্ৰৰ এনে আত্মৰক্ষামূলক নাৰী বন্দনাৰ অন্তঃ সাৰশূণ্যতাক 'Empty Compliment' বুলি অভিহিত কৰিছিল। মিলৰ 'Empty Compliment' ৰ বাস্তৱ ছবি মামণি ৰয়ছম গোস্বামীৰ নীলকণ্ঠী ব্ৰজ উপন্যাসখনত স্পষ্ট ৰূপত প্ৰতিফলিত হৈছে। উপন্যাসখনৰ নায়িকা সৌদামিনী, শশী প্ৰভাকে আৰম্ভ কৰি হেজাৰ বিধৱাই মুৰুলীধৰৰ চৰণত আত্মাক বিলীন কৰিবলৈ আহি অনুভৱ কৰিছে হিন্দুৰ পৱিত্ৰ ধর্মস্থান ব্ৰজভূমিত তেওঁলোকৰ মান, অভিমান আৰু অস্তিত্বৰ কোনো মূল্য নাই। আলমগড়ী আৰু শশী প্ৰভাৱ জীৱনত ব্যৱধান আহি পৰাত আলমগড়ীৰ বন্ধু বুলি পৰিচয় দিয়া এজন নষ্ট চৰিত্ৰৰ পুৰুষে শশীপ্ৰভাৰ দুৱাৰত টুকুৰিয়াই কৈছে "শুণা, মই আলমগড়ীৰ অনুমতি লৈ আহিছোঁ। তেওঁৰ সৈতে তোমাৰ বিচ্ছেদৰ কথা তোমাৰ ওপৰত নির্ভৰ কৰিছে। শুণা ময়ো এটা প্ৰস্তাৱ দিব আহিছোঁ মানে মোৰ মন্দিৰ আছে আৰু মোক সহায় কৰা তিৰোতা এজনী লাগে। তুমি আলমগড়ীক যেনেদৰে সহায় কৰিছিলা মোকো তেনেদৰে কৰিব লাগিব।'[১৩] (২০১১ঃ৬৫)

ওপৰোক্ত কথোপকথনত আলমগড়ীৰ বন্ধুৰ আধ্যপত্যবাদী পুৰুষসুলভ মনোভাৱ ফুটি উঠিছে। এফালে পিতৃতন্ত্ৰই বিধৱা নাৰীৰ দ্বিতীয় বিবাহ নিষিদ্ধ কৰিছে আনফালে আকৌ তেওঁলোকক যৌন শোষণৰ আহিলা হিচাপে ব্যৱহাৰ কৰিছে।

লিংগ ভূমিকা এটা প্ৰজন্মৰ পৰা আন এটা প্ৰজন্মলৈ গতি কৰি ই বদ্ধমূল ধাৰণাত পৰিণত হয়। ফলস্বৰূপে লিংগ ভূমিকা সমূহ জন্মগত তথা স্বাভাৱিক প্ৰকৃতিৰ হৈ ইয়াৰ উপস্থিত ক্ৰমাৎ অদৃশ্য হৈ পৰে। সেয়ে কণ্ঠৰুদ্ধ হোৱালৈ টেটু ফালি ৰাধা-কৃষ্ণৰ প্ৰেম অনুৰাগৰ গীত গোৱা, ভিক্ষাৰীৰ লগত একেলগে শাৰী পাতি সামান্য অন্নৰ বাবে অপেক্ষা কৰা, ঔৰ্ধদৈহিকৰ বাবে ককাঁলৰ খোঁচনিত টকা জমা কৰা, ধৱল কুষ্ঠ ৰোগত আক্ৰান্ত ৰাধেশ্যামী সকলে তেওঁলোক কৰা শোষণ, অপমান আৰু বঞ্চনাক বিনা প্ৰতিবাদেৰে গ্ৰহন কৰিছে। এই ক্ষেত্ৰত লার্ণাৰৰ এযাৰ কথা বিশেষ গুৰুত্বপূর্ণ — " Women have for millenia participated in the process of their own buboridnation because they have been psychologically shaped so as to internalize the idea of their own enferirity.'[১৪](Lerner : 110)

কিন্তু উপন্যাসখনৰ নায়িকা এই ক্ষেত্ৰত ব্যতিক্ৰম পিতৃতন্ত্ৰই ৰীতি-নীতি আৰু সংস্কাৰৰ নামত জাঁপি দিয়া আদর্শ গ্ৰহনৰ ক্ষেত্ৰত তেওঁ অপৰাগ। বিধৱা নাৰীৰ বাবে পিতৃতন্ত্ৰই নির্দিষ্ট কৰি দিয়া অনুশাসনত অতিষ্ঠ হৈ সৌদামিনীয়ে পিতৃ - মাতৃক কৈছে — " মোৰ গোটেই জীৱনটো মই এনেদৰে আনৰ দয়াপৰাবশ হৈ কটাব নোৱাৰোঁ মই মহিয়সী নহওঁ যে তোমালোকৰ দৰে জনকল্যানমূলক কাম কৰি মই মোৰ গোটেই জীৱন অতিবাহিত কৰিব পাৰিম। মই স্বাধীনে মই কাকো ভয় নকৰোঁ। ...তোমালোকে যদি মই সলনি হোৱা বুলি ভাবিছা তেতিয়া হলে...'[১৫] (২০১১ঃ৫৪)। উপন্যাসখনৰ শেষত

দেখা যায় নায়িকাই আত্মহত্যা কৰিছে। নায়িকাৰ এই মৃত্যু দৰাচলতে পিতৃতান্ত্রিক সমাজ ব্যৱস্থাৰ ৰক্ষণশীলতাৰ বিৰুদ্ধে প্রতিবাদ হিচাপে চিহ্নিত হৈছে।

সামৰণি ঃ

নীলকণ্ঠী ব্রজ অসমীয়াৰ সাহিত্যৰ এখন অনুপম উপন্যাস। শুচিতা আৰু শুভ্রতাৰ ব্যাখ্যাৰে বিধৱাৰ ৰঙীন স্বপ্ন মচি পেলোৱাৰ পিতৃতন্ত্রৰ যি ষড়যন্ত্র আৰু তাৰ বলি হোৱা বিধৱা সকলৰ দুখ- দুর্গতিৰ যি চিত্র মামণি ৰয়ছম গোস্বামীয়ে নীলকণ্ঠী ব্রজ উপন্যাসখনত অংকন কৰিছে সেয়া সঁচাই অতুলনীয়। ❑

প্রসংগ টোকা ঃ

১. বশিষ্ঠ, প্রাঞ্জল শর্মা, শাৰদীয় জনসাধৰণ, ২০০৯ , পৃষ্ঠা - ১৪১
২. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, ঈশ্বৰী জখ্‌মী যাত্রী আৰু অন্যান্য, ১৯১১, পৃষ্ঠা - ২১২
৩. সম্পা, ঠাকুৰ, ড, নগেন, এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস ২০০০, পৃষ্ঠা - ৬৬৩
৪. Beauvoir, Simone De, ' The Second Sex' page - 330
৫. Berkowitz, D. Monohar , N, & Tinkler (2010) Walk Like a Man talk Like a woman Teaching The social constreection of Gender, Teaching sociology, 38 (2), 132 - 143
৬. west Candace ; Zimmerman, Don H (June 1987) , " During Gender " Gender & Society. 123- 15।
৭. Rubin, Gayle, 'The Traffic in Women Notes on the "Political Economy" of Sex, Page-75
৮. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৯
৯. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-২৭
১০. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৭৬
১১. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৭৭
১২. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৭৯
১৩. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৬৫
১৪. Gerda, Lerner, The Creation of Patriarechy - 1986
১৫. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' পৃষ্ঠা-৫৪

গ্রন্থপঞ্জী

মূখ্য উৎস ঃ

১. গোস্বামী, মামণি ৰয়ছম, 'নীলকণ্ঠী ব্রজ' প্রথম সংস্কৰণ, চন্দ্র প্রকাশ

গৌণ উৎস ঃ (অসমীয়া)

১. ওজা, ডাঃ অঞ্জন কুমাৰ (সম্পা), 'সাহিত্য সমালোচনা তত্ত্ব' ২০০১, নর্থ লখিমপুৰ কলেজ প্রকাশন সমিতি
২. ঠাকুৰ, ডঃ নগেন (সম্পা),'এশ বছৰৰ অসমীয়া উপন্যাস' জ্যোতি প্রকাশ, প্রথম প্রকাশ, ২০০০, নৱেম্বৰ
৩. পাদুন, নাহেন্দ্র, 'সাহিত্য তত্ত্ব আৰু সালোচনা তত্ত্ব' বাণী মন্দিৰ, প্রথম প্রকাশ, ১৯৩১ শক
৪. মহন্ত, অর্পণা, 'নাৰীবাদ' ডিব্রুগড় বিশ্ববিদ্যালয়, প্রথম প্রকাশ ২০১৮

ইংৰাজী

১. Beauvior, de simon, 'The Second Sex', 1994 as Le Deuxieme Sex, Eng, Trans 1953
২. Gerda, Lerner, The Creation of Patriarechy - 1986
৩. Showalter, Elain, A Literature of their own : British women Novelists form Bronte to Lassing, 1977

- গৱেষক ছাত্র
আধুনিক ভাৰতীয় ভাষা আৰু সাহিত্য অধ্যয়ন বিভাগ
গুৱাহাটী বিশ্ববিদ্যালয়, গুৱাহাটী, অসম-১৪
ফোন-৮১৩৫০৮৬৭৩৭

প্রবন্ধ

নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন

✍ হিৰণ্য কুমাৰ বৰা

সাৰভাগ ঃ

আমাৰ আলোচনা পত্রখনৰ নির্বাচিত বিষয়টি হ'ল- "নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন"। মিতভাষ হ'ল অসমীয়া সাহিত্যত আৰম্ভ হৈ বিশ্বমুখী যাত্রাৰ দিশে আগবঢ়া এক নতুন সাহিত্য শৈলী। সাম্প্রতিক সময়ত ভাৰতৰ বিভিন্ন প্রান্তীয় ভাষাৰ লগতে ইংৰাজী ভাষালৈও অনুদিত হোৱা এই মিতভাষসমূহৰ স্রষ্টা হ'ল নগেন শইকীয়া। ১৯৯৫ চনত প্রকাশিত নগেন শইকীয়াৰ '*মিতভাষ*'শীর্ষক গ্রন্থখনৰ মাধ্যমেৰে আৰম্ভ হোৱা এই নব্য সাহিত্য শৈলীটোৰ আধাৰত অনিতা গগৈকে আদি কৰি অন্যান্য সাহিত্যিকে মিতভাষৰ চর্চা আৰম্ভ কৰিছে, যিটো অসমীয়া সাহিত্যৰ পক্ষে এক ইতিবাচক দিশ।*'মিতভাষ',*(১৯৯৫) *'স্বপ্ন-স্মৃতি-বিষাদ',* (১৯৯৭) আৰু *মিতভাষ সমগ্র'* (২০১৪) শীর্ষক গ্রন্থকেইখনৰ উপৰি বিভিন্ন কাকত-আলোচনীৰ পাতত অ-সংকলিত অৱস্থাত অলেখ মিতভাষ আছে, যি সমূহে পৰম্পৰাগত ভাবে চলি অহা কবিতা, কথা- কবিতা, গল্প, অনুগল্প আদি সাহিত্যৰাজিৰ লক্ষণ গ্রহণ কৰিও নিজকে এক পৃথক সাহিত্যিক শৈলী হিচাপে পৰিচয় দিবলৈ সক্ষম হৈছে। কিন্তু, দুই-এগৰাকী সমালোচকৰ কেইটামান প্রবন্ধৰ বাহিৰে এই মিতভাষসমূহৰ সম্পর্কে বর্তমানলৈকে গৱেষণামূলক অধ্যয়ন হোৱা নাই। তদুপৰি সাহিত্যৰ এই নতুন ধাৰাটোৰ সম্পর্কে যি দুই-এটা সমালোচনামূলক লেখা প্রকাশিত হৈছে, তাতো মিতভাষৰ সৈতে আন সাহিত্যিকৰ সাহিত্যৰাজিৰ তুলনা নাইবা মিতভাষত অন্যান্য সাহিত্যিকৰ সাহিত্যৰ প্রভাৱ সম্পর্কে অধ্যয়নৰ দিশটো বর্তমানলৈকে উপেক্ষিত হৈ ৰৈছে।

আমাৰ এই আলোচনাপত্রখন জৰিয়তে নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত বাংলা সাহিত্যৰ কবি-সাহিত্যিক ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ সম্পর্কে আলোচনা কৰা হ'ব। আলোচনাপত্রখনৰ পদ্ধতি হিচাপে বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতিৰ লগতে তুলনামূলক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে।

গুৰুত্বপূর্ণ অভিধা ঃ

মিতভাষ, কবিতা, ৰহস্যময় ভাবধাৰা, নির্গুণ-নিৰাকাৰ ব্রহ্মৰ সন্ধান , নিসঙ্গতা আৰু একাকীত্ব বোধ, অপেক্ষা আৰু সন্ধান।

০.০১ বিষয়ৰ পৰিচয়ঃ

চুটিগল্প, উপন্যাস, কবিতাকে আদি কৰি অসমীয়া সাহিত্যৰ বিভিন্ন শাখাসমূহৰ ভিতৰত অন্যতম শাখা হ'ল- নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহ। সাম্প্রতিক সময়ত অসমীয়া সাহিত্যৰ লগতে সর্বভাৰতীয় পর্যায়তো আলোচনাৰ বিষয় হিচাপে পৰিগণিত হোৱা এই মিতভাষসমূহ নগেন শইকীয়াৰ একক কৃতি। কাব্যিক অনুভুতিৰে সমৃদ্ধ তথা স্পন্দিত

গদ্যশৈলীত বন্ধা এই মিতভাষসমূহ প্রকৃতার্থত কবিতা, কথা-কবিতা, গল্প নে প্রবন্ধ নাইবা এই সকলো শ্রেণীৰ পৰা পৃথক এক নতুন সাহিত্যিক শাখা; এই সম্পর্কে সমালোচকসকলৰ মাজত যথেষ্ট মতভেদ দেখা যায়। এই ক্ষেত্রত মিতভাষৰ সংজ্ঞা সম্পর্কে ক'বলৈ গৈ সমালোচক কৰবী ডেকা হাজৰিকাই কৈছে - " মিতভাষবোৰ নগেন শইকীয়া দেৱৰ অনন্য সৃষ্টি। এইবোৰ গল্প নহয় কবিতা নহয় প্রবন্ধও নহয়। অসমীয়া সাহিত্যত ই একক। মই জনাত আধুনিক ভাৰতীয় সাহিত্যৰ কোনো শাখাতে এনে ৰচনা নাই, যি সুদীর্ঘকাল জুৰি প্রৱাহিত হৈ এটা ধাৰাৰ সৃষ্টি কৰিছে আৰু মাথোন একেজন লেখকেই সেই ধাৰাটো অব্যাহত ৰাখিছে।"[১] মিত ভাষ সম্পর্কে আলোচনা কৰি আনন্দ বৰমূদৈয়ে উল্লেখ কৰিছে- "এটা কথা ঠিক যে মিতভাষ কোনো ছন্দ সজ্জাত সজ্জিত নহয় আৰু শব্দ সজোৱাৰ ৰূপটো গদ্যৰ নিচিনা। এই গদ্য স্বাভাৱিক স্বতঃস্ফুর্ততাৰে সাংগীতিক লয় যুক্ত স্পন্দিত গদ্য। গদ্য দেখাত গদ্যৰ সাজ পিন্ধিও গদ্য হ'ব নোৱাৰা গদ্য।[২] ঠিক একেদৰেই আন এগৰাকী সমালোচক মনোৰমা বৰগোহাঞিয়ে মিতভাষৰ সংজ্ঞা এনেদৰে নিৰূপন কৰিছে - "জীৱনক বুজাৰ প্রয়াসতে অথবা জীৱনক অনুভৱ কৰাৰ মুহূর্তে দুখানুভুতিৰে সিক্ত শব্দলানিৰ ব্যঞ্জনাময় প্রকাশেই মিতভাষ। ধ্বনিময় গুঞ্জৰণে কাব্যিক অনুৰণন তুলি, ৰূপকধর্মী কথা-গুচ্ছৰ মাজেৰে সংবেদনশীলতাৰে গভীৰ দার্শনীক চিন্তাৰ উন্মেষ ঘটোৱা মিত-ভাষৰ সাহিত্যিক মূল্য যথার্থতেই অতি উচ্চ।"[৩] আন গৱেষক পণ্ডিত সকলৰ দৰেই দীপ্তি ফুকন পাটগিৰিয়ে মিতভাষৰ সংজ্ঞা নিৰূপন কৰিবলৈ গৈ কৈছে - মিতভাষ এক প্রকাৰৰ কবিতাই , য'ত গদ্যৰ স্পন্দনে এক বিশেষ মাত্রা প্রদান কৰিছে।"[৪] ঠিক একেদৰেই হোমেন বৰগোহাঞিৰ মতে - "মিত ভাষ নাতিদীর্ঘ কথা-কবিতা।[৫]

এই সমালোচক সকলৰ উপৰি স্বয়ং মিতভাষৰ স্রষ্টা নগেন শইকীয়াৰ মতে - "মিতভাষ কবিতা নহয়, কথা-কবিতা নহয়, গল্পৰ স্কেচ্ছ নহয় বা দার্শনীক চিন্তাৰ প্রকাশো নহয়,অৱশ্যেই তাৰ মাজত ইবিলাকৰ কিবা বীজ থাকিবও পাৰে।"[৬] অসমীয়া সাহিত্যত বিশেষ স্থান অধিকাৰ কৰি থকা এই সমালোচক সকলৰ মিতভাষ সম্পর্কীয় মতামতৰ পৰা এটা কথা স্পষ্টকৈ ক'ব পাৰি যে, নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহ অসমীয়া।

সাহিত্যৰ এই ক্রমবিকাশশীল ধাৰাটোত পৰম্পৰাগত ভাবে চলি অহা কবিতা, গল্প, প্রবন্ধ আদি শাখাসমূহৰ পৰা পৃথক আৰু অ-গতানুগতিক এটা শাখা। কাব্যিক লয়যুক্ত আৰু স্পন্দিত গদ্যৰ সাঁচত ঢলা মিতভাষসমূহ নগেন শইকীয়াৰ একক সৃষ্টি। লেখকৰ মতে মিতভাষসমূহ কোনো তত্বমূলক কথা বা দার্শনীক চিন্তাৰ প্রকাশ নহয়, বৰঞ্চ এইসমূহ তেওঁৰ আত্ম-বিশ্লেষণৰহে বহিঃপ্রকাশ মাথোন। আমাৰ এই আলোচনা পত্রখন জৰিয়তে নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত বাংলা সাহিত্যৰ কবি ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ সম্পর্কে আলোচনা কৰা হ'ব।

০.০২ বিষয় অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব ঃ

অসমীয়া সাহিত্যৰ ক্ষেত্রখনত নিৰলসভাৱে সাহিত্য চর্চা কৰি থকা নগেন শইকীয়াৰ সাহিত্যৰাজিৰ সংখ্যা বিশাল আৰু তাৰ স্বৰূপ বহুধা বিভক্ত। অসমীয়া সাহিত্যৰ ন-পুৰণি গ্রন্থ সম্পাদনাৰ পৰা আৰম্ভ কৰি গল্প, কবিতা, আদি সৃষ্টিশীল সাহিত্য তথা সাহিত্য সমালোচনা, গৱেষণাধর্মী প্রবন্ধ আদিৰ উপৰি '*বিষয় শঙ্কৰদেৱ*'ৰ দৰে গ্রন্থ ৰচনা কৰি নগেন শইকীয়াই অসমীয়া সাহিত্যৰ ভঁড়াল সমৃদ্ধ কৰিছে। নগেন শইকীয়াৰ এই সৃষ্টিৰাজিৰ ভিতৰত বিভিন্ন সাহিত্য সম্পর্কে ইতিমধ্যে গৱেষণামূলক অধ্যয়ন আৰু বিশ্লেষণ হোৱা দেখা গৈছে। কিন্তু

তেওঁৰ মিতভাষসমূহৰ সম্পৰ্কত গৱেষণামূলক অধ্যয়ন তুলনামূলকভাৱে কম। অসমীয়া সাহিত্যত পৰম্পৰাগত ভাবে চলি অহা কবিতা, কথা-কবিতা, গল্প, অনুগল্প আদি সাহিত্যৰাজিৰ লক্ষণ গ্ৰহণ কৰিও মিতভাষসমূহে এক পৃথক সাহিত্যিক শৈলী হিচাপে পৰিচয় পাবলৈ সক্ষম হৈছে, কিন্তু, দুই-এগৰাকী সমালোচকৰ কেইটামান প্ৰবন্ধৰ বাহিৰে এই মিতভাষসমূহৰ সম্পৰ্কে গৱেষণামূলক অধ্যয়ন বৰ্তমানলৈকে হোৱা নাই। মিতভাষসমূহ গভীৰ ভাবে নিৰীক্ষণ কৰিলে এটা কথা স্পষ্ট হয় যে, যদিও এইসমূহ নগেন শইকীয়াৰ একক আৰু অনন্য কৃতি, তথাপি মিতভাষসমূহৰ মাজত নৱ-বৈষ্ণৱ ধৰ্মৰ প্ৰচাৰক শংকৰদেৱ আৰু মাধৱদেৱৰ জীৱন-দৰ্শন, বৌদ্ধ দৰ্শনৰ প্ৰভাৱ তথা যতীন্দ্ৰ নাথ দুৱৰা আৰু ৰঘুনাথ চৌধাৰীৰ অসমীয়া কথা-কবিতাৰ প্ৰভাৱ আদি পৰিলক্ষিত হয়। একে দৰেই নগেন শইকীয়াৰপূৰ্বসূৰী কবি হিচাপে মিতভাষসমূহৰ মাজত বাংলা সাহিত্যৰ কবি ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱো দেখা পোৱা যায়। অসমীয়া সাহিত্যৰ এক ক্ৰমবিকাশশীল তথা গুৰুত্বপূৰ্ণ শাখা হিচাপে মিতভাষসমূহৰ গৱেষণামূলক অধ্যয়নৰ ক্ষেত্ৰত মিতভাষৰ মাজত কবিগুৰু ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে বিশ্লেষণ নিতান্তই আৱশ্যকীয় বিষয়। সেই দৃষ্টিকোণৰ পৰা **"নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন"** শীৰ্ষক বিষয়টোৰ সম্পৰ্কে অধ্যয়নৰ গুৰুত্ব অপৰিসীম।

০.০৩ বিষয় অধ্যয়নৰ উদ্দেশ্য ঃ

সমসাময়িক অসমীয়া সাহিত্য জগতখনত সাহিত্যৰ বিভিন্ন দিশসমূহৰ চৰ্চা কৰি থকা নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহ অসমীয়া সাহিত্যত পৰম্পৰাগত ভাবে চলি অহা কবিতা, কথা-কবিতা, গল্প, অনুগল্প আদি সাহিত্যৰ পৰা পৃথক আৰু এক অ-গতানুগতিক সাহিত্য শৈলী। এই সাহিত্য শৈলীৰ মাধ্যমেৰে লেখকগৰাকীৰ জীৱন সম্পৰ্কীয় একান্তই ব্যক্তিগত চিন্তাধাৰা প্ৰকাশিত হৈছে যদিও এই মিতভাষৰ মাজত সাধাৰণ মানুহৰ জীৱনত পৰিলক্ষিত দুখ, বেদনা, যন্ত্ৰণা, শূন্যতাৰ উপলব্ধি আদি ভাবধাৰাৰো প্ৰকাশ দেখা যায়, যাৰ বাবে মিতভাষসমূহ লেখকৰ ব্যক্তিগত অনুভূতিৰ বৰ্হিঃপ্ৰকাশ হৈয়ো ইয়াৰ ভাবৰাশি গভীৰ ভাবে সাৰ্বজনীন। অসমীয়া সাহিত্যৰ এক নতুন আৰু অগতানুগতিক ধাৰা হিচাপে সাম্প্ৰতিক সময়ত মিতভাষ সম্পৰ্কীয় আলোচনাৰ যথেষ্ট প্ৰাসংগিকতা আছে। মিতভাষ সম্পৰ্কে দুই-এগৰাকী সমালোচকে আলোচনা কৰিছে যদিও মিতভাষত অসমীয়া আধুনিকতাবাদী সাহিত্যৰ বিকাশত মুখ্য ভূমিকা পালন কৰা বাংলা কাব্যধাৰাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে বৰ্তমানলৈকে গৱেষণামূলক অধ্যয়ন হোৱা নাই। সেই দৃষ্টিকোণৰ পৰা নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত বাংলা কবি ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কাব্যধাৰাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে আলোচনা কৰাই আমাৰ এই আলোচনা পত্ৰখনৰ মুখ্য উদ্দেশ্য।

০.০৪ অধ্যয়নৰ পৰিসৰ ঃ

"নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আলোচনাপত্ৰখনৰ পৰিসৰে নগেন শইকীয়াৰ *'মিতভাষ সমগ্ৰ'* (২০১৪) গ্ৰন্থখনৰ মাজত সন্নিৱিষ্ট ৩০১টা মিতভাষক আলোচনাৰ পৰিসৰৰ গণ্ডিত সামৰি লৈছে । তদুপৰি মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰ আৰু জীবনানন্দ দাশৰ কাব্যধাৰাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে কৰা আলোচনাৰ সুবিধাৰ্থে ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ *'গীতাঞ্জলি'* শীৰ্ষক গ্ৰন্থ খনক নিৰ্বাচিত বিষয়টিৰ অধ্যয়নৰ পৰিসৰত সামৰা হৈছে।

০.০৫ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি আৰু তথ্য আহৰণৰ উৎস ঃ

"নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আলোচনাপত্ৰখনৰ অধ্যয়নৰ পদ্ধতি হিচাপে মূলতঃ বিশ্লেষণাত্মক পদ্ধতি আৰু প্ৰয়োজন সাপেক্ষে তুলনামূলক পদ্ধতিৰ অৱলম্বন কৰা হৈছে, তদুপৰি আলোচনাপত্ৰখনৰ তথ্য আহৰণৰ মুখ্য উৎস হিচাপে নগেন শইকীয়াৰ 'মিতভাষ সমগ্ৰ' (২০১৪) গ্ৰন্থখন আৰু গৌণ উৎস হিচাপে মিতভাষ আৰু ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ আলোচনা সম্বলিত বিভিন্ন কাকত, আলোচনী তথা নগেন শইকীয়াৰ সাহিত্য আৰু জীৱন সম্পৰ্কীয় বিভিন্ন প্ৰবন্ধৰ সহায় লোৱা হৈছে।

১.০০ মূল বিষয়ৰ আলোচনা ঃ

ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰ মহান ভাৰতীয় সাংস্কৃতিক পৰম্পৰাৰ মাজত জন্ম লাভ কৰা ভাৰতবৰ্ষৰেই নহয়, বিশ্বৰো এজন শ্ৰেষ্ঠ আৰু বিশিষ্ট সাহিত্যিক। ভাৰতবৰ্ষৰ অন্যান্য প্ৰাদেশিক

ভাষাৰ লগতে অসমৰ সাহিত্যৰ ক্ষেত্ৰখনতো ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ স্পষ্ট। বিশেষতঃ ভৌগোলিক দিশৰ লগতে অৰ্থনৈতিক, ৰাজনৈতিক, সামাজিক, সাংস্কৃতিক আদি ক্ষেত্ৰতো অসমৰ সৈতে বংগদেশ ঘনিষ্ঠ হোৱাৰ পৰিপ্ৰেক্ষিতত অন্যান্য ঠাইৰ তুলনাত অসমৰ সাহিত্য জগতখনৰ সৈতে বংগীয় সাহিত্যৰ এক নিকট সম্বন্ধ স্থাপন হোৱাৰ পথ প্ৰশস্ত হৈছিল। তদুপৰি বংগীয় সাহিত্যৰ মধ্যমণি স্বৰূপ ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাত প্ৰকাশিত দৰ্শন আৰু ভাবধাৰাইয়ো বিশ্বসাহিত্যত এক নিৰ্দিষ্ট আসন অধিকাৰ কৰিছিল। গতিকে এনে প্ৰভাৱশালী কবিৰ কাব্যদৰ্শনে তেওঁৰ উত্তৰসূৰী সাহিত্যিকসকলক প্ৰভাৱিত কৰাতো স্বাভাৱিক। নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহৰ বিশ্লেষণ কৰিলে ইয়াৰ মাজত কবি ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ পৰিলক্ষিত হয়। মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰ আৰু জীবনানন্দ দাশৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে উল্লেখ কৰি সমালোচক কৰবী ডেকা হাজৰিকাই তেওঁৰ "মিত-ভাষ ঃ এক মৰুদ্যান" শীৰ্ষক প্ৰবন্ধত কৈছে— "মিতভাষৰ মাজত বিষাদ আৰু হেমন্তৰ কবি জীৱনানন্দও ক'ৰবাত সোমাই আছে। আছে ৰবীন্দ্ৰনাথ।"

১.০০ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ

ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাসমূহৰ মাজত 'তুমি' নামৰ এক চৰিত্ৰৰ উপস্থিতি মন কৰিবলগীয়া। এই 'তুমি' চৰিত্ৰটোৰ কোনো নিৰ্বাচিত অৱয়ব নাই। এই 'তুমি' ৰূপটোৱে পাঠকৰ মনস্তাত্ত্বিক জগতত পাঠকৰ ৰুচিভেদে পৃথক পৃথক ৰূপত ধৰা দিয়াৰ অৱকাশ থাকে। ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ 'তুমি' চৰিত্ৰ যদি কোনো পাঠকৰ মনোজগতত প্ৰিয়তমা নাৰীৰ ৰূপত ধৰা দিয়ে, আন কোনো পাঠকৰ হৃদয়ত আকৌ সি বিশ্বব্ৰহ্মাণ্ডৰ সৃষ্টিৰ অন্তৰালত থকা ৰহস্যময় কোনো সত্ত্বাৰ গৰাকী হিচাপেও ধৰা দিব পাৰে। 'তুমি' ৰূপৰ এই বিচিত্ৰ বৰ্ণালীয়ে এক কথাত নাৰী, পুৰুষ আৰু ঈশ্বৰ, সকলোকে এক কৰি পেলায়। এই 'তুমি' নামৰ অনামী চৰিত্ৰৰ অৱস্থিতি থকা ৰবীন্দ্ৰনাথৰ এটা কবিতা হ'ল —

"তুমি নব নব ৰূপে এসো প্ৰাণে।
এসো গন্ধে বৰনে, এসো গানে।
এসো অঙ্গে পুলকময় পৰশে,
এসো চিত্তে অমৃতময় হৰষে,
এসো মুগ্ধ মুদিত দু নয়ানে।
তুমি নব নব ৰূপে এসো প্ৰাণে।"

(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ১৭)

এই ৰহস্যময় চৰিত্ৰৰ অৱস্থিতি প্ৰকাশিত হোৱা তেওঁৰ আন এটা কবিতা হ'ল —

"তুমি, কেমন কৰে গান কৰ যে, গুণী,
অবাক হয়ে শুনি কেবল শুনি।
সুৰের আলো..
... সুৰের সুৰধুনী।"(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ২৭)

ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাত প্ৰকাশিত এই 'তুমি' নামৰ আকাৰহীন চৰিত্ৰটোৰ সমপৰ্যায়ৰ এটা চৰিত্ৰৰ অৱস্থিতি নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষৰ মাজতো পৰিলক্ষিত হয়, যি মিতভাষসমূহত ৰবীন্দ্ৰনাথৰ প্ৰভাৱৰ দিশটো পোহৰাই তোলে। এইক্ষেত্ৰত নগেন শইকীয়াৰ 'নিয়ৰৰ দৰে নিঃশব্দ' শীৰ্ষক মিতভাষটি উল্লেখযোগ্য —

"নিয়ৰৰ দৰে নিশব্দে তুমি কিয় আহিলা আৰু মোৰ বন্ধ দুৱাৰখন খুলি পেলালে? কিয় আহি অন্ধকাৰ মজিয়াত থৈ গ'লা এটি সৰু ফিৰিঙতি? নাজানা জানো ফিৰিঙতি এটাৰ পৰাই খাণ্ডৰ দাহ হ'ব পাৰে? সেয়ে হ'লে ঘৰটো পুৰিলে। তাৰ ভিতৰৰ সকলো সম্পদ পুৰিলে। এতিয়া ইয়াত পৰি আছে এমুঠি ছাঁই।" (মিতভাষ সমগ্ৰ, পৃ ঃ ১২)

উল্লিখিত মিতভাষটোত উপস্থাপিত এই 'তুমি' চৰিত্ৰটোৰ যি ৰহস্যময় আৱৰণ, এই আৱৰণ ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ সেই ৰহস্যময় সত্ত্বাৰ ওচৰ চপা। এনেধৰণৰ ৰহস্যময়তাৰে ভৰা আন এটি মিতভাষ হ'ল — 'তুমি স্বপ্ন নে গীত'।

"তুমি স্বপ্ন নে গীত, তুমি ফুল নে সুৰভী? তুমি কেনেকৈ আহি অদৃশ্য হৈ যোৱা? ...সকলো আৱৰণৰ আঁৰত বিছাৰি ফুৰিছোঁ তোমাক অবিৰাম। ক'ত আছা- ক'ত আছা তুমি।"

(মিতভাষ সমগ্ৰ, পৃ ঃ ৩০)

ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ দৰেই মিতভাষত প্ৰকাশিত এনে ভাবধাৰা ব্যক্তিভেদে পৃথক ৰূপত প্ৰতিভাত হ'ব পাৰে। এগৰাকী কিশোৰৰ মনস্তত্ত্বত এই 'তুমি' চৰিত্ৰই যি ৰূপত ধৰা দিব, আন এগৰাকী বয়োজ্যেষ্ঠ ব্যক্তিৰ হৃদয়ত হয়তো তাৰ সম্পূৰ্ণ এক বিপৰীত ৰূপত এই চৰিত্ৰই ধৰা দিব পাৰে।

এক কথাত ক'বলৈ গ'লে ই নির্ভৰ কৰিব গ্রহীতাৰ চিন্তা, মেজাজ আৰু গ্রহণ ক্ষমতাৰ ওপৰত।

ৰবীন্দ্রনাথৰ কবিতাসমূহত সততে দেখা পোৱা এক বৈশিষ্ট্য হ'ল— নির্গুণ-নিৰাকাৰ ব্রহ্মৰ সন্ধান আৰু এই পৰম সত্ত্বাৰ মাজত নিজকে বিলীন কৰি দিয়াৰ ভাবনা। এই ভাবনা তেওঁৰ বহুতো কবিতাৰ মাজত ভাস্বৰ হৈ উঠা দেখা যায়। তাৰ উৎকৃষ্ট উদাহৰণ স্বৰূপে ৰবীন্দ্রনাথৰ 'গীতাঞ্জলী' পুথিখনত প্রকাশিত এটি কবিতা উল্লেখযোগ্য —

"আমাৰে না যেন করি প্রচার
আমাৰ আপন কাজে-
তোমারি ইচ্ছা করো হে পূর্ণ
আমার জীবন মাঝে।
যাচি হে তোমার চরম শান্তি
পরানে তোমার পরম কান্তি
আমারে আড়াল করিয়া দাঁড়াও
হৃদয় পদ্মদলে।
সকল অহঙ্কার হে আমার
ডুবাও চোখের জলে।"

(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ১৩)

ৰবীন্দ্রনাথৰ কাব্যত প্রকাশিত এই পৰমসত্ত্বাৰ মাজত নিজৰ অস্তিত্বক বিলীন কৰাৰ ভাবনাৰ অনুৰণন নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষৰ মাজতো প্রতিধ্বনিত হৈছে —

"আঃ তোমাৰ কি ৰূপ-করুণ, মধুৰ, শৃংগাৰ, শান্ত, হাস্যোজ্জ্বল! যি ৰূপতেই তুমি নাহা, তোমাক মই দূৰতে চিনি পাওঁ৷ তুমি লৈ আহাঁ চকুৰ পোহৰ আৰু হৃদয়ৰ দ্যোতনা! সেই বাবেইটো তোমাক পাবলৈ আৰু মোৰ ভিতৰত থাপনা কৰিবলৈ ব্যাকুল হওঁ।

বতাহৰ শব্দত, বিজুলীৰ পোহৰত তুমি — কেৱল তুমি৷ মই তোমাক স্পর্শ কৰিব নোৱাৰোঁ, কিন্তু মোৰ সমগ্র সত্তা তোমাতে বিলীন কৰি দিওঁ।"

নিসঙ্গতা আৰু একাকীত্ব বোধৰ অনুভূতি ৰবীন্দ্রনাথৰ কবিতাৰ অন্যতম বৈশিষ্ট্য। তেওঁৰ কবিতাসমূহৰ গৰিষ্ঠ সংখ্যক কবিতাত এই নিসঙ্গতা আৰু একাকৃত্ববোধৰ ভাবধাৰাৰ প্রতিফলন দেখা যায় —

"মেঘর পরে মেঘ জমেছে,
আঁধার করে আসে
আমায় কেন বসিয়ে রাখ
একা দ্বারের পাশে।...
... তুমি যদি না দেখা দাও
কর আমায় হেলা
কেমন করে কাটে আমার
এমন বাদল বেলা।"

(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ২৩)

ৰবীন্দ্রনাথৰ কাব্য ভাবনাত প্রকাশিত হোৱা এই নিসঙ্গতা আৰু একাকীত্বৰ ধাৰণা মিতভাষৰ মাজতো পৰিলক্ষিত হয়—

"মই ভাবি আছিলোঁ — নাওখনত মোৰ লগ আছিল। সাগৰৰ মাজত আহি দেখিলোঁ— মোৰ লগত কোনো নাছিল— আছিল কেৱল অতীত কুণ্ডলী পকাই নাৱৰ তলত শুই আছিল।

তাৰ বিষৰ বতাহত ভৰি পৰিছে নাওঁ৷ মই তাকেই উশাহত লৈছোঁ আৰু নিশাহত এৰি দিছোঁ।"

(মিতভাষ সমগ্র, পৃ ঃ ২৭)

অপেক্ষা আৰু সন্ধান ৰবীন্দ্রনাথৰ কবিতাত দেখা পোৱা অন্য এক উল্লেখযোগ্য দিশ। এই অপেক্ষা প্রকৃতার্থত কাহানিও শেষ নোহোৱা এক অন্তহীন অপেক্ষাৰ বাট —

"তোরা শুনিস কি শুনিস নি তার পায়ের ধ্বনি,
ওই যে আসে, আসে, আসে।
যুগে যুগে পলে পলে দিন-রজনী
সে যে আসে, আসে, আসে।
গেয়েছি গান যখন যত
আপন মনে খ্যাপার মতো
সকল সুরে বেজেছে তার আগমনী—
সে যে আসে, আসে, আসে।"

(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ৫৫)

আগন্তুক কাৰোবাৰ পদধ্বনি শুনি তেওঁ আহিব বুলি আশাৰে বাট চাই থকাৰ যি চিৰন্তন অপেক্ষা এই অপেক্ষাৰ অনুৰূপ সুৰ নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষৰ মাজতো ফুটি উঠা দেখা যায় —

"মোৰ ভিতৰত মই তেওঁৰ পদশব্দ শুনো। তেওঁ যেন

সকলো বাধা-বিঘিনি অতিক্রম কৰি আহি আছে আৰু মোৰ...। তেওঁ আহিলেই দুয়োকাষৰ ফুলবোৰ ফুলি উঠে আৰু সুগন্ধ বিয়পি যায়। সেয়ে মই তেওঁ অহালৈ বাট চাই থাকোঁ।" (মিতভাষ সমগ্ৰ, পৃ ঃ ১৭)

আগন্তুক কাৰোবাৰ অপেক্ষাত লেখকে পুৱাৰে পৰা দুৱাৰ খুলি বাট চায়। অপেক্ষাৰ উত্তেজনাত তেওঁৰ হৃদয় ঘামত তিতে, বৰষুণত তিতে, কুঁৱলীত তিতে, কান্দোনত তিতে। অথচ সেই অপেক্ষাৰ কাহানিও অন্ত নাই — "... মই পুৱাৰে পৰা দুৱাৰ খুলি বাট চাই আছোঁ। — তেওঁ আহিব(এটা এটাকৈ ঋতুবোৰ পাৰ হৈছে। মোৰ বুকু বৰষুণত তিতিছে, ঘামত তিতিছে, নিয়ৰত তিতিছে, কুঁৱলীত তিতিছে, কুলিৰ কান্দোনত তিতিছে — তেওঁ এতিয়াও আহি পোৱা নাই। মই চকুৰ নিমেষ নেপেলোৱাকৈ বাট চাই আছোঁ। বাট চায়েই আছোঁ।" (মিতভাষ সমগ্ৰ, পৃ ঃ ১৫)

উপনিষদৰ ব্ৰহ্ম-চিন্তাত প্ৰকৃতি, মানৱ আৰু ঈশ্বৰ— এই ত্ৰিধাৰাৰ সমন্বয় ৰবীন্দ্ৰ ৰচনাৱলীত পৰিলক্ষিত হয়।[১৩] ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাসমূহৰ মাজতো সেয়েহে এই উপনিষদৰ প্ৰভাৱ দেখা যায়। উপনিষদীয় তত্ত্বৰ সংসাৰৰ পাৰ্থিৱ সুখ-দুখ মায়া-মোহ ত্যাগ কৰি পৰমাত্মাৰ মাজত নিজকে বিলীন কৰা অৰ্থাৎ আত্মা আৰু পৰমাত্মাৰ মিলনৰ যি ধাৰণা, এই ধাৰণা ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাত পৰিলক্ষিত হয় —

"ধনে জনে আছি জড়ায় হায়
তবু জানো মন তোমারে চায়।
অন্তরে আছ, হে অন্তর্য্যামী
আমা চেয়ে আমায় জানিছ স্বামী...
...নিজ হাতে তুমি তুলিয়া লবে
সব ছেড়ে সব পাব তোমায়
মনে মনে মন তোমারে চায়।"
(গীতাঞ্জলি, পৃ ঃ ৩৩)

পৰমাত্মাৰ সৈতে আত্মাৰ মিলনৰ মাধ্যমেৰে পৰম সুখময় অৱস্থা প্ৰাপ্তিৰ বাবে পাৰ্থিব সুখ-দুখ, সা-সম্পত্তিৰ মোহ ত্যাগ কৰি মুক্তি পথৰ যাত্ৰী হোৱাৰ এই ধাৰণা মিতভাষৰ মাজতো প্ৰৌজ্বল হৈ উঠিছে— "মই পাৰ্থিৱ সকলো সম্পদ এৰি যাবলৈ ওলালোঁ - মোৰ শ্ৰুতিৰ আনন্দ দৃষ্টিৰ আনন্দ শৰীৰৰ আৱৰণ সোলোকাৱাদি সোলোকাই থ'লোঁ।... এতিয়া মোক একোৱে ধৰি ৰাখিব নোৱাৰে। মই কেনেকৈ অদৃশ্য হওঁ?" (মিতভাষ সমগ্ৰ, পৃ ঃ ১৮৬)

২.০০ সামৰণি ঃ

"নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰখনত মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে কৰা আলোচনাৰ পৰা এটা কথা স্পষ্ট হয় যে, ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কালজয়ী প্ৰভাৱশালী কবি ব্যক্তিত্ব, তেওঁৰ ৰচনাৰ ভাব, বিষয়, ৰূপ তেওঁৰ জীৱন কালতেই সমগ্ৰ ভাৰতীয় সাহিত্যৰ অনুপ্ৰেৰণা হৈ উঠিছিল।যিহেতু অসমীয়া সাহিত্যিক হিচাপে মিতভাষৰ স্ৰষ্টা নগেন শইকীয়াও ভাৰতীয় সাহিত্যৰ পৰিমণ্ডল ভিতৰুৱা, গতিকে ৰবি ৰশ্মিৰ আলোকেৰে তেওঁৰ মিতভাষসমূহৰ মাজত জিলিঙনি তোলাতো একো অস্বাভাৱিক নহয়। মিতভাষত প্ৰকাশিত ৰহস্যময় ভাবধাৰা, নিৰ্গুণ-নিৰাকাৰ ব্ৰহ্মৰ সন্ধান , নিসঙ্গতা আৰু একাকীত্ব বোধ,অপেক্ষা আৰু সন্ধান, আদি ভাবধাৰাৰ সৈতে ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাসমূহত প্ৰকাশিত ভাবৰাশিৰ যি গভীৰ আৰু অৰ্থৱহ সামঞ্জস্য, তাৰ প্ৰতি লক্ষ্য ৰাখি এটা সিদ্ধান্তলৈ আহিব পাৰি যে নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষৰ ৰচনাশৈলীত বঙলা সাহিত্য প্ৰখ্যাত কবি ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ স্পষ্ট।

অৱশ্যে আলোচ্য দিশসমূহৰ পৰা যদিও ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কাব্যৰ সৈতে মিতভাষৰ সাদৃশ্য পৰিলক্ষিত হৈছে, কিন্তু ইয়াক ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কাব্যৰ অনুকৰণ বুলি অভিহিত কৰিব নোৱাৰি। তাৰ পৰিৱৰ্তে কবি গৰাকীৰ কবিতাৰ প্ৰেৰণাজনিত প্ৰভাৱহে নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহত পৰিলক্ষিত হয় বুলি কোৱাতো অধিক যুক্তিযুক্ত। মিতভাষসমূহ নগেন শইকীয়াৰ নিজা সৃষ্টি। মিতভাষৰ মাজত পৰিলক্ষিত ভাবৰাশিৰহে কবি গৰাকীৰ কাব্যধাৰাৰ সৈতে সামঞ্জস্য আছে।

২.০১ সিদ্ধান্ত ঃ

"নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ ঃ এক বিশ্লেষণাত্মক অধ্যয়ন" শীৰ্ষক আলোচনা পত্ৰখনত মিতভাষত ৰবীন্দ্ৰনাথৰ কবিতাৰ প্ৰভাৱ সম্পৰ্কে কৰা আলোচনাৰ পৰা তলৰ সিদ্ধান্তসমূহত উপনীত হ'ব পাৰি ঃ

১. মিতভাষসমূহ নগেন শইকীয়াৰ একক কৃতি।

২. নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষত ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রভাৱ পৰিলক্ষিত হয়।

৩. মিতভাষত প্রকাশিত ৰহস্যময় ভাবধাৰা, নির্গুণ-নিৰাকাৰ ব্রহ্মৰ সন্ধান , নিসঙ্গতা আৰু একাকীত্ব বোধ, অপেক্ষা আৰু সন্ধান আদি ভাবধাৰাৰ সৈতে ৰবীন্দ্রনাথৰ কবিতাসমূহত প্রকাশিত ভাবৰাশিৰ গভীৰ সামঞ্জস্য আছে।

৪. অৱশ্যে সামঞ্জস্য থাকিলেও মিতভাষক ৰবীন্দ্রনাথৰ কাব্যৰ অনুকৰণ বুলিব নোৱাৰি।

৫. অনুকৰণ পৰিৱর্তে ৰবীন্দ্রনাথ ঠাকুৰৰ কবিতাৰ প্রেৰণাজনিত প্রভাৱহে নগেন শইকীয়াৰ মিতভাষসমূহত পৰিলক্ষিত হয়। ❑

প্রসংগ টোকা ঃ

১. ফুকন বৰগোহাঁই, নীলাক্ষী (সম্পা.), *এক অবিৰত যাত্রাৰ পথিক*, পৃ-১৮৭

২. উল্লিখিত, পৃ- ১৯৪

৩. উল্লিখিত, পৃ- ২০৪

৪. উল্লিখিত, পৃ- ২০৯

৫. শইকীয়া , নগেন, *মিতভাষ সমগ্র*, পৃ- ৩০২

৬. শইকীয়া , নগেন, *মিতভাষ সমগ্র*, পৃ- ৩০২

সহায়ক গ্রন্থপঞ্জী ঃ

কলিতা, ৰঞ্জন (সম্পা.), গৱেষকৰ হাতপুথি, বান্ধৱ প্রকাশ, ২০১৪, মুদ্রিত। গোস্বামী, মালিনী আৰু অন্যান্য (সম্পা.), আধুনিক অসমীয়া কবিতাৰ তিনিতা স্তৰ, লাবন্য প্রকাশন, গুৱাহাটী, ২০০৯, মুদ্রিত।

ঠাকুৰ, ৰবীন্দ্রনাথ, গীতাঞ্জলী, বীনা লাইব্রেৰী, গুৱাহাটী, ২০১৫, মুদ্রিত।

ঠাকুৰীয়া, ৰামমল, সাহিত্য বিচাৰ, অজন্তা প্রকাশন, কলকাতা, ২০০২, মুদ্রিত।

ফুকন বৰগোহাঁই, নীলাক্ষী (সম্পা.), এক অবিৰত যাত্রাৰ পথিক নগেন শইকীয়া, পূর্বাঞ্চল প্রকাশ, ডিব্রুগড়,২০১৪, মুদ্রিত।

বৰুৱা, তিলক (সম্পা.), কাব্য আৰু কাব্যতত্ব, কৌস্তভ প্রকাশন, ডিব্রুগড়, ২০১২, মুদ্রিত।

বৰুৱা, পৰাণ কুমাৰ (অনু.), গীতাঞ্জলী, ৰণাঙ্গন প্রকাশন, নগাঁও, ২০০৭, মুদ্রিত।

শইকীয়া, নগেন, মিতভাষ, কৌস্তুভ প্রকাশন, ডিব্রুগড়, ২০০৩, মুদ্রিত।

শইকীয়া, নগেন, মিতভাষ সমগ্র, পেৰিপাচ, গুৱাহাটী, ২০১৪, মুদ্রিত।

(গৱেষক ছাত্র, অসমীয়া বিভাগ
অসম বিশ্ববিদ্যালয়, শিলচৰ)
ঠিকনা ঃ গাঁও - পূব ঘঘৰা, (নলবাৰী)
ডাক - ঘঘৰাবস্তি, গহপুৰ, পিন- ৭৮৪১৬৮
ফোন - ৯৭০৬৭৪৪৪৯৬, ৮৬৩৮২১০৩৯৩
Email: hironyaborah300@gmail.com

কবিতা

আজিৰ সময়

✍ দীপামণি মহন্ত

আমাৰ সৰল ভাষাবোৰ
কোনে পঢ়িব
কোনে বুজিব
লিখা ছপা হোৱা কথাবোৰ
এদিন বতাহ-বৰষুণত নিঃশেষ হৈ যাব...
শিলত কাটিবও নোৱাৰি
শান্তিৰ বাণীবোৰ ক্ষয় যাব
কপৌজাক উৰি গ'ল
অচিন দেশলৈ
এতিয়া মাথোন হত্যাৰ বিভীষিকা...
বাতৰি কাকতৰ পৃষ্ঠাত
বহু মৃতকক দেখি শংকিত নহয় জনতা
এয়া নিতৌ ঘটি থকা
সচৰাচৰ ঘটনা বা দুৰ্ঘটনা...
চকু থাকিও অন্ধ হৈ গৈছো
নিৰ্বিবাদে মানি লৈছো
বৰ্বৰতাৰ এই নাটিকা
সেয়া এক
নৃশংস দানৱ বধৰ ভাওনাৰ দৃশ্যপট
আমি মাথোঁ বিকলাংগ ৰূপত
নীৰৱ দৰ্শক...
নিস্তাৰ ক'ত
কেনেকৈ
এই ভাওনা - নাটিকাৰ পৰা...
বসন্ত আহিলেই
শ্মশানত গজি উঠা
সেউজীয়া কুঁহিপাতেই ক'ব
সকলো বতৰা...। ❑

समिति समाचार

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के संविधान के अनुसार प्रति पांच वर्ष के अंतराल पर नए सिरे से समिति के सदस्यों का चुनाव होता है। पूर्वोत्तर के विभिन्न जिलों से चुनकर आए सदस्यों के द्वारा दिनांक 27 फरवरी, 2022 को हुई व्यवस्थापिका सभा के दौरान कार्याध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष और मंत्री सहित पांच कार्यपालिका सभा के सदस्य, दो परीक्षा परिषद के सदस्य, दो साहित्य परिषद के सदस्य और एक वित्त परिषद के सदस्य चुने गए। पदाधिकारियों और सदस्यों की सूची निम्नवत् है –

अध्यक्ष

समिति के संविधान के अनुसार राज्य के मुख्यमंत्री समिति के स्थायी अध्यक्ष होते हैं।

कार्याध्यक्ष	*उपाध्यक्ष*	*कोषाध्यक्ष*	*मंत्री*
श्री भारत भूषण महंत	**डॉ. अंजलि काकति**	**श्री प्रफुल्ल चंद्र बरा**	**डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया**

कार्यपालिका सभा के सदस्य

श्री देहीराम शइकीया, श्री तरुण चंद्र नाथ, उवाज उद्दिन, श्री पुतुल भुंञा, श्री रसिक चंद्र दास

परीक्षा परिषद

श्री दीपक धर, श्री लक्षेश्वर चेकनिधरा

साहित्य परिषद

श्री शंकर प्रसाद साहू, श्री मधु बाउल

वित्त परिषद

श्री भोगेश्वर बरा

नवगठित व्यवस्थापिका सभा के सदस्य गण

1. **श्री जीवेश्वर बरुवा**
गांव : गंधिया
डाक : आघोनीबाड़ी
जिला : डिब्रुगढ़ (असम)
पिन : 786613

2. **श्री पार्थ प्रतिम गोस्वामी**
डिब्रुगढ़ सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
डाक : डिब्रुगढ़
जिला : डिब्रुगढ़ (असम)
पिन : 786001

3. **श्री खगेश्वर सुतीया**
राइदंगीया चकलीया गांव
डाक : फटिकाचोवा
जिला : डिब्रुगढ़ (असम)
पिन : 786570

4. **श्री वर्णाली दत्त**
बेजबरुवा उ.मा. विद्यालय
डाक : शिवसागर
जिला : शिवसागर (असम)
पिन : 785640

5. **श्री जयराम नाथ**
मेलाचकर
डाक : शिवसागर
जिला : शिवसागर (असम)
पिन : 785640

6. **श्री गोपाल स्वरूप भूंञा**
बकपाड़ा
डाक : निताईपुखुरी
जिला : शिवसागर (असम)
पिन : 785671

7. **श्री सुसुन कलिता**
गांव : लखिमी आली
डाक : नाजिरा
जिला : शिवसागर (असम)
पिन : 785685

8. **श्री मानसज्योति बरगोहाईं**
डाक : मेसागढ़ गोहाईंगांव
जिला : शिवसागर (असम)
पिन : 785697

9. **श्री कांतेश्वर बसुमतारी**
गांव : दोलाखरीया
डाक : बेंगेनाबाड़ी
जिला : चराईदेव (असम)
पिन : 785690

10. **श्री पद्मनाथ गगै**
गांव/डाक : भजो
जिला : चराईदेव (असम)
पिन : 785691

11. **श्री पुतुल भूञा**
भूंञाचूक गांव
डाक : बाहना तिनिआली
जिला : जोरहाट (असम)
पिन : 785101

12. **श्री रंतु बरा**
चिनामरा नवोदय हिंदी एम.ई. स्कूल
डाक : चिनामरा
जिला : जोरहाट (असम)
पिन : 785101

13. **श्री निजुमणि बरा बरदलै**
गांव : पदुमनि माजगांव
डाक : केंदुगुड़ी
जिला : जोरहाट (असम)
पिन : 785010

14. **श्री खीतेंद्र नाथ सरकार**
गांव : मिलनपुर
डाक : गड़मूरसत्र (माजुली)
जिला : माजुली (असम)
पिन: 785104

15. **श्री महेंद्र भूञा**
गांव : शालमरा
डाक : शालमरा
जिला : माजुली
पिन : 785710

16. **श्री अंजना गोहाईं**
ज्योतिनगर, तिताबर
डाक : तिताबर
जिला : जोरहाट (असम)
पिन : 785630

17. **श्री सुलक्षणा चांगमाई**
गांव : काउरीचुक
डाक : इकराणी
जिला : जोरहाट (असम)
पिन : 785630

18. **श्री भास्कर चौधुरी**
गोलाघाट सरकारी बेजबरुवा उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
डाक : गोलाघाट
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785621

19. **श्री अंजुमणि कोंवर**
राजापुखुरी श्यामगांव
डाक : राजापुखुरी
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785601

20. **श्री डायेरी उपाध्याय**
गांव : 1 नं. कहरा
डाक : काजिरंगा नेशनल पार्क
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785609

21. **श्री दिलीप उपाध्याय**
गांव : 1 नं. कहरा
डाक : काजिरंगा नेशनल पार्क
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785609

22. **श्री अमरेंद्र भराली**
नाउजान उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
डाक : नाउजान
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785602

23. **श्री भोगेश्वर बरा**
16 नं. चुडाजान मध्य अंग्रेजी विद्यालय
डाक : चुडाजान
जिला : गोलाघाट (असम)
पिन : 785601

24. **उवाज उद्दिन**
गांव : रामपुर सत्र
डाक : सलापथार, बटद्रवा
जिला : नगांव (असम)
पिन : 782122

25. **साइफुल इस्लाम**
गांव : कसलुखोवा
डाक : नगांव
जिला : नगांव (असम)
पिन : 782001

26. **श्री प्रफुल्ल चंद्र बरा**
गांव/डाक : उदमारी
जिला : नगांव (असम)
पिन : 782140

27. **श्री जयनाथ चौहान**
गांव/डाक : जखलाबंधा
जिला : नगांव (असम)
पिन : 782136

28. **श्री रसिक चंद्र दास**
वीर सिलाराय पथ
वार्ड नं.-11
लंका एन एरिया
डाक : लंका, होजाई (असम)
पिन : 782446

29. **मधु बाउल**
मौलाना आब्दुल हान्नान खान
उ.मा. विद्यालय
डाक : तिनिआली बाजार
जिला : होजाई (असम)
पिन : 782446

30. **म. आनोवार हुसैन**
तिनिसुकिया माध्यमिक विद्यालय
डाक : टेंगागुड़ी
जिला : मरिगांव (असम)
पिन : 782127

31. **डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया**
गांव : नेली
डाक : नेली
जिला : मरिगांव (असम)
पिन : 782416

32. **मिसेज जुलेखा बेगम**
गांव : पटुवाकटा
डाक : पटुवाकटा
जिला : मरिगांव (असम)
पिन : 782104

33. **श्री देहीराम शइकीया**
गांव : सामगुड़ि
डाक : देउतोला
जिला : लखीमपुर (असम)
पिन : 787033

34. **श्री लखेश्वर चेकनिधरा**
गांव : चराई दलनी
डाक : माधवपुर
जिला : लखीमपुर (असम)
पिन : 784168

35. **श्री जुतिका गगै**
गांव : राइदंगीया
डाक : घिलामरा
जिला : लखीमपुर
पिन : 787053

36. **श्री मुकुल बरुवा**
गांव : चौखामघाट
डाक : घिलामरा
जिला : लखीमपुर
पिन : 787053

37, **श्री देव कुमार दुवरी**
गांव : गोगामुख
डाक : गोगामुख
जिला : धेमाजी (असम)
पिन : 787034

38. **श्री गंगेश्वर टाइड**
खलिहामारी पमुवा
डाक : माछखोवा
जिला : धेमाजी
पिन : 787058

39. **श्री तरुण चंद्र नाथ**
गांव : पातिदै भेबेला
डाक : मिसामारी
जिला : शोणितपुर (असम)
पिन : 784506

40. **श्री रेणु कन्ध**
गांव : नबिल पथार
डाक : मिसामारी नेपालीबस्ती
जिला : शोणितपुर
पिन : 784506

41. **श्री शंकर प्रसाद साहू**
खराशिमलु
डाक : गेरुवाबाड़ी
जिला : विश्वनाथ (असम)
पिन : 784176

42. **श्री लोकनाथ उपाध्याय**
चारिआली कोछगांव
डाक : चारिआली
जिला : विश्वनाथ (असम)
पिन : 784176

43. **श्री मनेश्वर बरा**
गहपुर बड़िगांव तिनिआली
डाक : गहपुर
जिला : विश्वनाथ (असम)
पिन : 787168

44. **श्री मौचुमी बरुवा**
गहपुर टाउन
डाक : गहपुर
जिला : विश्वनाथ
पिन : 784168

45. **श्री चक्रधर बरा**
बाइनाउजा
डाक : आउलाचौका
जिला : दरंग
पिन : 784529

46. **श्री भारत भूषण महंत**
गांव : लोजोरा
डाक : बड़िगांव 2 नं.
वाया : देवमरनै
जिला : दरंग (असम)
पिन : 784147

47. **म. हानिफ आली**
गांव : हीरापारा
डाक : धूला
जिला : दरंग
पिन : 784146

48. **श्री शरत चंद्र कलिता**
गांव : बाउसी
डाक : तेतेलीया
जिला : कामरूप (असम)
पिन : 781104

49. **श्री सर्वेश्वर महंत**
गांव : नवपुर
डाक : बोको
जिला : कामरूप (असम)
पिन : 781123

50. **श्री महेंद्र कलिता**
गांव/डाक : चांगसारी
जिला : कामरूप (असम)
पिन : 781101

51. **श्री दासो कलिता**
गणेशनगर, कृष्णचूड़ा पथ
हाउस नं.-2, गुवाहाटी-29

52. **श्री कामिनी देवी**
द्वारका नगर, उदयन पथ
हाउस नं.-33
डाक : खानापाड़ा, गुवाहाटी-22

53. **डॉ. अंजलि काकति**
घोरामारा
उत्तर गुवाहाटी, गुवाहाटी
पिन : 781030

54. **सैयद नजिरुल हुसैन**
गांव : केंदुकोना
डाक : पुथिमारी
जिला : कामरूप (असम)
पिन : 781380

55. **श्री द्विजेन दास**
गांव : रंगिया, वार्ड नं. 5
डाक : रंगिया, पिन : 781354
जिला : कामरूप (असम)

56. **श्री रवींद्र पाल**
गांव/डाक : नाहेरबाड़ी
जिला : नलबाड़ी (असम)
पिन : 781349

57. **श्री दीपेंद्र नारायण शर्मा**
गांव/डाक : बरनर्द्दी
जिला : नालबाड़ी (असम)
पिन : 781303

58. **श्री गोविंद चंद्र भागवती**
गांव : बालि
डाक : बालि
जिला : नलबाड़ी (असम)
पिन : 781378

59. **श्री मनोरंजन आचार्य**
आचार्य बिनोवा विद्यापीठ
डाक : तिनिपुखुरी
जिला : तामुलपुर (बी.टी.आर.)
पिन : 781367

60. **श्री दीपकर कुमार दास**
जलजली मध्य ई. विद्यालय
डाक : द्वारकुछि
जिला : तामुलपुर (बी.टी.आर.)
पिन : 781367

61. **श्री चंद्रकांत मजुमदार**
गोरेश्वर उच्चतर माध्यमिक विद्यालय
डाक : गोरेश्वर
जिला : तामुलपुर (बी.टी.आर.)
पिन : 781366

62. **आब्दुछ कुद्दुछ**
गांव : खंगरा
डाक : खंगरा
जिला : बरपेटा (असम)
पिन : 781305

63. **श्री संध्याराणी ओझा**
माजरहाट, वार्ड नं. 7
डाक : बरपेटा
जिला : बरपेटा (असम)
पिन : 781301

64. **श्री नन्देश्वर दास**
पाठशाला (ज्योतिनगर)
पुवेरुन पथ, वार्ड नं. 1
डाक : पाठशाला
जिला : बजाली (असम)
पिन : 781325

65. **श्री मुनीन्द्र दास**
गांव/डाक : भोटान्त मुहितारा
जिला : बजाली (असम)
पिन : 781328

66. **श्री माधुरी राय**
एम.जी. रोड
डाक : बंगाईगांव
जिला : बंगाईगांव (असम)
पिन : 783380

67. **जितुप्रभा दासगुप्ता**
रामकृष्ण मिशन
डाक : न्यू बंगाईगांव
जिला : बंगाईगांव (असम)
पिन : 783380

68. **फजलुल हक आहमेद**
लेंगटिचिंगा उच्चतर
माध्यमिक विद्यालय
डाक : लेंगटिचिंगा
जिला : बंगाईगांव (असम)
पिन : 783384

69. **श्री उज्ज्वल कुमार दास**
गांव : धर्मपुर
डाक : अभयापुरी
जिला : बंगाईगांव (असम)
पिन : 783384

70. **इस्माइल आली**
गांव : भदेयागुड़ी
डाक : के/भोटगांव
जिला : कोकराझाड़
पिन : 783370

71. **श्री उराइना मुसाहारी**
मार्फत : मेघनाथ मुसाहारी
कोकराझाड़, वार्ड नं. 10
डाक : कोकराझाड़
जिला : कोकराझाड़
पिन : 783370

72. **श्री गनेश्वर नार्जारी**
गांव/डाक : ढालिगांव
जिला : चिरांग (बी.टी.आर.)
पिन : 783385

73. **आबु बक्कर सिद्दिक**
जाकिर हुसैन पब्लिक उ.मा. स्कूल
डाक : बिजनी
जिला : चिरांग (बी.टी.आर.)
पिन : 783390

74. **श्री शोभारानी देवी**
ज्योतिनगर
डाक : शिमलागुड़ी
जिला : बाक्सा (बी.टी.आर.)
पिन : 781313

75. **श्री देवाशीष दास**
शिमलागुड़ी
डाक : शिमलागुड़ी
जिला : बाक्सा (बी.टी.आर.)
पिन : 781313

76. **श्री तुलसी प्रसाद शर्मा**
उदालगुड़ी उच्चतर
माध्यमिक विद्यालय
डाक : उदालगुड़ी
जिला : उदालगुड़ी (बी.टी.आर.)
पिन : 784509

77. **श्री अर्जुन बसुमतारी**
हुग्राजुली ईराड़ा बड़ो एम.ई. स्कूल
डाक : नलखामरा
जिला : उदालगुड़ी (बी.टी.आर.)
पिन : 784509

78. **श्री गांधी कुमार नाथ**
गांव : झारगांव
डाक : बरलाखाट
जिला : उदालगुड़ी (बी.टी.आर.)
पिन : 784522

79. **श्री सुनन्द कुमार नाथ**
गांव : दलंगघाट
डाक : दलंगघाट
जिला : उदालगुड़ी (बी.टी.आर.)
पिन : 784522

80. **मोजाम्मेल हक**
गांव : बरबिला 2य खंड
डाक : हाउरारपार
जिला : धुबड़ी (असम)
पिन : 783324

81. **नाउसाद आली**
गांव : पद्मेर आलगा 2य खंड
डाक : पद्मेर आलगा
जिला : धुबड़ी (असम)
पिन : 783339

82. **हारेजउद्दिन आहमेद**
पशुयार खाल
डाक : बरकान्दा (बिलासीपाड़ा)
जिला : धुबड़ी (असम)
पिन : 783348

83. **सुरमान आली**
गांव/डाक : नायेर आलगा
जिला : धुबड़ी (असम)
पिन : 783348

84. **पाशान आली**
गांव : खोदाईदिला
डाक : दक्षिण शालमारा
जिला : दक्षिण शालमारा मानकाचर (असम)
पिन : 783127

85. **नजरूल इस्लाम**
गांव : दक्षिण भुराकाटा
डाक : राधा माधव हाट
जिला : दक्षिण शालमारा मानकाचर (असम)
पिन : 783131

86. **श्री निर्मल शर्मा**
बालिजाना
डाक : आगिया
पिन : 783120
जिला : ग्वालपाड़ा (असम)

87. **श्री संजु यादव**
जे.एन. रोड, वार्ड नं. 4
बरबाजार
डाक : ग्वालपाड़ा
पिन : 783121
जिला : ग्वालपाड़ा

88. **ए. प्रियासखी देवी**
सचिव, बराकवेली राष्ट्रभाषा
प्रचार समिति, लखीपुर
गांव/डाक : लखीपुर
पिन : 788103
जिला : कछार (असम)

89. **विश्वेश्वर शर्मा**
लखीपुर पूर्णग्राम
डाक : लखीपुर
पिन : 788103
जिला : कछार (असम)

90. **तेनजिंग तेरन**
चिफंग चाजिर
डाक : डिफू, पिन : 782462
जिला : पूब कार्बी आंग्लांग (असम)

91. **श्री अरुण तारो**
लरुलांग्सू
डाक : चिफंग चाजिर, डिफू
जिला : पूब कार्बी आंग्लांग (असम)
पिन : 782462

92. **श्री निताई देवनाथ**
बोकाजान नगर, वार्ड नं.-5
डाक : बोकाजान, पिन : 782480
जिला : कार्बी आंग्लांग (असम)

93. **श्री महेंद्र पंडित**
बोकाजान नगर, वार्ड नं.-5
डाक : बोकाजान, पिन : 782480
जिला : कार्बी आंग्लांग (असम)

94. **श्री महेन इंग्ती**
कुलिगांव मडेल एम.ई. स्कूल
डाक : लखीजान (बोकाजान)
जिला : कार्बी आंग्लांग (असम)
पिन : 782480

95. **दीपक धर**
हारलंगजुवे
डाक : हामरेन
जिला : पश्चिम कार्बी आंग्लांग
(असम), पिन : 782486

96. **श्री राम तेरन**
आमबीन
डाक : हामरेन
जिला : पश्चिम कार्बी आंग्लांग
(असम), पिन : 782486

97. **श्री विधान चंद्र शील**
हादिंगगामा हाईस्कूल
डाक : गुनजुंग
पिन : 788819
वाया : डिमा हसाओ (असम)

98. **श्री दयाल चंद्र दास**
हाथीखाली हाईस्कूल
डाक : हाथीखाली,
पिन : 788832
जिला : डिमा हसाओ

99. **श्री गोपाल देवनाथ**
पांगमल हाईस्कूल
डाक : माहुर
पिन : 788830
जिला : डिमा हसाओ (असम)

100. **श्री प्रशांत दत्त**
मार्फत : गोपाल देवनाथ
गांव/डाक : पांगमल
जिला : डिमा हसाओ
पिन : 788830

101. **श्री दीपा भट्टाचार्य**
बार्मा कैंप
डाक : डिमापुर
जिला : डिमापुर, नगालैंड
पिन : 797112

102. **श्री सत्यजीत भट्टाचार्य**
जी मेचिउ हाईस्कूल
बार्मा कैंप, डिमापुर
डाक : डिमापुर, नगालैंड
जिला : डिमापुर, नगालैंड
पिन : 797112

मनोनीत सदस्य

श्री मृणालिनी देवी
उपाध्यक्ष
असम साहित्य सभा

शिक्षा सचिव
माध्यमिक शिक्षा, असम

सचिव
माध्यमिक शिक्षा परिषद, असम
बामुनीमैदाम, गुवाहाटी-21

सचिव
उच्चतर माध्यमिक शिक्षा संसद, असम
बामुनीमैदाम, गुवाहाटी-21

डॉ. रीतामणि बैश्य
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
गोपीनाथ बरदलै नगर,
गुवाहाटी-14

प्रो. दिलीप कुमार मेधि
हिंदी विभाग
गौहाटी विश्वविद्यालय
गोपीनाथ बरदलै नगर, गुवाहाटी-14

डॉ. कुसुम कुंज मालाकार
विभागाध्यक्ष, हिंदी विभाग
कॉटन विश्वविद्यालय
गुवाहाटी-1

डॉ. मणिदीपा बरुवा
अध्यक्ष
हिंदी शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय,
उत्तर गुवाहाटी, गुवाहाटी-30

अध्यक्ष, हिंदी विभाग
असम विश्वविद्यालय, शिलचर
शिलचर (कछार), असम

अध्यक्ष, हिंदी विभाग
तेजपुर केंद्रीय विश्वविद्यालय
नपाम, तेजपुर
शोणितपुर (असम)

डॉ. अमूल्य चंद्र बर्मन
मकान नंबर 4
उपपथ नंबर 3, श्रीनगर
डाक : दिसपुर, पिन : 781005

श्री नवीन शर्मा
अवकाशप्राप्त वित्त अधिकारी
असम सरकार

श्री गुणगोविंद दास
अवकाशप्राप्त निदेशक, वित्त विभाग
असम सरकार तथा सलाहकार (SITA)

श्री प्रवीन चंद्र शर्मा
संयुक्त निदेशक
माध्यमिक शिक्षा, असम तथा
अवकाशप्राप्त सचिव
माध्यमिक शिक्षा परिषद (असम)

आजीवन सदस्य

श्री गोलोक बैश्य
गणेशनगर, बशिष्ठ
मकान नं.-102
गुवाहाटी-29

POSTAL REGISTRATION NO. GH/127/2022-24 ● Date of publication : 31st March, 2022 ● RNI No. ASSBIL/2009/31008

असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति की ओर से मंत्री डॉ. क्षीरदा कुमार शइकीया द्वारा ग्राफिक्स, हिदायतपुर, गुवाहाटी-3 में मुद्रित, प्रकाशित एवं प्रसारित। **E-mail : rastrasewak51@gmail.com**

संपादकीय कार्यालय :
असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, रूपनगर, गुवाहाटी-781032 (असम), फोन : 9101541395/ 9101541380